

कृषि की सफलता पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना में राजकीय सहयोग व  
 ऋण के रूप में :—

नये कुओं के खोदने के लिए

कुओं की मरम्मत के लिए

पम्पिंग सैट के लिए

ट्रेक्टर व मम्पान्थन मरीड के लिए  
 रूट के लिये

नगरपालिका को कम्पोस्ट वितरण  
 के लिये

पंचायतों को मैने व ग्राह बनाने के  
 सम्पन्न में

न के रूप में :—

अन्तर्गत कीट उपचारन के लिए  
 मृदा परामर्श दत्तक

मृदा पर

वापस करने के लिये के लिये  
 व लिये

मृ—मृदा के लिये उपचारन  
 मृदा के लिये

— लागत की आधी रकम जो ४०००  
 अधिक नहीं होगी ।

— लागत की आधी रकम जो १००० से  
 नहीं होगी ।

— मशीन की लागत की आधी रकम

— लागत की आधी रकम

— २०० प्रति एकड़ के हिमाप से

— ट्रक या ट्रेक्टर मय ट्रेली की कोन

— दो हजार रुपये जहां सराई—मशीन  
 प्रपन्न हो और रुपये २५०० रुप  
 व्यवस्था का प्रपन्न नहीं हो ।

— आठ आने से एक रुपया प्रति मजदूर

— कमिशन का एक प्रतिशत

— ३ से ५ मील तक एक मशीन प्रति एकड़

५ से अधिक पर दो मशीन प्रति एकड़

(क) मशीन चाली से लगे हुए मशीन

प्रतिशत प्रतिशत पर एक मशीन प्रति एकड़

मशीन नहीं होगी आदि ।

(ख) मशीन चाली से लगे हुए मशीन

प्रतिशत पर एक मशीन प्रति एकड़

मशीन नहीं होगी आदि ।

(ग) मशीन चाली से लगे हुए मशीन

प्रतिशत पर एक मशीन प्रति एकड़

मशीन नहीं होगी आदि ।

(घ) मशीन चाली से लगे हुए मशीन

प्रतिशत पर एक मशीन प्रति एकड़

मशीन नहीं होगी आदि ।

वाल व रोलर वियरिंग, स्टील वाल्स,

रोलर स्पिंडल इनसटर्स

एक्सल वोक्सेज

★

[ रेल्वे लोकोमोटिव एण्ड वेगन्स ]

के

निर्माता :

नेशनल इंजीनियरिंग इंडस्ट्रीज लिमिटेड

जयपुर (राजस्थान)

की

हार्दिक शुभ-कामनाएं

# राजस्थान में आयुर्वेद निरन्तर प्रगति पथ पर

## प्रथम पंचवर्षीय योजना में :

७० नवीन औषधालय खोले गए ।

## द्वितीय पंचवर्षीय योजना में :

१-३२५ नवीन औषधालय

२-आयुर्वेद विभाग का अप्प्रांग आयुर्वेद के रूप में विस्तार ।

३-जयपुर और उदयपुर में आयुर्वेदिक कालेजों का उच्च-  
स्तरीकरण के फल-स्वरूप २५० छात्र प्रतिवर्ष शिक्षा पा  
रहे हैं ।

४-आयुर्वेद परीक्षा बोर्ड का निर्माण, जिसके आधीन भिषगा-  
नाय, भिषग्वर, धात्री कल्पद और प्रत्याम्भरण पाठानुक्रम  
की परीक्षाएं चालू हैं ।

५-जोधपुर और भरतपुर में शास्त्रा रमायनशाला की स्थापना ।

## तृतीय पंचवर्षीय योजना में :

१-एक करोड़ एक लाख की योजना रखी गई है, जिसमें  
शिक्षा प्रशिक्षण, रोग-निवन्त्रण व कमिश्नरी स्थानों में  
आयुर्वेद केन्द्र स्थापित होंगे ।

२-केन्द्र की शान प्रशिक्षण स्थापना में जयपुर एवं उदयपुर  
कालेजों के अंतर्गत स्नायु, बाल-वृद्धाश्रम, चर्म रोग एवं  
महारोगी रोगों पर अनुसंधान होगा ।



# राजस्थान में आयुर्वेद निरन्तर प्रगति पथ पर

## प्रथम पंचवर्षीय योजना में :

७० नवीन औषधालय खोले गए ।

## द्वितीय पंचवर्षीय योजना में :

- १-३२५ नवीन औषधालय
- २-आयुर्वेद विभाग का अप्प्रांग आयुर्वेद के रूप में विस्तार ।
- ३-जयपुर और उदयपुर में आयुर्वेदिक कालेजों का उन्न-  
न्नीकरण के फल-स्वरूप २५० छात्र प्रतिवर्ष शिक्षा पा  
रहे हैं ।
- ४-आयुर्वेद परीक्षा बोर्ड का निर्माण, जिसके आधीन भिषगा-  
चार्य, भिषग्वर, धात्री कल्पद और प्रत्याम्भरण पाठ्यक्रम  
की परीक्षाएं चालू हैं ।
- ५-जोधपुर और भरतपुर में शास्त्रा रसायनशाला की स्थापनाएं ।

## तृतीय पंचवर्षीय योजना में :

- १-एक जंगल एक लाख की योजना रखी गई है, जिसमें  
निम्न प्रविष्टि, गैंग-निपन्त्रण व कमिशनरी ग्यानों में  
आगम्य केन्द्र स्थापित होंगे ।
- २-केन्द्रों की गत प्रविष्टिगत महापना में जयपुर एवं उदयपुर  
राज्यों के अंतर्गत ग्यानु, चाल-पलायान, चर्म गैंग एवं  
संस्थापना गैंगों पर अनुसंधान होगा ।



माननीय श्री मोहनलाल मुखाडिया  
मुख्य मंत्री, राजस्थान  
१९५७, उत्पादन मण्डल, तृतीय मार्च-वर्ग मंत्रालय

प्रधान मंत्री  
डा० देवराज उराध्याय  
प्रधान मंत्री  
घाणार श्री पुनर्वसन 'उत्तम'

मंत्रालय मंत्रालय

१. श्री राम विराम शाह
२. श्री बाल कुमार 'सुखमार'
३. श्री शिवराज शाह 'शिवराज मेरी'
४. श्री बालीदा शाह मिश्र

मन्त्रालय मन्त्रालय



माननीय श्री मोहनलाल मुखर्जिया  
मुख्य मंत्री, राजस्थान  
पद्मश्री, उत्पादन मण्डली, तृतीय वार्षिक सम्मेलन



## प्रकाशकीय

राजस्थान का नाम घाने के साथ ही घावों से लथपथ और लहसुहान हो जाने के उपरान्त भी, बीरो के मुक्ताते मुखमण्डल एवं भाग की धू-धूरती ज्वालाओं में घिरी, मधुर हास्य से युक्त और-बानाएँ हमारी घाँवों के घावों बिरखने लगती हैं। जिससे यह भ्रम हो जाता है कि यह केवल कृति और साहस का ही चेन्द्र घा, परन्तु हम यह जानते हैं कि इन रैखामों में अमिट रंग भरने वाली बुद्धि और प्रतिभा ही थी, जिन्होंने इनकी अमरता प्रदान की। इसके साथ-साथ हमको यह अर्थ भी बिना हिचक स्वीकार करता ही होगा कि जितनी ख्याति इसने बीरता के क्षेत्र में अजित की प्रतिभा के क्षेत्र में नहीं कर पाया। कारण स्पष्ट है कि यहाँ के राजा, महाराजा तथा सामन्त अपनी प्रशस्ति गायन के हेतु जितने उत्पन्न रहे, उतने साहित्यिक वैभव को प्रवास में लाने के लिए नहीं। अपनी बीरता के बखान के लिए इन्होंने बेतन मोगी अनेक इतिहासकार नियुक्त किए और अनेक कविओं को भी राज्याभय दिया तो वह केवल इस ही लिए कि वे उनके माध्यम में भी अपने महत्त्व की मूर्ति कर सकें।

इसके बाद बूढ़ जैन साधुओं, मत्तों अथवा मोर, कवियों ने द्वारा यहाँ साहित्य की सरिता अन्तर गति में प्रवहमान रही। अब वह समय आ पहुँचा है कि इस सरिता-अजित को हम हमारे मानस-सर में एवजित कर भाव-भूमि का निषत करें। "मूर्जन केला; नाम में इस मेधितार साहित्यिक (स्मारिका) का अज्ञान हम इस धाना और बिस्वाम के साथ कर रहे हैं कि हमने द्वारा राजस्थान में कवी आर्यों

साहित्यिक गतिविधि की किंचित् जानकारी स्पष्ट रूप से आप तक पहुँचा सकें। इस स्मारिका में हिन्दी जगत् के प्रसिद्ध समानोक्त डाक्टर देवराज उपाध्याय ने प्रान्त के विद्वान् लेखकों, कवियों, नाटक-कारों एवं कहानीकारों की कृतियों का सम्पादन किया है। यदि यह प्रकाशन राजस्थान के प्राचीन एवं अर्वाचीन साहित्यिक वैभव की अतन्व पाठक के अचेतन मानस पर कुछ भी स्थान दिना सका तो हम इसे सफल समझेंगे।

वैभे भाज राजस्थान में इस तरह के प्रकाशकों का अभाव है जो बिना हानि-नाम की भावना के साहित्यिक प्रकाशन के कार्य को अपने हाथ में ले सके। राजस्थान को छोड़कर अनेक प्रान्तों में इस तरह के दृष्ट और प्रकाशन मण्डल हैं जो अपने २ प्रान्त के प्राचीन साहित्य को नए ढंग में प्रकाशित कर, उसके गौरव को पुनः संस्थापित कर रहे हैं और उदीयमान लेखकों की रचनाओं के प्रकाशन द्वारा देश और समाज को प्रेरणा दे रहे हैं। हमारे प्रान्त में अन्य प्रान्तों की अपेक्षा किसी भी हावन में साहित्यिक अक्षमता न कभी थी और न अभी है। बल्कि हम यह कहें तो कोई प्रत्युक्ति नहीं होगी कि संस्कृत साहित्य में पूर्व तथा अज्ञ भाषा के साहित्यिक रूप को स्वीकार करने तक राजस्थान ने साहित्यिक क्षेत्र में अक्षम आधिराज्य रखा है और उस जान को हम स्वर्ण युग के नाम में सम्बोधित कर सकते हैं। इस जान में साहित्य की प्रबन्ध (महाराज्य और लख बाध्य) मुलज (रस तथा नीति) एवं गीति आदि सब विधाओं में प्राज्ञ, अक्षरंग और अज्ञ भाषा में सर्वज्ञ की गई हैं। परन्तु अभी तक इस साहित्य के अज्ञान की मन्द्य व्यवस्था नहीं हो पाई है।

साहित्य-संसार में बहुत समय में इस साहित्य के अज्ञान के विषय में विचार कर रखा था। इस स्मारिका के माध्यम में हम उस पर कुछ रोशनी डालने का बहुत प्रयत्न कर रहे हैं और यह हम



## 2 मनुष्य की

उपनिषदों ने हमें अपने जीवन को समृद्ध तथा नार्थक करने का एक साधन बताया था 'आत्मानं-विद्धि'। ग्रीक मनीषियों ने कहा 'Know thyself' माने चन कर तो नीतिकारों ने यहां तक कह दिया।

आयश्चर्यं धनं रक्षेत् दारान् रक्षेत् धनैरपि ।  
आत्मानं मनतं रक्षेत् दारैरपि धनैरपि ॥

धर्मात् आपत्तिं कान के लिये धन की रक्षा करनी चाहिये, धन का नाश कर भी पत्नी की रक्षा करनी चाहिये। पर जब आत्मा की रक्षा का प्रश्न हो तो वहां पत्नी एवं धन के भी अनिधान की परवाह नहीं करनी चाहिये। राजस्थान के शुभ-चित्तकों, नेताओं, विचारकों तथा साहित्यिकों के सामने यह प्रश्न अपनी मारी जटिलताओं के साथ उपस्थित होकर उत्तर माग रहा है कि हम अपने प्राचीन गौरव-माया और परम्परा की रक्षा करने हुए, वर्तमान ज्ञान-विज्ञान की विरणों को आत्मसात् कर भविष्य के निर्माण में तत्परत्व से काम में रहे हैं।

राजस्थान के लिये इस प्रश्न का एक विशेष महत्व है। कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत का इतिहास एक तरह से बिहार का इतिहास है, अंगोश, बद्ध गुप्त, बृहत् तथा वर्द्धमान का इतिहास है। मध्य युगीन भारत का इतिहास मौर्य, प्रताप, दुर्गादास के रक्त में राजस्थान की धरती पर लिखा गया है। पर राजस्थान के भाग्य की विडम्बना ही कहिये कि ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों ने जहाँ अन्य प्रान्तों का समग्र प्रगतिशील तथा उन्नतत्व लक्षों में बनाये रखा, उनके

द्वार नूतन ज्ञान-विज्ञान के समय संचार के लिये अग्रगण्य रहे वहाँ राजस्थान को सबसे घनग रह कर ही अपना जीवन यापन करना पड़ा। उत्तराधिकार के रूप में हमें जो कुछ भी बीरता, भक्ति, प्रेम, सौंदर्य की सम्पत्ति उपलब्ध थी उसे ही चाट-चाट कर हम जीने रहे। इतना ही नहीं। चूंकि बाहरी दुनिया में सम्पर्क छूट जाने के कारण जीवन का प्रवाह एक तरह से प्रवृद्ध या प्रतः बहुत सी विवृतिया भी प्रा गई थी। कहा ही है "बहता पानी निर्मल, बंधा मंदा होय।" हम दुनिया में ही घनग नहीं थे। हम स्वयं आत्म-विभाजित थे। हमारे एक शरीर के अन्दर कितने व्यक्तित्व उभर आये थे और उनमें पारस्परिक एकता ही ही यह कोई आवश्यक नहीं था। प्राज काल के मनोवैज्ञानिक Multipule personality की बातें करते हैं। कहते हैं कि एक मनुष्य में एकाधिक और परस्पर विरोधी व्यक्तित्वों की अवस्थिति हो सकती है जो जीवन को विवृत कर दे और संगठित विकास में बाधक हो। इन मनोवैज्ञानिकों के लिये Multipule personality का उदाहरण राजस्थान में अच्छा नहीं मिल सकता। जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, झुंड़ी एक ही राजस्थान-व्यक्ति के भिन्न-भिन्न व्यक्तित्व नहीं तो और क्या है?

राष्ट्र-पिता गांधीजी तथा भारतीय स्वातन्त्र्य संग्राम के नायक सरदार पटेल की कृपा में जब यह परिस्थिति दूर हो गई है। प्रथम ने सारे भारत को विदेशी शासन से मुक्ति दिलाई। द्वितीय ने राजस्थान के बिजरे शानों को समेट कर राजनैतिक मूक में विरोध कर एक भावा के रूप में उदयित कर दिया। एक बृहत् राजस्थान अपनी बाहरी मर धर के साथ सामने धारा। हम ही क्या मारी दुनिया ही हमें रूप पर मुख है। सब हमको और तथा हमें कुल प्रयोगों की ओर एकजुटी बाध कर देन रहे हैं। हा, कुछ संशय भी है पर के देख लो रहे



सेमिनार

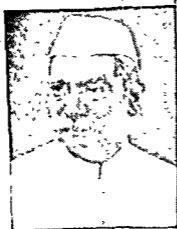
||  
!

‘ एक दृष्टि में ’

!!

“ सत्यं शिवं सुन्दरम् ”

ਸ਼ਾਂਤਿਨਾਮ-ਸਤਨਾਮੁ	i
ਨਮ ਨਰਿਅਰ	
ਸਾਧਨਾਦਿਨ ਸਾਧਿਨਾਦਿਨ ਸਾਧਨਾਦਿਨੀ	vi
ਨਮ ਨਰਿਅਰ	
ਪੰਨਾ-ਸੂਚੀ	ix
ਨਾਮਾਵਲੀ ਦੇ ਨਾਮ	
ਪੰਨਾ-ਸੂਚੀ	xi
ਸੰਖੇਪਤਾ ਦੇ ਨਾਮ	
ਪੰਨਾ-ਸੂਚੀ ਦੇ ਨਾਮ	xiii
ਨਾਮਾਵਲੀ ਦੇ ਨਾਮ	



राष्ट्रपति भवन  
नई दिल्ली

दिसम्बर २६, १९६०  
पृ० ८, १८८२ गाँगे

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि राजस्थान साहित्य अकादमी के तृतीय वार्षिक सेमिनार के अवसर पर अन्य रोचक तथा उपयोगी विषयों के साथ साथ राजस्थान के साहित्य पर भी विचार विनिमय होगा। मैं इस सेमिनार की सफलता चाहता हूँ और राजस्थान की साहित्य अकादमी की अपनी शुभ कामनाएँ भेजता हूँ।

११ जे-३ ५११५





सत्यमेव जयते

प्र संख्या ६।७।६१ हि



PRIME MINISTER'S SECRETARIATE

NEW DELHI

१८ फरवरी, १९६१

२६ भाष, १८८२ शक

प्रिय महोदय,

आपका पत्र दिनांक १२ फरवरी १९६१ प्राप्त हुआ।

राजस्थान साहित्य अकादमी के तृतीय वार्षिक सेमिनार के अवसर पर प्रधान मंत्रीजी अपनी शुभ कामनाएं भेजते हैं।

भवदीय

Sd/- ( प्राणनाथ मारी )

प्रधान मंत्री जी के निजी सचिव

श्री० हरिवंशराय 'बच्चन'  
एम. ए., पी-एच. डी. (बैरब)

विदेश मंत्रालय  
नई दिल्ली

दिनांक २३-२-१९९१

प्रिय महोदय,

पत्र के लिए धन्यवाद। मेमिनार की सफलता के लिए शुभ कामनाएं। भानो तो  
संभव नहीं। स्मरण करने के लिए आभारी। मेमिनार की कार्यवाही प्रकाशित हो तो उसे  
देखना पार्श्व।

आभारवाद।

ह०/- (बच्चन)



प० २०/९१-१० एम०

निशा मंत्री  
भारत  
नई दिल्ली  
३ जनवरी १९९१

प्रिय श्री,

आपका पत्र मिला। मुझे प्रसन्नता है कि राजस्थान साहित्य मेमिनार "सामान्य जन  
और साहित्यकार" जैसा रोचक एवं महत्वपूर्ण विषय लेकर इस वर्ष साहित्य महासम्मेलन में  
हो रहा है। और इस अवसर पर "मूल्य वेग" नाम से मात्र एक गोष्ठी  
लेकर ही प्रवर्तन भी कर रहे हैं। राजस्थान का साहित्य सर्वोपयोगी में परिपूर्ण है और  
आपका, निम्नलिखित आशंकाओं के बिना प्रवर्तन लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

है आपके आयोजन तथा प्रवर्तन की सफलता पावना है।

आभार

ह०/- (प० श्रीमती)



संयोजक  
राजस्थान

Govt of India  
Ministry of Home Affairs  
नई दिल्ली  
दिनांक २६ फरवरी, १९९१  
आभार, १९९१

प्रिय श्री/श्रीमती,

आपका पत्र प्राप्त हुआ। (२०/२/९१) को दिनांक २६ फरवरी १९९१ प्रत्यक्ष हुआ।  
आपका प्रस्ताव पत्र प्राप्त हुआ है। मैं निम्नलिखित की ओर ध्यान देने की बात  
कहा है। मैंने आपकी प्रस्ताव पत्र के आधार पर मेरे आलोचक हुए हैं।  
आपका पत्र प्राप्त हुआ है। मैंने आपकी प्रस्ताव पत्र के आधार पर मेरे आलोचक हुए हैं।  
आपका पत्र प्राप्त हुआ है। मैंने आपकी प्रस्ताव पत्र के आधार पर मेरे आलोचक हुए हैं।

आभार

ह०/- (प० श्रीमती)



महामान्य श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन



माननीय श्री हरिभाउ उपाध्याय  
दिल्ली, राहलवाले मस्जिद

100

# साहित्य सदावर्त : एक परिचय

श्री कन्हैयालाल मिश्र, मंत्री, साहित्य सदावर्त, जयपुर

**मानव समाज के लिए ज्ञान सर्वोपरि है। 'ज्ञान' ने ही मनुष्य का प्रादि काल में नेतृत्व किया है। इसी ज्ञान को विद्वानों ने साहित्य का केन्द्र मानकर, साहित्य को "ज्ञान राशि के संचित कोष की संज्ञा दी है। इसमें स्पष्ट है कि ज्ञान विकासोन्मुखी जीवन का प्रारम्भ से ही पोषक तत्त्व रहा है और रहेगा। इसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य एकाकी और सामूहिक रूपों में प्रयत्न करता है। यही सामूहिक स्वरूप संस्था के जन्म का आधार-भूत कारण बनता है।**

साहित्य सदावर्त की स्थापना का श्रेय श्री कमलाकर 'कमल' को है, जिन्होंने सन् १९३७ में जन्माष्टमी की पावन वेला में दो विद्यार्थियों के निरुत्कृष्ट शिक्षण में श्रमवा श्री गणेश किया था। मात्र के इस भौतिकवादी युग में किसी भी प्रकार के कार्य को बिना धार्मिक साधन छुड़ाए पूर्ण करना असम्भव नहीं, तो दुस्खलतम घबराहट है और इसीलिए बाबा गोविन्ददास और प्राचार्य श्री पुष्पोत्तम 'उत्तम' का सहयोग, सदावर्त की प्रगति और उन्नति में निश्चयवर्ती के महत्व को स्वतः ग्रहण कर लेता है। सन् १९४५ में संस्था के जीवन में, श्रीपुष्पोत्तम 'उत्तम' की विद्यापीठता और उदार मनोवृत्ति ने, नई गति ला दी है।

**दीक्षाधिकार स्वरूप :—**साहित्य सदावर्त जयपुर ही नहीं अपितु राजस्थान का एक आदर्श निरुत्कृष्ट शिक्षण संस्थान है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन (हिन्दी विश्व विद्यालय) प्रयाग और पञ्जाब तथा राजस्थान विश्व विद्यालयों की हिन्दी परीक्षाओं के हेतु शिक्षण

प्रदान करना 'सदावर्त' का कार्य रहा है। संस्था में आने वाला प्रत्येक विद्यार्थी संस्था के सभी पारिवारिक सदस्यों से इस प्रकार चुनता-मिनता है कि जैसे वह प्रारम्भ में ही इस परिवार का ग्रंग रहा हो और यही कारण है कि आज सदावर्त के विद्यार्थियों को राजस्थान भर में पाया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि सदावर्त को कई मोड़ देखने पड़े हैं। बितने ही कष्ट, भीड़े अनुभव सदावर्त के इतिहास में मुरझित हैं, तो भी अपने कार्य को सदावर्त ने कभी रोका नहीं। सदावर्त के जीवन में इन धार्मिक (जो आज भी हैं) कठिनाइयों ने विविधता भरे हीना दी हो किन्तु पूर्णतः जड़ बना देने में यह समझ्याएँ कभी इतकार्य न हुई हैं और हमारा विश्वास है कि न घब हो सकती हैं।

विद्यार्थी वर्ग को दीक्षाधिकार-गुविषाएँ प्रदान करने के दृष्टिकोण में सन् १९४५ में ३ केन्द्र स्थापित किये गए। प्रथम केन्द्र भातानियों का रास्ता (विमानपोत बाजार, ) में, द्वितीय केन्द्र 'पानी के दरौबा' में और तृतीय केन्द्र 'पुरानी बग्गी' में रखा गया। जिनका सञ्चालन कमलाः श्री कमलाकर 'कमल', श्री पुष्पोत्तम 'उत्तम' और श्री कन्हैयालाल मिश्र के द्वारा होता रहा।

शिक्षण के प्रति सदावर्त के सदस्यों की ध्यानाकर्षणों की प्रारम्भ में ही मान्यता रही है कि पुस्तकीय आधार पर विद्यार्थियों को पूर्ण ज्ञान प्रदान नहीं किया जा सकता तदर्थ पुस्तकों के अध्ययन-अध्यापन के साथ ही साथ सदावर्त ने अन्य कई प्रकार की गति विधियों को जन्म दिया, जिनके सञ्चालन हेतु



# साहित्य सदावर्त : एक परिचय

श्री कन्हैयालाल मिश्र, मन्त्री, साहित्य सदावर्त, जयपुर

**मा**नव समाज के लिए ज्ञान सर्वोपरि है। 'ज्ञान' ने ही मनुष्य का प्रादि काल में नेतृत्व किया है। इसी ज्ञान को विद्वानों ने साहित्य का केन्द्र मानकर, साहित्य को "ज्ञान राशि के संचित कोष की संज्ञा दी है। इसमें स्पष्ट है कि ज्ञान विवासोन्मुखी जीवन का प्रारम्भ में ही पोषक तत्व रहा है और रहेगा। इसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य एकाकी और सामूहिक रूपों में प्रयत्न करता है। यही सामूहिक स्वरूप संस्था के जन्म का आधार-भूत कारण बनता है।

साहित्य सदावर्त की स्थापना का श्रेय श्री कमलाकर 'बमल' को है, जिन्होंने सन् १९३७ में जन्माष्टमी की पावन वेला में दो विद्यार्थियों के नियुक्त शिक्षण में इसका श्री गणेश बिद्या था। प्राज के इस भौतिकवादी युग में विभी भी प्रचार के कार्य को बिना प्रायिक साधन छुटाए पूर्ण करना असम्भव नहीं, तो दुस्वरतम अवश्य है और इसीलिए बाबा गोविन्ददास और प्राचार्य श्री पुरषोत्तम 'उत्तम' का सहयोग, सदावर्त की प्रति और उन्नति में निबन्धनता के महत्त्व को स्वतः ग्रहण कर लेता है। सन् १९४५ में संस्था के जीवन में, श्रीपुषोत्तम 'उत्तम' की ब्रियामीवता और उदार मनोवृत्ति ने, नई गति ला दी है।

**दीर्घाधिक स्वरूप :**—साहित्य सदावर्त जयपुर ही नहीं बल्कि राजस्थान का एक आदर्श नियुक्त शिक्षण संस्थान है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन (हिन्दी विरह विद्यालय) प्रयाग और पञ्जाब तथा राजस्थान विरह विद्यालयों की हिन्दी परीक्षाओं के हेतु शिक्षण

प्रदान करना 'सदावर्त' का कार्य रहा है। संस्था में प्राप्ति वाता प्रत्येक विद्यार्थी संस्था के सभी पारिवारिक सदस्यों से इस प्रकार पुनर्ता-मिनता है कि जैसे वह प्रारम्भ में ही इस परिवार का घंग रहा हो और यही कारण है कि प्राज सदावर्त के विद्यार्थियों को राजस्थान भर में पाया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि सदावर्त को बड़ी मोड़ देखने पड़े हैं। कितने ही कठुए, मिठे मनुष्य सदावर्त के इतिहास में गुरुशित हैं, तो भी अपने कार्य को सदावर्त ने कभी रोका नहीं। सदावर्त के जीवन में इन प्रायिक (जो प्राज भी हैं) कठिनाइयों में शिविलता भवे हीना दी हो किन्तु पूर्णतः जड़ बना देने में यह समस्याएँ कभी हतकार्य न हुई हैं और हमारा विश्वास है कि न घब हो गयों हैं।

विद्यार्थी वर्ग को दीर्घाधिक-मुविषाएँ प्रदान करने के दृष्टिकोण में सन् १९४५ में ३ केन्द्र स्थापित किये गए। प्रथम केन्द्र आवागमियों का रास्ता (विगतरोन बाजार, ) में, द्वितीय केन्द्र 'पानो के दरौबा' में और तृतीय केन्द्र 'पुरानी बस्ती' में लगा गया। जितना संभावन क्रमशः श्री कमलाकर 'बमल', श्री पुरषोत्तम 'उत्तम' और श्री कन्हैयालाल मिश्र के द्वारा होता रहा।

शिक्षण के प्रति सदावर्त के सहयोगी अध्यापकों की प्रारम्भ में ही माग्यता रही है कि पुनर्जीव आधार पर विद्यार्थियों को पूर्ण ज्ञान प्रदान नहीं किया जा सकता एतदर्थ पुनर्जीव के साधन-सम्पन्नता के साथ ही साथ सदावर्त ने अन्य बड़ी प्रचार की प्रति विधियों को जन्म दिया, जिनके संचालन हेतु



माननीय श्री निरंजननाथ शर्मा  
उपाध्यक्ष  
(राजस्थान विधान सभा)

सदस्य,  
मायोहन समिति,  
द्वितीय राष्ट्रीय मातृत्व मेमोरियल

राजस्थान विधान सभा

जयपुर

१९६०

१९६०

१९६०

१७. ,, डा० देवराज उपाध्याय
१८. ,, स्व० प्रो० रामकृष्ण शुक्ल 'नित्यमुख'
१९. ,, गुलाबराय एम० ए०
२०. ,, नित्यानन्द 'मृदुल'
२१. ,, देवीशंकर तिवारी
२२. ,, नबी बक्श 'फनक'
२३. ,, डॉ० मोतीलाल
२४. ,, गोपालप्रसाद 'नीरज'
२५. ,, गोपालप्रसाद व्यास
२६. ,, मेघराज 'मृदुल'
२७. श्रीमती सुशीला देवी तय्यर

### साहित्यालोचना ( गोष्ठि ) परिपद्.—

गवेषणात्मक एवं आलोचनात्मक साहित्य को प्रोत्साहन देने के दृष्टिकोण से इस परिपद् का गठन किया गया। सन् १९४५-४६ में इसके प्रारम्भिक काल में निम्नांकित पदाधिकारी रहे हैं —

१. श्री प्रो० रामकृष्ण शुक्ल 'नित्यमुख'—अध्यक्ष
२. ,, डॉ० सरदारमसिंह 'धरुण' —संजी
३. ,, कपूरचन्द 'कुनिश' —संयुक्त मंत्री
४. ,, मदनमोहन दामा —प्रचार मंत्री

इस गोष्ठि के प्रयत्नों के फलस्वरूप साहित्य सृजन का निरन्तर हुआ स्वरूप उपलब्ध होने लगा। यह क्रम कोई ३-४ साल तक चलता रहा। इसी परिपद् के महावधान में सन् १९४६ में एक विशेष समारोह का आयोजन किया गया जिसमें डा० गुलाबराय एम० ए० के द्वारा इतिहास समिष्ट आलोचना स्व० श्री रामकृष्ण शुक्ल 'नित्यमुख' का 'आचार्य' पद में विभूषित किया गया। शत्रु बाद में कुछ विवद परिस्थितियों और श्री 'नित्यमुख' जी की अस्वास्थ्यता ने इस परिपद् को स्थिर कर दिया।

सन् १९४६ में सरदारजी की सहयोगी

सहपा "संगम समिति" एवं सर्वश्री कपूरचन्द 'कुनिश' पुरस्कोत्तम 'उत्तम', रामनिवास दाह, और चन्द्र कुमार 'मुकुमार' के सद्प्रयत्नों से इस कार्य में पुनः जीवन संचार हुआ। जिसके परिणाम स्वरूप आलोचना (गोष्ठि) परिपद् फिर सजीव होकर कार्यरत हुई। संगम समिति ने अपने जन्म में आज तक कई महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। 'संगम' मासिक पत्रिका का प्रकाशन और 'भाव भूमि' द्वारा कवि सम्मेलन में पठित कविताओं का विवेचना के साथ पूर्व प्रकाशन समिति की विशिष्ट परम्परा है लेकिन कुछ साधियों को स्वयं सृजन की आलोचना में भय होने लगा, फलस्वरूप कटुता भी बढ़ी और इसीमें कुछ समझदार साधियों और श्री हिममतनान (मन्त्री) ने इस परिपद् के कार्यकर्ताओं को सीमित कर दिया है।

महिला हितकारिणी परिपद्.—प्रायः के युग में ही नहीं बल्कि भारतवर्ष आदिमान में ही नारी और पुरुष के अधिकार और कर्तव्य क्षेत्र को समान दृष्टि में समीक्षा आया है। इतिहास साक्षी है। फिर भी जीवन-क्रम और ऐतिहासिक घटनाक्रम ने नारीवर्ग को कुछ पिछड़ा दिया है, जिससे समुन्नत बनना पुरुष वर्ग का प्रथम और अनिवार्य कर्तव्य है। इसी दृष्टिकोण में सन् १९४५-४६ में "महिला हितकारिणी परिपद्" का जन्म दिया गया। परिपद् ने नारी वर्ग में आतिशायी परिवर्तन ला दिया, उदाहरण स्वरूप पदाधिकारी का अधिकार दिया जा सकता है। जयपुर शहर के जीवन में यह एक महत्वपूर्ण कार्य हुआ है। नारी के प्रति कुम्भित विचारों और धारणाओं की बहुत आवाजें बर, मद्भाग्य और स्नेह, समानता की भावना प्रसारित करने वाली इस परिपद् का, प्रायः भी जयपुर निवासी स्मरण करने ही पड़ते हैं। नारी शिक्षण व आवाज ही मान दृष्ट कार्य





उपर दार से बाए

१. श्री दामोदरनाथ व्यास  
अध्यक्ष, साहित्य मंडल
२. श्रीमती इन्दुबाला मुखर्जिया  
उपाध्यक्ष, साहित्य मंडल
३. श्री कन्हैयालाल मिश्र  
मंत्री, साहित्य मंडल

नीचे से—

४. श्री रामकिशोर व्यास  
कुलपति, साहित्य मंडल

नीचे दार से बाए

१. श्री रामनिवाग शाह  
उपानाथ एवं कोषाध्यक्ष  
साहित्य मंडल
२. आचार्य श्री पुष्पोत्तम 'उत्तम'  
प्रधानाचार्य, साहित्य मंडल
३. श्री हिममलनाथ 'हिमकरनेगी'  
अध्यक्ष मंत्री, साहित्य मंडल



बगई, बुगई, गिबई, बगई आदि का पूर्ण ज्ञान  
प्राप्त करने इस पत्रिका का कार्य रहा है।

राजस्थान राज्य समाज कल्याण बोर्ड की पहलवा में सन् १९१७-१८ में इस परिषद् का क्या जीवन बिता गया। "सहितोपाय एवं उद्योग द्वारा समिति" नाम देकर इस परिषद् का कार्य निष्पन्न किया गया। साथ इसी समिति के द्वारा कई छात्रों पर सहायता प्रदान की जा रही है।

[illegible]

होगी। इस कार्य में हमें व्यापक सहभागिता अधिक मात्रा में सामना करना पड़ेगा यह हम करेंगे।

इसी संदर्भ में भगवद्गीता में हम यह निवेदन करना चाहेंगे कि यह ऐसी महत्वपूर्ण बातों के लिए सत्यताओं को पूर्ण सहयोग प्रदान करें।

समाज विधा समिति—नए मन्त्र का निर्माण कर देना जो नया रूप देना, बोझ एवं भारोक्ति विनाश के साथ सांस्कृतिक परम्परा को प्रगति के गिरावर पर पहुँचाना इन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भी माधोपुर, विजयपुर (देवगढ़) रोह, बजमेर, मिर्जापुर, पुनौरा और देवगढ़ जिल्लों में समस्त-मध्य पर समारोहों का आयोजन करने की ओर मे विद्या गया है। यदि इन बातों में हमें अन्य संस्थाओं व व्यक्तियों तथा राजकीय विभागों से सापेक्ष तथा अन्य प्रकार के सहयोग विभाग के साथ मिलते तो विचार ही मगर हमें इन प्रस्तावों का मे मिलती।

[illegible][illegible]





निबन्ध-प्रतियोगिता प्रमुख है जिसमें १४७१ प्रतियोगी भाग ले चुके हैं। विन्तु ७ वर्ष तक चले आ रहे इस कार्य को "विश्व विद्यालय प्रयोग" की एक विजयि के परिणाम स्वरूप एकाएक बन्द कर देना पडा।

संस्था की आर्थिक स्थिति:- इस क्षेत्र में संस्था की स्थिति समस्यापूर्ण रही है। जो कुछ आर्थिक सहायता प्राप्त हुआ वह विद्यालयों और सहयोगी तथा संरक्षक व्यक्तियों से प्राप्त हुआ है। इसके प्रतिरिक्त राज्य के शिक्षा विभाग, समाज कल्याण बोर्ड, माहिल्य प्रकाशनी एवं केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने भी आर्थिक सहायताएं समय-समय पर प्राप्त हुई हैं।

संस्था की धन तक की प्रायः १०४५.०० ०० रु० तथा व्यय ११०५.०० ०० रु० है। वर्तमान में संस्था पर ६०००.०० रु० बर्जा है। स्पष्ट ही है कि संस्था की योजनाओं को पूर्ण करने में आर्थिक कठिनाई गतिरोध उत्पन्न करती है। तो भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने घुटने नहीं टेके हैं। धैर्य और हिम्मत के साथ प्रगति-पथ पर अपने चल करण धागे बढ़ाने जा रहे हैं।

संस्था का वर्तमान स्वरूप:-राज्य के संस्था-नियमोपनियमों के अन्तर्गत संस्था पञ्चवट होकर शिक्षा विभाग द्वारा मान्यता प्राप्त कर चुकी है। गत ५ वर्षों में संस्था का संचालन राजधानी के गणमान्य व्यक्तियों द्वारा नियुक्त संचालन समिति द्वारा हो रहा है। संचालन समिति का गठन इस प्रकार है।

श्री राम बिसोर व्याम	—	कुचरनि
„ रामोदर लाल व्याम	—	अध्यक्ष
श्रीमती हनुबाबा मुवाडिदा	—	उपाध्यक्ष
श्री बन्नेदाशान मिश्र	—	
„ पुष्पोत्तम 'उत्तम'		

„ हिम्मत लाल 'हिमकरनेगी	—	अध्यक्ष
„ राम निवास शाह	—	कोषाध्यक्ष
„ चन्द्र कुमार 'मुकुमार'	—	सदस्य
„ निरंजनाय आचार्य	—	सदस्य
„ सहदेव गर्मा	—	सदस्य
„ किम्नूरमन शाह	—	सदस्य
मुश्री मकुन्तना श्रीवास्तव	—	सदस्य
श्री बहादुरसिंह 'सहायक'	—	सदस्य
„ कैलाश तिवारी 'विद्रोही'	—	सदस्य

यह हर्ष की बात है कि राजस्थान माहिल्य प्रकाशनी (मंगम) उदयपुर में संस्था को सम्बन्धित कर अपना धंग बना लिया है। संस्था इस सराहनीय प्रयास के लिए प्रकाशनी के अध्यक्ष श्री जगदीशनाथ नायर तथा संचालक डॉ० मोनीनाथ मेनारिया को धन्यवाद देना अपना कर्तव्य मानती है।

संस्था की भावी योजना-राष्ट्रभाषा हिन्दी के विस्तार-प्रसार हेतु "हिन्दी कानेज" की स्थापना करना तथा साहित्यिक क्षेत्र में सेवा-कार्य करने के उद्देश्य में एक पूर्णतः साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन करना, इसके कार्यकर्ताओं के मानस में जाने बस में जाग रही आकांक्षाओं का वृद्ध कर है।

यैने तो 'हिन्दी कानेज' के स्वरूप को राति कानेज के रूप में सशरित प्रारम्भ में संचालित करना पडा रहा है, विन्तु समस्याओं के उचित समाधानों की अथवा की कमी के कारण पूर्ण विनिमित्त रूप अभी हम नहीं दे पाए हैं।

'सशरित' के नाम करना कई निजी श्वात और अवन नहीं है। यह भी प्रगति में एक बाधा रही है। विन्तु निवट अर्थ में ही राज्य सरकार द्वारा सुनि प्राप्त कर प्राप्त है।







## उद्घाटन के शब्द

उपस्थित देवियों और सज्जनों,

इस मेमिनार के प्रायोजकों ने इसका विचारणीय विषय परिस्थिति के प्रत्यन्त अनुकूल रखा है—  
 "सामान्य जन और साहित्यकार"। अगर सचमुच कहा जाय तो यह सामान्य जन का युग नहीं है, सामान्य जन को मान्य बनाने का दिन है। आज तक राजा लोग मान्य थे, राजा जिसको मान्य करे, वह मान्य बनता था। अब सामान्य लोगों को मान्य बनाने का दिन आ गया है, स्वराज्य का दिन नहीं है, लोक राज्य का दिन है। स्वराज्य हो चुका है, अब कोसिप करके लोक राज्य बनाने का दिन आ गया है। हम जिनके हाथ में सारे राज्य को देने वाले हैं, उनको तैयार करने का काम दो वर्गों के हाथ में आ गया है—एक है राजनैतिक पुरुष, जिसके हाथ में राजस्व सारी सत्ता है और दूसरा है साहित्यकार, जिसके हाथ में प्रेरणा देने का अधिकार है। इन दोनों के प्रयत्न में जो कुछ होगा वह होगा। साहित्यकार में भी दो पक्ष हो गये हैं—एक साहित्यकार कहता है, क्या नीति और क्या धर्म ? ये सब बातें पुरानी हो गई हैं, हम तो प्रजा का रंजन करेंगे, जिसमें जीवन की अभिव्यक्ति हो हम, जीवन में जितनी कुछ श्रद्धाएं, भावाभाएं, वामनाएं होती हैं, उनको जागृत करेंगे। इन सब वामनाओं को जागृत करने के लिए जिनके लोग प्रयत्न कर सज्जने हैं, वे करें। यही लोग फिर कहते हैं कि हम समाज के कुछ हैं लेकिन ये दोनों बातें साथ-साथ नहीं चल सकती। या तो धार्मिक रंजन करें, या फिर लोगों की उच्चभिरादा या हीना-भिरादाओं, दोनों में से एक की जादृति का प्रयत्न

करें। दूसरा साहित्यकार है, उसमें सबके लिए स्थान है, सब समाज का कार्य उसके पास है, जीवन को प्रेरणा देने का काम भी उसके पास है, जीवन उत्पन्न कैसे हो ? स्थापनम्बी कैसे हो ? उसका हास ज्यादा से ज्यादा न हो, इसके लिए जो प्रेरणा देनी है, उस प्रेरणा को देने का काम साहित्यकार का है। इसके लिए उसको अपने जीवन में साधना करनी होगी। हमारी तरफ न देखिये, हमारा साहित्य कैसा है, उसकी तरफ देखिये, यह कहने की नीयत नहीं आनी चाहिए। जितना हमारा साहित्य उत्पन्न है, इसमें भी हमारा जीवन उत्पन्न बने, इसके लिए हमें साधना करनी चाहिए, इतना तो कम से कम हम करें ही।

सरकार दो बात कर सकती है—जनता को प्रशर ज्ञान और राज्य के अधिकार। ये दोनों सारनाक चीजें हैं। लोगों को वोट के अधिकार मिलें। धार्मिक वोट की सत्ता है, धार्मिक धर्मों का काम आ सकता है तो वह वोट है। वोट जिसको चाहेगा वह भाड़ेगा, जिसको चाहेगा हटावेगा। दूसरा प्रशर ज्ञान है, वह भी सारनाक है, उसमें क्या पढ़ेंगे ? क्या नहीं पढ़ेंगे ? यह धार्मिक हाथ की बात है। धार्मिक लोगों को पढ़ाने की सत्ता दे चुके हैं। इसमें से क्या स्वाई होगा, वह क्या नहीं हो सकता। हिमालयी के बाधने है "act of faith" जिन लोगों के हाथ सर्व सत्ता देने वाले हैं, वे वोट और प्रशर ज्ञान वाले सब मूल कर हमको धर्म नहीं करेंगे, ऐसे विराम में सारी सत्ता उनके हाथ में देनी है। धार्मिक प्रदेन की सम्पत्ति ही नहीं। इस प्रदेन में सम्पत्ति के करने विनाश में ज्यादा दिन

करके जो भी प्रावरण है, वह साहित्य होता। प्राज तक साहित्य के विषय वे-वेम, दोन, या और मरए। चारों विषयों में साहित्यकार ने अपने प्रतिभा दगायी। प्रेम सनाउन विषय है, उसे नये नये धन्यवाण होते रहते हैं। मृत्यु के शास्त्रों प्राज होता है यह मजीब है। जीवन का भी मरए है। मरने की कता हर एक को प्राज ही होती, जो मार सकता है यह मर भी सकता है। मरने की कता धारके पास है, यह जीवन के शास्त्र सभी को प्राज होती है। मरने की दूसरी कता ऐसी है, जैसी महात्माओं के पास होती है, वे समझते हैं, जीवन में दूसरी की सेवा करो का मौका मिलता है। मरने के बाद भी सेवा करो का मौका मिले तो एक शास्त्र के धार मनुज जाना जाता है जिसने मारे जीवन में बरी जीता है जिसकी सारी जीवन में सेवा की, वह मरने के शास्त्र की। इस तरह चार सनाउन विषय रहे हैं। इस मना पुन का गया है, इसने धार प्रेम का सनाउन होता साहित्य, सब मोहों के प्रति साहित्य का शास्त्र। मर मोहों के प्रति साहित्य का के सादा है-देम भल और देम दाहि गुनसार को पाली दोन की सेवा करो, धर को मां। मरने लयाज माने। मरने की कता में साहित्य का साहित्य का शास्त्र। जिसका धार को सादा है, वे धार का, एक दिन दाहि नेसाज करका शास्त्र रहती है। गुनार जगान में धर्म का मर का शास्त्र के धार जगान की मर साहित्य का शास्त्र है। धार मर साहित्य का शास्त्र है।

[illegible]

प्रत्येक भाषा का अपना सवाल है, भाषा ऐसी होनी चाहिए कि उसमें जीवन के मूल्य धरा जायें। मैं पूछना हूँ कि जब हिन्दी बोलने वालों की संख्या, और भाषा बोलने वालों की संख्या में चार पाच गुनी है, दस गुनी है, तो भाषा क्यों न ऐसी हो कि जिसमें जनता को समझने में दिक्कत नहीं हो। इस वास्ते राजस्थान के जो साहित्यकार साहित्य सृजन कर रहे हैं, उनकी हिन्दी ऐसी हो कि सब लोगो की समझ में आ जाये, तब तो लोग समझेंगे कि आपकी बात है। प्रत्येक पाठ्य पूर्ण भाषा नहीं चलेंगी। अगर आपको जनता की सेवा करनी है तो जनता समझ सके ऐसी भाषा बोलें। राजस्थानी में शब्दों की भरमार है, हिन्दी में ऐसे राजस्थानी शब्द लायें जिन्हें लोग समझ सकें, ऐसी हिन्दी का आविष्कार करना होगा। साथ ही देश की रक्षा के लिये, यह बताने वाला भी साहित्य हो। मैं पूछना हूँ कि हिन्दुस्तान की रक्षा के लिए क्या करना चाहिए, इसके बारे में एक भी किताब लिखी है? अभी चीन और भारत के अधिकांशियों की बात हुई, उसकी रिपोर्टें अंग्रेजी में लिखी हैं। अभी तक गण्य हिन्दी का

नहीं है, नहीं तो भारत की रक्षा के लिए, सारे हिमानय की क्या हानत है, इसकी रिपोर्टें अंग्रेजी में न दी जाती।

साहित्यकारों से प्रार्थना है कि पिछड़ी हुई जनता का एक भी प्रादमी पिछड़ा हुआ भाषिक प्रदेश में रहता है और एक भी प्रादमी अपमानित होता है, तो भाषिकी नाक कट गई। मैं और प्रदेश की बात नहीं करता, राजस्थान में पिछड़ावन बहुत है और स्त्रियों की क्या हानत है, केवल ११ महिलायें विधान सभा और लोक सभा के लिए हैं। उनके बारे में भी विचार करें।

मुझे भाषिकों के बीच में भाषा का भ्रमसर मिला, मैं कृतार्थ हुआ। मुझे विद्वान है भाषा जो जनता का युग गुरु हो गया है, उसकी प्रतिष्ठा बढ़ा कर, सामान्य जन की सेवा करके समाजवाद लाने के लिए भाषा प्रयत्न करेंगे। मुझे धाना है जनता और सामान्य जनता की एकनिष्ठ सेवा करने का दान लेकर भाषा सेमिनार में वाचन मोड़ेंगे।

२१-२-६१

—काका कालेलकर

## “संचालक—की ओर से”

आदरणीय काका साहब, साहित्यकार सम्प्रदाय, उपरिष्ठ सज्जनों और महिलाओं। एक प्रश्न है भाषा साहित्यकार और जनता के बीच जिनकी दुविधाये खड़ी हो गई है उनके लिए उत्तरदायित्व किसका है? हमने पहले मैं यह प्रश्न भी पूछना चाहता हूँ कि क्या सम्प्रदाय जनता और साहित्यकार के विवेचन की आवश्यकता है? जनता के कष्ट का उत्तरदायित्व साहित्यकार का है! इतिहास की दृष्टि से देना जाय तो हम अचार की मिठाई हैं,

वैदिक काल में ऋषि ऋचाएं गाते थे, राजा और महाराजाओं के पास बैठते थे, उनके बोलें हुए शब्द धर्म के नाम पर प्रचारित किये जाते थे। लेकिन उनके बाद यह भी देखने है कि जब शक्ति के हाथ में सब आया तो बौद्ध धर्म या साहित्यकार सम्प्रदाय बन कर खड़े लगे। भारत की या इतिहास प्रमाणित करता है कि उस समय सर्वत्र हुआ है और लोगों ने अनुभव किया कि यह सर्वत्र भारत की धर्म का भाव करना है। इसलिए विवेक बने,

विधान देने और उसमें क्या कि वे भीम मांग कर पावन करे ताकि स्वार्थ की विन्ता न हो। हमारे सामन्त जान में यह मर्यादा भी रही है कि जब साहिबदार घाता दा तो राजा उसकी पावनी को रुपये पर लेकर पक्का दा। घात यह दुर्दशा है कि उसे उद्वेग और सन्ताह दी जाती है। यह परो, यह न करो। यह दायित विमर्श है ? क्या उतका है जो जनता के नाम पर उतका मोदना कर रहे है ? कौन कर रहा है जनता का मोदना ? साहिबदार बदमा कोई घोर ? उदका के जान दा उदका को सिद्धि करने का प्रयत्न नहीं है।

[illegible]

परिचय के संदर्भ में

## राजस्थान की साहित्यिक संस्थाएँ

कुमारी कमला भ्राकड, जयपुर

राजस्थान के साहित्य जगत में साहित्यिक संस्थाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। सामूहिक रूप से साहित्य के अनुसंधान, प्रचार, प्रकाशन एवं प्रोत्साहन के जन-मानस में साहित्यिक अभिरुचि उत्पन्न करने में संस्थाओं का प्रसंस्नीय योगदान रहा है। इतना ही नहीं साहित्य के नये पाठक तैयार करने में इन संस्थाओं ने जो दक्षता प्रकट की है साहित्य जगत को निश्चित ही आभार दिया है। साधन और वातावरण के अभाव में अनेक प्रतिभाएँ बुझित हो जाती हैं किन्तु संस्थाओं के सहयोग से प्रान्त की प्रतिभाएँ काफी मात्रा में कुठित होने से बची हैं। हम यहाँ प्रान्त की कुछ महत्वपूर्ण संस्थाओं के बारे में संवेत देते हुए निवेदन करेंगे कि प्रतीत की सुरक्षा, वर्तमान के परिष्कार और भविष्य के विकास के लिये जनता, राज्य और सम्पन्न लोगों के साथ २ प्रान्त के साहित्यकारों को भी इन संस्थाओं को सद्भावनापूर्ण योग देने में तत्पर रहना चाहिये।

प्रान्त की प्रमुख संस्थाओं में 'साहित्य मण्डल जयपुर', हिन्दी साहित्य समिति भरतपुर, बागड प्रदेश साहित्य परिषद् हूँगरपुर, प्रान्तप्रालीय कुमार साहित्य परिषद् जोधपुर, राजस्थानी लोध संस्थान जोधपुर, हिन्दी विरव भारती बीकानेर, राजस्थान साहित्य समिति बीकानेर, भारतेन्दु समिति कोटा, और 'साहित्य मण्डल' नागपुरा आदि का संवेतनात्मक परिचय यहाँ देने हुए निवेदन करेंगे कि राजस्थान की अन्य साहित्यिक संस्थाओं का परिचय प्रान्त करने में असमर्थ रहे हैं एतदर्थ धमा आचना करने हैं।

साहित्य संस्थान जयपुर.—की स्थापना स० १९६८ में प्राचीन साहित्य की अनुसंधान एवं प्रकाशन तथा प्राचीन साहित्य के सृजन और प्रचार की दृष्टि से हुई। तब से यह संस्थान निरन्तर साहित्य सेवा में मग्न है। संस्थान के प्रान्तगत चलने वाली प्रवृत्तियों में प्रमुखतः प्राचीन साहित्य के अनुसंधान को महत्व देते हुए प्राचीन साहित्य-विभाग का गठन राजस्थान के प्राचीन साहित्य को प्रकाश में लाने के उद्देश्य से किया है। इस विभाग के द्वारा अनेक प्राचीन कवि और ग्रन्थों का परिचय अनेक प्रसिद्ध और अधिकारी विद्वानों के द्वारा साहित्य जगत को प्रान्त हुआ है। संस्थान का दूसरा विभाग है राजस्थानी प्राचीन साहित्य। सन् १९५५ तक इस विभाग ने कुल छठारह हजार पाच सौ गीतों को संग्रहित किया है जिसमें १९५५ तक महाराणाओं के गीत, कृदावतों के गीत, राजस्थानी दोहे आदि का संपादन किया जा चुका है। इसके साथ ही 'पृथ्वीराज रामो' का संपादन भी इस विभाग का महत्वपूर्ण कार्य है।

संस्थान, लोक साहित्य, आदिवासी साहित्य और राजस्थानी लोक गीत आदि के संग्रह और प्रकाशन के निदेश निरन्तर प्रयत्नशील रहा है। मेवाड़ की बहावते २ भाग, मानवी बहावते और राजस्थानी लोक गीतों के संग्रह, इस विभाग का प्रकाशन है।

संस्थान प्राचीन साहित्य के साथ २ प्राचीन साहित्य के प्रकाशन के निदेश निरन्तर प्रयत्नशील रहा है जिसमें बीकानेर के निरुपेयों का संग्रह और भी जगदीश राव भादव के 'आचार्य भाग्यद' का संग्रह

(नाट्य) का प्रमाणन महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही संस्था के अन्तर्गत शोध संस्थान का कार्य भी महत्वपूर्ण विषय है जिसमें दूर २ में शोध-प्रज्ञा का शोध के विषय आते हैं। इसी विभाग के अन्तर्गत शोध विभाग का प्रमाणन भी हुआ था। साहित्यिक प्रमाणों की परम्परा भी संस्था का अन्तर्गत है। जिसमें अन्तर्गत 'ग्रन्थालय' कोमा और प्रेमचन्द आदि के साथ के प्रमाणों की स्थापना की गई है जो निरन्तर इन विभागों पर विचार विमर्श करते रहते हैं।

[illegible][illegible][illegible]

संस्था को भागीर्वाद दिया है। संस्था ने बने 'स्पर्धा जयन्ती' महोत्सव मनाया है जिसने राष्ट्र-व्यापन (उप-राष्ट्रपति) ने पधार कर संस्था के भागीर्वाद दिया।

बागड़ प्रदेश साहित्य परिषद, इंगरपुर -

परिषद् की स्थापना सं० २००१ का शिवालय  
संस्था की हुई थी। संस्था में संस्था बागड प्रेस के  
साहित्य के प्रसार एवं प्रसार के निम्न प्रयत्नों को  
बागड भाषा और उसके साहित्य की उन्नति के दि  
भी कार्यशील है। संस्था की प्रयत्नों में भव्य  
संस्था भाषा महा विचार, उद्यम, क्षेत्र, एवं  
भाषा प्रसार समिति, प्रेस एवं बागड विभाग, भाषा  
महिता विभाग, राजस्थानी शोध विभाग, भाषा  
व्यव एवं पुस्तकालय और प्राचीन हस्तलिखित की  
का संरक्षण प्रयत्न है। कार्य के प्रसार और भाषा  
की सभी के कारण परिषद् योजनाओं के प्रयत्न  
विभाग करने में समर्थ नहीं हो सकती। कार्य का  
भारत में होने के कारण भी दुनिया में है।

प्रमोदचन्द्र गोस्वामी साहित्य परिषद्, कोलकाता

एक हीमा प्राण की जारी-जारी होता है।  
 यह जीवन में साक्षिक के प्रति सब प्रभाव को  
 के प्रति हमारे सब प्रभावों के प्रति सब प्रभावों को  
 प्रभावों के प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को  
 प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को  
 प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को  
 प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को  
 प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को  
 प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को प्रति सब प्रभावों को

मे घोर हिन्दुस्तान में तथा उसके बाहर, हैदराबाद देहली, बेंगलूर, बलुक्ता और सांगोती का फिजि-द्वीप समूह में है। परिपक्व देश के विभिन्न प्रसिद्ध विद्वानों को बुना अपने अधिवेशनों की अध्यक्षता के द्वारा उनके ज्ञान में प्रान्त के जन-मानस को सामान्यित करती है।

**राजस्थानी शोध संस्थान, बीपासनी—**

बीपासनी शिक्षा समिति जोधपुर द्वारा राजस्थानी साहित्य के शोध और प्रकाशन के महत्वपूर्ण कार्य के निम्ने १५ अगस्त १९५५ को शोध संस्थान की स्थापना की गई थी। तब से यह शोध संस्थान प्रान्त के साहित्य वैभव को बढ़ित करने में संलग्न रहा है। त्रैमासिक शोध पत्रिका 'परम्परा' के प्रकाशन के द्वारा संस्थान ने जो प्राचीन साहित्य और लोक साहित्य, रमज पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है, प्रशंसनीय है। 'परम्परा' द्वारा प्रकाशित प्रमुख प्रकाशन हैं लोक गीत, गौरा हट जा, डिगन-कोष, जेठेरा मोरठा, राजस्थानी बान संग्रह, रम राज भादि है। इसके अतिरिक्त संस्थान के द्वारा 'साहित्य और समाज' (श्री विजयदान देवा) 'साहित्य संगीत और कला (कोमल कोठारी) दीर्घक दो निबन्धों की पुस्तकों का भी प्रकाशन हुआ है। संस्थान का अद्वितीय और प्रशंसनीय कार्य है 'बृहत् राजस्थानी शब्द कोष' का प्रकाशन। इस शब्द कोष में लगभग एक लाख पन्नीस हजार शब्द होंगे। शब्द कोष चार भागों में प्रकाशित होगा— जिसका प्रथम भाग शीघ्र ही पाठकों के हाथ में आने वाला है। यह चार हजार पृष्ठों में छपेगा। वास्तव में संस्थान का यह कार्य राजस्थानी भाषा का अमरत्व और साहित्य के गौरव में बृद्धि करने वाला होगा, इस कार्य में श्री सीताराम लाल को हृदय है।

गीतों, राजस्थानी बातों, पुराने-विश्वों एवं डिगन के कवियों की जीवनी के संग्रहों में भी संलग्न है। अब तक क्रमशः पाच सौ हस्तलिखित ग्रन्थ, ५०० लोक-गीत, २००० डिगन गीत व छन्द, दो सौ राजस्थानी बातें, एक सौ बीस विन और एक सौ जीवनीया सम्पत्ति कर चुका है।

**हिन्दो विश्व भारती, बीकानेर:—**

भारती की स्थापना बीकानेर साहित्य सम्मेलन द्वारा २६ जून १९५७ को हुई थी। तब से विद्व-भारती, बीकानेर के जीवन में साहित्यिक अभिरुचि उत्पन्न करने में प्रयत्नशील है। समिति के अन्तर्गत चलने वाली प्रवृत्तियों में अनुसंधान विभाग, समाज कल्याण विभाग, अन्तर्राष्ट्रीय विभाग, पुस्तकानय व वाचनालय तथा प्रौढ शिक्षण एवं प्रशिक्षण विभाग चलते हैं। ये विभाग गणन एवं कर्मठता के साथ अपने कार्य में संलग्न रह जन-सेवा में लगे हैं। इसके साथ ही भारती की प्रमुख प्रवृत्ति है नियमित रूप से होने वाली अनुसंधान एवं विचार गोष्ठियां। ये गोष्ठियां सप्ताह में दो बार रविवार और बुधवार को होती हैं। विभिन्न विषयों पर प्रसिद्ध विद्वानों के भाषण तथा निबन्ध पाठ होने रहते हैं।

**राजस्थान साहित्य समिति, बीकानेर:—**

समिति की स्थापना २४ अगस्त १९५७ ई० को हुई थी। तब से समिति प्रचार, प्रकाशन और अपने शोध में साहित्यिक वातावरण कायम रखने के निम्ने प्रयत्नशील है। समिति ने राजस्थानी कीर्ति की राम कथा, राजस्थानी-लोक संस्कृति की रूप रेखा, अर्थात् राजस्थानी वाद्य, कर्मकारी जीवन, अब तक प्रकाशन किया है। 'वन्दे' नामक त्रैमासिक शोध पत्रिका की प्रकाशन होगी। अर्थात् समिति की योजना राजस्थान के साहित्य का स्तर में प्रकाशित करने की है।



# राजस्थान की साहित्यिक परंपरा

— विवेचनान्तक एवं पश्चिमान्तक सिंग्लेरा

ध्यान में—

मंस्कृत-साहित्य

साहित्य  
प्रो० हरिराम व्यासजी 'समिन्धन'

प्र० हरिराम साधामे 'योग' नामक  
अन्यत्र 'न-माहित्य' और 'उमरी' मुख्य प्रवृत्तियां  
दा० हरिनंदर 'हरिण'

प्रेम-प्राप्तिय

श्री: अनादयः नारायणः

श्री गणेशाय नमः  
प्राधान्य प्राप्त श्री गणेशाय नमः  
श्री गणेशाय नमः

"आवृत्ति" मध्य मीन

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

विशाल-प्रमाण

५१८ श्रीगणेशाय नमः

**THE UNIVERSITY OF CHICAGO**

१५. ५००००० - ५०००००००

(द्वितीय)

*(Faint handwritten text)*

1-315-01 100-100

11/10/2010 10:10 AM

2000 年 12 月 15 日

1997-1998

10-11-68

10-11-68

10-11-68

... ..

2000

[illegible]

# संस्कृत साहित्य

प्रो० हरिराम आचार्य 'अभिताम' एम ए., संस्कृत विभाग, महाराजा काशीर, जयपुर

**रा**जस्थान की वीर प्रसविनी धरती में जहाँ एक धीर बलिदानी वीरो का जन्म हुआ, वहीं दूसरी धीर साहित्यिक मनोपियो एवं रचनाकारों की भी निरंतर सृष्टि हुई है। १० वीं शताब्दी के बाद प्रायः प्रत्येक शती में संस्कृत-साहित्य का सर्जन होता रहा है। हम निस्संकोच कह सकते हैं कि राजस्थान में भी संस्कृत-साहित्य-सर्जन की एक सुदीर्घ परंपरा रही है। इस प्रान्त की राजधानी यह ऐतिहासिक नगर जयपुर कुछ शतक पूर्व भारत भर में वाराणसी के बाद संस्कृत-विशेष का प्रमुख केन्द्र माना जाता था और यहाँ उद्भट विद्वानों की छात्रछाया में शिक्षा प्राप्त करने के लिए सुदूर देशों से ज्ञान-पिपासु छात्र आते रहते थे।

कुछ सीमाओं तक यहाँ के राजाओं का सहयोग एवं आश्रय भी संस्कृत लेखन के लिए प्रेरणास्पर्द रहा। यद्यपि सुदृष्टि होने के कारण राजस्थान के राजपूत राजा संस्कृत के असम्यक् ग्रंथों के सचय की व्यवस्था की ओर ध्यान नहीं दे पाये, फिर भी निःस्पृह भाव में रचना करने वाले पंडितों की कई हस्तलिखित रचनाएँ भंडारों, मंदिरों और जैन उपाश्रयों में बड़े यत्न में सुरक्षित रहीं हैं। राजस्थान में हस्तलिखित प्रतियों के ज्ञान-भंडार साहित्य-भंडार में सर्व विदित है। बीकानेर, जैसलमेर, नागौर, जयपुर आदि के संयोगार विदेशी विद्वानों तक के लिए आकर्षण के केन्द्र रहे हैं। हस्तलिखित प्रतियों की अधिकाधिक समस्या में उपस्थित बीकानेर में होनी है, जहाँ ऐसी करीब ५० हजार प्रतियाँ मौजूद हैं। उसके बाद जैसलमेर का स्थान है जहाँ विदेशी

विद्वान् प्रो० बूलर (Buhler) की "गडबहो" जैसे सुप्रसिद्ध प्राकृत महाकाव्य और महाकवि बिल्हण रचित "विक्रमांक देवचरित" महाकाव्य जैसे दुर्लभ ग्रन्थों की प्राप्ति हुई थी। संस्कृत के मुहूर्ती रचनाकारों के साथ २ उन महामना जैन मुनियों का भी हमें ऋणी होना चाहिए जिन्होंने अपने संस्कृतानुराग के कारण कई दुर्लभ एवं विस्मृत संस्कृत ग्रन्थों को अपनी ममतामयी क्रीड में स्थान देकर उन्हें कान के भयंकर घण्टों में और इतिहास की खूँखार तलवारों से बचाये रखा।

यह कहते हुए हमें गर्व होता है कि "गिरुपास वध" के प्रणेता महाकवि माध ने राजस्थान की भूमि को अपने जन्म से प्रनवृत्त किया था। भीन-माल (भीमाल) नगर माधजी जन्मभूमि थी। धनः हम कह सकते हैं कि माध ने लगभग १३०० वर्ष पूर्व ही माध ने वृक्षपी में परिणामित होने वाले महाकाव्य की रचना करके राजस्थान में संस्कृत-साहित्य-मार्जव का प्रथम संस्कार कर दिया था। उसके बाद भी कई साहित्य मुद्राओं का सम्बन्ध राजस्थान के साथ जोड़ा जाता है किन्तु उनके विषय में पर्याप्त मतभेद है। लेखन माध के बाद "तिलकमंजरी" नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ के रचयिता महाकवि धनराज के राजस्थान-निवास होने के सुनिश्चित प्रमाण हमें मिलते हैं। धनराज यद्यपि धारानगरी के निवासी काश्यप तथा राजा भोज (११०० ई०) की सभा के पंडितों में से थे। पर भोज राजा द्वारा "तिलकमंजरी" ग्रन्थ की सम्पि-करण कर दिये जाने पर सम्पुत्र होकर वे मारवाड़

राज्य के मांचोर नामक स्थान में आकर रहने लगे ।  
उनके अतिरिक्त लगभग १०वीं शती में यहाँ गुप्तसिद्ध  
परिमाणव्य जैनमुनियों की मेलनी ने अनेकानेक  
संस्कृत ग्रन्थ प्रकृत हुए हैं और अत्येक युग में होने  
रहे हैं । इनमें से विष्णुनिर्वाण मुख्य है ।

१. 'वाय्यादुत्तान' के रचयिता मेराठ निवासी  
वाग्भट्ट ।

२. सुविख्यात दार्शनिक अनायास हरिभट्टगुरि  
( विमोह ) ।

३. 'नरसिंह-वन्दन' की उदाधि में विष्णु-  
दिव्य विमलमूर्ति ।

५. १५ वीं वर्षी से 'हार्मिया' महाविद्यालय में एम. विद्या अध्ययन पूर्ण।

इसके लिये हमें यह भी ध्यान रखना पड़ेगा कि हमारे देश में जो लोग हैं, जो हमारे देश में रह रहे हैं, वे भी हमारे देश के हितों के लिए काम करना चाहते हैं। हमें यह भी ध्यान रखना पड़ेगा कि हमारे देश में जो लोग हैं, जो हमारे देश में रह रहे हैं, वे भी हमारे देश के हितों के लिए काम करना चाहते हैं।

होती हैं—(१) परंपरा या अनुष्ठान—  
नदी विधामों की प्रतीष्टा। इस युग में प्रायः  
प्रचलित साहित्य रीतियों पर विद्वानों ने  
बनाई—टीका, काव्य, इतिहास, नीति, धर्म,  
गणसंस्थान, तथा अनुवाद मोर सुन्दर  
गये। राजस्थान प्रान्त के विभिन्न राज्यों के  
मने २ क्षेत्र में सीमित रहकर भी व्यापक  
पर विस्तार रहे। जयपुर इनकी प्रमुख कोश-  
रही है, अन्य राज्यों ( तत्कालीन राज्यों ) के  
प्रायः यह भूगणना बनी रही है, जगह में  
परिषद प्रचलित है।

रमती हैं। पं० मधुसूदन रचित-वेदो का विज्ञान भाष्य, वैदिक बोध तथा इन्द्रविजय काव्य आदि काफी उपादेय एवं सुन्दर कृतियाँ हैं। वैद्यजी के भाई पं० हरिवल्लभजी ने भी 'जयनगरपंचरंगलोचनोत्पत्ति' ग्रन्थ लिखा। इनके साथ ही पं० शिवदत्त दाधीच तथा श्री बेवन्तरामजी ज्योतिषी के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

साहित्य-लेखन की इस परंपरा में दो व्यक्तियों के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं जिनकी वरदा लेखनी कई दशकों की प्रत्यक्ष साधना के बाद आज भी अनवरत गति में सृजन-पथ पर प्रसरण है, ज्ञान की दुर्लभ शक्ति भी जिसे कुंठित नहीं कर पाई है। वे महामना मुदृती रचनाकार हैं—महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी तथा भट्ट श्री मधुरानाथ शास्त्री। पं० गिरधर शर्मा आज भी राजस्थान के वरिष्ठ साहित्यकारों में प्रमुख हैं और भारतीय दर्शन तथा संस्कृति के साथ २ वैदिक वाङ्मय के अतिथीय विद्वान् हैं। भाषा के द्वारा लिखित 'प्रमेय-पारिजात', 'विषया धर्म सीमासा' आदि अनेक ग्रंथ दिग्गममात्र के लिए वरदान गुण्य हैं। भट्ट मधुरानाथ शास्त्री के नाम के साथ छोटे-बड़े लगभग २० ग्रंथों की सूची अनुस्यूत है, जिनमें से प्रत्येक उनकी पारंगामी विद्वत्ता का परिचायक है। संस्कृत भाषा पर भट्टजी का पूर्ण अधिपत्य है और सरल सुबोध भाषा में प्रसादपूर्ण एवं सजित रचना करने में वे निष्ठ रहते हैं। संस्कृत के प्राचीन तंदों के अतिरिक्त उन्होंने ब्रजभाषा के दोहा, बीरार्य आदि प्रायः सभी छंदों पर, उर्दू भाषा के बजनों पर और लोक छंदों के सावनी आदि की छंदों पर संस्कृत में विपुल साहित्य का सृजन किया है। रामगंगाधर, गाथा सप्तमती तथा बादम्बरी की विद्वत्पूर्ण टीकाओं के अतिरिक्त साहित्य-बंधन,

जयपुर वैभव, गोविंद वैभव तथा भारत वैभव जे विमुक्त साहित्यिक काव्यों के भाष्य जन्मदाता हैं। भाष्य इतिहास भट्टजी की एक युगांतरकारी साहित्य-सृष्टि के रूप में सम्मानित करेगा। संस्कृत-साहित्य-भंडार की श्रीवृद्धि में भाषका योगदान प्रमूल्य है। भारते सुयोग्य पुत्र श्री कनानाथ शास्त्री, जो स्वयं एक समर्थ संस्कृत कवि हैं, भट्टजी की इस परंपरा को प्रयुग्ण रखेंगे, ऐसी आशा है।

इनके अतिरिक्त पण्डित मोतीलाल शास्त्री वैदिक साहित्य के अपूर्व विद्वान् थे। मोतीलाल भाष्यकार के रूप में तथा शतपथ ब्राह्मण के अनुवादक के रूप में उनकी प्रतिष्ठा है। उनके ज्येष्ठ भ्राता पं० रमानाथ शास्त्री के ग्रंथों में धामिजता तथा काव्यात्मकता का सुन्दर संगम मिलता है। स्तुति पारिजात, रामजीवा, छंदोयोग-पनिपद् भाष्य आदि भारते प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। श्री हरि शास्त्री भक्ति सम्बन्धी मुक्तक काव्यों के रचयिता हैं। जयपुर के संस्कृत कानून के श्री चंद्रशेखर द्विवेदी, गंगाधर द्विवेदी आदि अनेक विद्वानों ने अपनी सुनिश्चित कृतियों में संस्कृत-साहित्य की श्रीवृद्धि की है। जैनाचार्यों में मुनि जिन विजय जी, पं० सुख-लाल जी तथा पं० चैतन्यलाल जी के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

जोधपुर में श्री किरोरनाथ रेड्डी ने ऐतिहासिक ग्रंथ "माई विधानम्" लिखा। पं० नित्यानन्द शास्त्री लिखित "रामचरिताय्य रत्नम्" रामचरित पर लिखा हुआ बड़ा सुन्दर काव्य है। आज भी बड़ा आचार्य जयदीन खन्ना एवं पं० मणिमंजरी दास बारी सरसा में मुक्तक साहित्य का सर्जन हो रहा है। बीकानेर में पं० बिलाधर शास्त्री ने "हृत्पामा-सूत्रम्" नामक चमत्कृत प्रबल सुन्दर काव्य लिखा। उनकी लेखनी में एक विशेष एक और काव्य की

१. विशेष के लिए द्रष्टव्य—भाषाकार रमचं इन्स्टीट्यूट व साधू ल रमचं इन्स्टीट्यूट की लिपि म



# अपभ्रंश साहित्य और उसकी मुख्य प्रवृत्तियाँ

लेखक—डॉ० हरीश, एम. ए. डी. क्लि, हिन्दी विभाग, महाराजा काशीर, जयपुर

अपभ्रंश साहित्य का परिवार बड़ा विदाल है। इस साहित्य का बहुत बड़ा घंटा घंभी जैन-अजैन भंडारों में सुरक्षित है। अब जैन भंडारों की पर्याप्त शोध हो रही है। अतः इस साहित्य की समृद्धि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है, नहीं तो शोध के अभाव में एक बार प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् पिशाल को कहना पड़ा था कि "अपभ्रंश का विपुल साहित्य खो गया है।" वास्तव में उस समय सम्भव शोध की कठिनाइयाँ चरम सीमा पर थी। साथ ही जैनी लोग भी अपने भंडारों को दिखाना अपना अमान सम्झते थे। सोभाव्यवशा अब ऐसी बात नहीं है। राजस्थान, गुजरात, दिल्ली, जयपुर, नागौर, बीकानेर तथा जैसलमेर के भंडारों में अपभ्रंश की अनेकों कृतियाँ मिली और मिलती जा रही हैं। डॉ० हीरालाल जैन ने बार्दजा के जैन भंडार में उपलब्ध अनेक कृतियों की सूचना देकर तथा उनमें से कुछ का सम्पादन करके अपभ्रंश भाषा में विरचित साहित्य की सम्पदा को निभ्रात सिद्ध कर दिया है। अपभ्रंश के इस असाधारण साहित्य की रक्षा करने का सारा ध्येय जैन भंडारों को है।

अपभ्रंश भाषा के साहित्य का उद्भव यद्यपि विद्वानों ने चौथी-पाँचवीं शताब्दी में सं० १००० तक निर्धारित किया है परन्तु वास्तव में इस साहित्य का सिंहायकोवन करने पर यह ज्ञान हो जाता है कि उद्भवकाल में उपलब्ध रचनाएँ बहुत घुट्ट प्रतीत नहीं होती। अपभ्रंश साहित्य के परिणीवन के लिए हमके इतिहास को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

१. प्रारंभिक काल (सन् ५०० ई० से ८०० ई० तक)

२. स्वर्णकाल (सन् ८०० ई० से १५०० ई० तक)।

अथावधि, ५ वीं से ८ वीं शताब्दी का अपभ्रंश साहित्य ठीक में उपलब्ध नहीं हो पाया है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि इस काल में साहित्य रचना हुई ही नहीं अपितु इसके लिए एक जोड़ट पूर्ण शोध की अपेक्षा है। ऐसी स्थिति में ८ वीं से १५ वीं शताब्दी का उपलब्ध साहित्य ही हमारे अध्ययन का आधार बन जाता है। यों तो अपभ्रंश साहित्य सारे देश में लिखा गया, परन्तु विशेष रूप से इसका सृजन राजस्थान, गुजरात, मगध और महाराष्ट्र में ही अधिक हुआ। इस साहित्य का विभाजन विभिन्न प्रदेशों की दृष्टि से रख कर इस प्रकार किया जा सकता है :

(१) राजस्थान, मानस और गुजरात में विरचित अपभ्रंश साहित्य।

(२) महाराष्ट्र में विरचित अपभ्रंश साहित्य।

(३) मगध तथा बिजिना में विरचित साहित्य।

(४) उत्तरी प्रदेशों में विरचित अपभ्रंश साहित्य।

हम अपने दायन्य में राजस्थान के अपभ्रंश साहित्य पर ही प्रकाश डालेंगे। यों तो अपभ्रंश साहित्य १८ वीं शताब्दी तक रखा जाता रहा है, परन्तु राजस्थान में विरचित यह साहित्य अपभ्रंश के स्वर्णकाल की सम्पदा है। सं० १००० से

की मलामती तथा राजस्थान में अपभ्रंश की स्थिति रही इसी पर प्रसुत रूप में महा विचार जा रहा है। १५ की मलामती तथा राजस्थान में साहित्य रचना की दृष्टि में विनाय प्रदेश है। यहाँ इन बात में सुदराय तथा मानस उत्पन्न करने अपभ्रंश कवियों का साहित्य भी माना है। प्रसुत देश में अधिकतर अपभ्रंश के कवी कवियों के साहित्य की रचना है जो इन प्रदेशों में प्रचलित साहित्य मान्य करी रहे। इन समस्त साहित्य की रचना अपभ्रंश में प्रचलित साहित्य माना जाता है।

अपभ्रंश के प्रबंध तथा लखड काव्यो के

प्रबंधात्मकता

राजस्थान के अपभ्रंश काव्यो में प्रोक्त तथा लखड काव्य विद्यमान हैं। संस्कृत और इन् के प्रबंध काव्यो ने राम और कृष्ण के जीवन के काव्य का आधार बना कर प्रबंध काव्य रचना महाभारत और पुराण इन कवियों के प्रबंध रहे। टीका इसी प्रकार अपभ्रंश ने प्राचीन काव्य समन किया। इन प्रबंधों ने साहित्य काव्यो भी साहित्य रूप में बना है। ये जन कवियों

बमोटी में देखने पर, इनमें नायक, वर्णन, लक्ष्य, तथा वैविध्य, रस और मन्थ सभी बातों का सम्बन्ध निर्वाह मिलता है परन्तु धोड़े-धोड़े परिवर्तन के साथ। यों मूल में इनके वर्णन क्रम, काव्य पद्धतियों घटना विन्यास के आधारभूत तत्त्वों में पर्याप्त समानता है, परन्तु साहित्य की इस संक्रांतिकालीन स्थिति ने महाकाव्य को लड़खड़ा दिया। उसमें जीवोत्पन्न सस्कृत की मुलना में कम हो गया। संस्कृत की ह्यामोनमुख प्रकृति का प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सका और यही कारण है कि वही कथा रूढ़िया, वही काव्य रूढ़िया, वर्णन क्रम, परंपरित घटनाक्रम और कथा का तारतम्य वही बना रहा। फिर भी उन सबके अतिरिक्त इनमें धार्मिकता, प्रचार तथा जन समाज में सम्पर्क होने के कारण अपभ्रंश के प्रवर्धों में लोक जीवन का संस्पर्ध सौन्दर्य, भाषात्मिकता, कथात्मकता-लक्षित, सौन्दर्य प्रवाह सरलता और शृंखलाबद्धता आदि गुण विद्यमान हैं। अपभ्रंश साहित्य पर दोष करने वाले विद्वानों ने यद्यपि अपभ्रंश काव्यों की प्रबंधात्मकता और साहित्यिक सौन्दर्य को सस्कृत के काव्यों की अपेक्षा दुर्बल कह कर मदेह की दृष्टि में देखा है, परन्तु वास्तव में बात ऐसी नहीं है। रस साहित्य का मन्थन अभी तक ठीक में ही नहीं पाया है। सरलता की परम्पराओं से उनमें ध्वन्य सुरक्षित है

परन्तु ८ वीं से १३ वीं शताब्दी के इस संक्रांति काल में ऐसे सुन्दर महाकाव्यों, खड्काव्यों, रोमांटिक-काव्यों तथा सुन्दर काव्य ग्रंथों का मिलना हमारे प्राचीन साहित्य की अपूर्व सम्पत्ति का द्योतक है। वर्णन परम्परा काव्यात्मकता, छन्द, अलंकार, रस किसी भी दृष्टि में ये काव्य कमजोर नहीं पड़ते। हाँ सस्कृत काव्यों में तुलना करने पर इनमें अपेक्षा-कृत दोष-दर्शन का आरोप भले ही लगाया जाता रहा हो।<sup>१</sup> कथा और चरित ग्रंथों में स्वयंभू का पठम चरित, हरिवंश पुराण, महापुराण। धनपान की भविस्यत्त बह्ना।<sup>२</sup> हेमचन्द्र इत त्रिपथि शका का चरित, धवन बवि का हरिवंश पुराण<sup>३</sup>। अर्जुन वृत्तियों में पृथ्वीराज रासो के अपभ्रंश के अंश, रघु के पदम या वनभद्र पुराण<sup>४</sup>, यशोकीर्ति का पाण्डवपुराण, हरिवंश पुराण<sup>५</sup> तथा धृतराष्ट्र का हरिवंश पुराण, पुष्पदंत का जयकुमार चरित, जमहर चरित<sup>६</sup>, धीर बवि का जंजूरवामी चरित<sup>७</sup>, नयनदी का मुदमण चरित<sup>८</sup>, कनकामर का करकंड चरित, सागरदत्त का जम्बू ह्वासी चरित<sup>९</sup>, प्रात के मुगाहनाह चरित, अपभ्रंश के अंश, देवचंद्र के सलवारयान<sup>१०</sup> और वर्धमान गूरि का वर्धमान चरित, पाटिह बवि का पठमनिरि चरित<sup>११</sup>, श्रीधर बवि का पामनाह चरित, मुकुमान चरित, तथा मुनांवना चरित<sup>१२</sup>, बवि मिह रविन पञ्चकुण्ड

१. देखिए अपभ्रंश साहित्य . डा. हरिवंश कोट्टर, पृ. ५३-५४ २ जो. प्रो. एम. मंगदक भी गो. डी. दत्ता और गुणी तथा हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग पृ० २२६, डा. नामवर सिंह।
३. दिगम्बर जैन मंदिर बहा लेख पंथियों का भंडार-जयपुर में सुरभिज तथा दत्ताहवादा युनिवर्सिटी स्टडीज भाग १, गन् १९२५ में प्रो० होरालान जैन का निर्देशन।
४. धामेर शास्त्र भण्डार जयपुर। ५. अपभ्रंश साहित्य डा० कोट्टर, पृष्ठ ११८-१२०
६. वही, पृष्ठ १२०-१२६ ७. धामेर शास्त्र भण्डार-जैन सौध मंग्यान, जयपुर।
८. देखिये-अपभ्रंश प्रकाश पृष्ठ ३० देवेन्द्रकुमार-प्रकाशक वर्णी प्रथमाना, काशी।
९. अपभ्रंश प्रकाश पृष्ठ २६-३० देवेन्द्रकुमार एम. ए. प्रकाशक वर्णी प्रथमाना, काशी।
१०. वही ११. अपभ्रंश साहित्य. पृष्ठ २०७-२०९ डा० कोट्टर १२. वही, धामेर भण्डार, जयपुर

रिउ (प्रद्युम्न चरित) हरिभद्र विरचित मन्तकुमार  
रिउ<sup>१</sup> मगमदेव इत गोमिणाह चरित, बाहुबली  
रिउ, तथा यशवीरि का चरित<sup>२</sup> चरित<sup>३</sup> तथा  
रिउ का मुनीश चरित, मन्मति नाथ चरित तथा  
३ की कलावरी में भगवतीशान का मृगांक लेखा  
रिउ तथा घोर भी अनेक अप्रकाशित रचनाएँ,  
जिन का उत्तर अप्रभंश के साहित्य की सीध  
उपलब्ध हुई है घोर जो अप्रभंश की प्रौढ  
रचनाओं की प्रतीक है। प्रगत लेख की पृष्ठ

धनपाल की अप्रभंश हेमचंद्र की अप्रभंश के लिये  
है।<sup>३</sup> अतः ये स्वयंभू के बाद तथा हेमचंद्र के  
हुए। धनपाल ने स्वयं को—

‘सरमइबहुल सहाररेण’<sup>४</sup> (सरसरी का)  
कहा है। धनपाल का प्रसिद्ध ग्रंथ है ‘भविष्यवत’

‘भविष्यवत कहा’ एक व्यापारी पुत्र भविष्य  
की कथा है। इसकी तीन भागों में बांटा जा रहा  
है। पहले भाग में उसकी सम्पत्ति का वर्णन है।

नखशिखः—

(१) अमृत दन दीहर पार्ष्णि,  
नहमणि बिरण करंविष छायाहि ।

अंधोत्प गुग्मंतर पासई,  
मुणियत्तईं एिभीए परिवामई ।

पोतंतर अविभन्न पयामई,  
तं पिहंसति पिहिय परिहामई ।

बियटु नियंब बिबु सोहिल्लउ,  
रेहइ अडाइइ कडिल्लउ ।

रोमावलि बलि अणि विहावइ,  
विष पिपीलि रिछोलिव नावइ ।

रमणादाम निबंधणु सोहइ,  
किंकिण रणमणु मणु सोहइ ।

समचत्तवु बडियणु बिमु मज्झइ,  
मज्झइ करम मुद्धिहि मज्झइ ।

तिबलि तरंगईं नाहीमंडलू,  
नं आवत्ता इइ महाजलु ।

पीणुल्लय निबिडईं अणुवट्टइ,  
निम्भि दईं हारावलि वट्टईं ।

मावइ मावा कोमल—बाहउ,  
रयण—बहय—वेऊर सणाहउ १ ।

(विस्तार भय से हिन्दी सरलार्थ नहीं दिया जा  
सका)

(३) विरोधाभास अलंकारः—

असिखि सिखित्त सज्ज वरंग वरगणावि,  
मुद्धवि सविपार रज्जु सोह निरज्जुवि २ ।

धनहीन (असिखि) होते हुए भी वह श्रीमती  
(सिखित्त) थी। श्रेष्ठ अंगो वाली न होते हुए भी  
वह सज्ज वरंग (वरंगना) प्रसन्नयुक्त अंगो  
वाली थी। मुग्धा (मूर्ख) होते हुए भी विचारवान  
थी। निरंजन होने पर भी वह (रंजण सोह)  
अर्थात् अंजनरहित आलो वाली अत्यन्त मोहक  
लगती थी।

(४) भाषा में सुभाषितों और लोकोक्तियों  
की भरमार

(१) कि छिउ होइ विरोलिए पाणिए (क्या  
पानी का मयन करने से धो हो सकता है)?

(२) अणुइन्दियइ होति जिम दुत्तईं सहसा  
परिणावति तिह सोत्तई (जैसे स्वेच्छा से दुःख  
घाने हैं वैसे ही सहसा सुख भी आ जाते हैं) ।

(३) महो चद हो जोहू कि मज्झजइ दूरि हुय"  
(क्या दूरी होने पर भी अंधमा की ज्योत्स्ना मैत्री की  
जा सकती है)?

इसी प्रकार के अनेक प्रवाहपूर्ण वाग्वाग्मक  
स्थलों का उल्लेख किया जा सकता है। यह कृति  
निर्बेद (गात रम) में समान हुई है।

धनपाल द्वितीय—

ये ११ की सन्तारी के बरि ये धीर माववा मे  
हुए। महाराज भोज के सम्राटिन ये। धनपाल  
संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश के प्रवाद पंडित ये।

इन्होंने अपभ्रंश में प्रसिद्ध ग्रंथ 'निषक मंजरी'  
लिखा। धनपाल ने 'महावीर उन्माद' ३ एक गीत

१. यहो अणु, पृ० ३२-३३

२. वही, (११, ६.१०)

३. देखिये—सुसूचितमदाम टण्डन अभिनन्दन अणु, पृष्ठ ४०६-४११, निषक का "आदिशालीन  
हिन्दी जैन साहित्य की प्राचीनतम कृति, सत्यपुरीय महावीर उन्माद धीर उमरी भाषा  
शीघ्रक मय," सन् १९६० ।

भी राजस्थान में नांघोर सत्पुत्र में लिया। यह उत्तर अर्धश का है परन्तु अर्धश की प्रजाहात्म-ता इसमें देती जा सकती है। धनराज पर स्वतंत्र रूप में अन्य प्रकाश डाला जायगा।

रयनू:—

राजस्थान के अर्धश बहि रयनू ने अनेक वाङ्मयियों का सृजन किया। इन्होंने २९५ बह्वर्तों में पद्यरचना लिखा है। रंघ में रस रचा है, जो कविता में विद्यमान है। रयनू के अनेक भंडार में

इन वाङ्मयों के प्रतिरिक्त अनेक 'सोप' राजस्थान के अर्धश साहित्य में उत्तरार्ध-जिनमें कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं:—

१. नभनंदी-मुद्रसण चरित सं० ११०० (१ वाङ्मय) सत्त्वविधि निधानवाङ्मय सं० १२००।
२. सिंह पञ्चुण चरित (प्रचुम्भ चरित) सं० १२०० सगभग (संड वाङ्मय)
३. हरिहर सनतुमार चरित सं० १२११
४. सगभदेव एोमिगुह चरित, सं० १४००।

जाहे कंठ रेहतय लिजिय,  
संव समुद्दे घुड्डु एलजिय ।

जाहे धहरराए विद्धु भुगुण,  
जित्तउ जेणधरद कठिणत्तणु ।

जाहे दंसण कंतिए जियणिम्मल,  
तिप्पिहें ते पड्डु मुत्ताहल ।

जाहे साव सुरहि मणउ पावड,  
पवाणु तेण उव्विं विरुधावड ।

जाहे विमल मुह इद समामए,  
गि वडण खप्पर व सहि भासड ।

(सदमण चरित १)

(यदि ब्रह्मा उसकी रोमावली रूपी लोहे की शृंखला की सृष्टि नहीं करता, तो उसके मनोहारी और गुरु स्नानों के भार में कटि प्रदेश प्रवरय ही भग्न होता। जिसकी सुन्दर भुजाओं को देख कर सुन्दर हाथ रूपी पल्लवों की झलक बुझ भी इच्छा करता है। जिसके स्वर माधुर्य को सुन कर बोलिया श्यामा हो गई। जिसके कंठ की शैलाओं में रात को लज्जित कर समुद्र में डूबने की वाप्स कर दिया। जिसके होठों के रक्तिम राग में पराजित होकर विद्रुम बहोर हो गया। जिसके दाढ़ों की निर्मल क्रांति से विजित होकर निर्मल मुक्ता सीपियों में

छिद्र गये। जिसके मुखचंद्र के सामने, चन्द्रमा एक खप्पर की भांति लगता है।)

सकल विधिनिधान काव्य

भाषा के अनुरणन और विविध वाच्यों की ध्वनिया देखिए—

हुण कट क्रियट क्रियटर षट मुण  
खु खुंद खंद नखले वणुभि भ्रि  
कुं गिडं डु भ्रा भें घोमि डुधागि  
दुरट मट किति क्रिय क्रिय क्रियात्र  
हथ हप्पु लुलुलु लु क्रिय क्रिय  
धरि धरि धरि रि धरि तूय तूय  
तथु तथु तथु तथु

देते खदे खंद खंदगु  
विरिविरिविरि विरि धरि विरि रावहि  
भं भं भ्रिणि विटि भ्रिणि किति भावहि  
ठडू ठडू ठडू ठडू ठग ठुगे ठुगे ठगहि  
भि भि भि धी धी संजोगहि २

ऐसे शब्द बेजान मात्र बहि जा शब्द धमकार प्रदर्शित करने हैं।

२. पण्डुप्प चरित (प्रमुन्न चरित ३) (मिह)

“मय मंडु बरिणि अहि वेए बंडु,  
खर दंडु सरोरु गणि मंडु।

१. नयनंदी राजस्थान (मालवा) के धारा नगर निवासी कवि हैं तथा मंदगण चरित प्रपञ्च की प्रकाशित कृति है। इसकी तीन हस्तलिखित प्रतिया धामेर भण्डार में श्री कस्तूरचन्द कामजीवाल की संरक्षणा में विद्यमान हैं। यह काव्य १२ संधियों का है तथा इसका रचनाकाल स० ११०० है।

२. यह भी प्रकाशित काव्य है। कृति की प्रति धामेर भण्डार में सुरक्षित है। देखिये पन्ना ३४, १२-१३

३. यह काव्य प्रकाशित है। १४ संधियों में पूरा हुआ है। प्रतिया धामेर शास्त्र जगन्नाथ जयपुर में हैं। देखिये प्रति संख्या (पृष्ठ १३१-१३५)। इसके मिट्ट और मिट्ट दोनों नाम मिलते हैं। रचनाकाल १२ की शायी का पूर्वार्द्ध है।



जाहे बंठ रेहसय गिजिय,  
संग समुदे बुड्डु एलजिय ।

जाहे महराए विद्धुभगुण,  
मित्तउ जेणधरइ कठिणतणु ।

जाहे दंसए कंतिए जियणिम्मल,  
तिप्पिहें ते पड्डु मुत्ताहल ।

जाहे साम सुरहि मणउ पावड,  
पवणु तेण उळ्विं विरुपावड ।

जाहे विमल मुह इद मयामए,  
गि वउणु खप्परं व महि भावड ।

(मदमणु घरिउ १)

(यदि वरुणा उसकी रोमावली रूपी लोहे की श्रृंखला की सृष्टि नहीं करता, तो उसके मनोहारि और सुर रतनों के भार ने बटि प्रदेश अवश्य ही भग्न होना । जिसकी सुन्दर भुजाओं की देख कर सुन्दर हाथ रूपी पल्लवों की घसीक वृक्ष भी इच्छा करना है । जिसके खर माधुर्य की सुन कर कोविता रचामा हो गई । जिसके बठ की रेखाओं ने रांस की मज्जित कर समुद्र में डूबने की वाध्य कर दिया । जिसके होठों के रसिम राग ने पराजित होकर विद्रुम बटोर हो गया । जिसके दाढ़ों की निर्मल बानि से विजित होकर निर्मल मुक्ता सीरियों में

द्विर गये । जिसके मुखचंद्र के सामने चन्द्रमा ए खप्पर की भांति लगता है ।)

सकल विधिनिधान काव्य

भाषा के अनुरणन और विविध वाचों के ध्वनिया देसिए—

हुण कट जियट कियटर नट मुण  
खु खु द मर नरने नमुभि धि  
बु गिड डु भा भें घोमि दुपाग्नि  
दुरट मट किटि क्रिय क्रिय क्रियात्र  
हय हणु सुणुणु मु क्रिय क्रिय  
परि परि परि रि परि तूप लूप  
तणु तणु तणु तणु

देने मदे मर राडगु  
किरिदिरिदिरिदिरि परि परि किरि रात्रि  
भं भं भिणि किटि भिणि किटि भारहि  
टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं टुं  
भि भि भि जा जा मजोगहि १

ऐने रात्र केवल मात्र बवि का रात्र समन्वय

प्रदर्शित करते हैं ।

२ पण्डित घरिउ (मदमणु घरिउ १) (मिह)

“मय मंगु बरिणि जहि वेर बंठु,  
खर रंठु सरोरु मणि मंगुडु ।

१. नयनदो राजस्थान ( मानवा ) के धारा नगर निवासी कवि हैं तथा मदमणु घरिउ अर्धधरा की अर्धकावित्व कृति है । इसकी तीन हस्तलिखित प्रतिया धानेर भण्डार में श्री बसुरचन्द बागवोवाल की संरक्षणा में विद्यमान है । यह काव्य १२ मंथियों का है तथा इगवा रचनाकाल सं० ११०० है ।
२. यह भी अर्धकावित्व काव्य है । कृति की प्रति धानेर भण्डार में सुरक्षित है । देसिने पन्ना ३४, १२-१३
३. यह काव्य अर्धकावित्व है । १४ मंथियों में पूरा हुआ है । प्रतिया धानेर भण्डार भण्डार में है । देसिने प्रति संख्या ( पुठ १११-१३० ) । इसके मिह और मिह दोनो नाम मिलते हैं । रचनाकाल १२ की दश की दश है ।



जाहे षंठ रेहत्तय एिज्जिय,  
संख समुहे वुड्ड शंतज्जिय ।

जाहे घहरराएं विद्धभगुगु,  
जित्तउ जेणधरइ कठिणत्तगु ।

जाहे दंसण कांतिए जियणिम्मल,  
मिषिहें ते पइदु मुत्ताहल ।

आहे साम सुरहि मणउ पावइ,  
 पवण तेण उज्विं विरुधावइ ।

जाहे विमल मुह इद मयामए,  
गि बडण खणरं व महि भामइ ।

(संक्षेपेण चरितं १)

(यदि प्रजा उसकी रोमाशली रूपी लोहे की  
 पूंखना की सृष्टि नहीं करता, तो उसके मनोहारी  
 नीर मुख स्तनों के भार से बटि प्रदेश अवश्य ही  
 भग्न होता। जिसकी गुन्दर बुझाघी की देग बर  
 गुन्दर हाथ रूपी पल्लवों की भरोक वृक्ष भी इच्छा  
 करता है। जिसके खबर माधुर्य की सुन बर बोबिता  
 त्यामा हो गई। जिसके बठ की रेखाओं ने संत की  
 लज्जित बर समुद्र में दूबने की बाध्य बर दिया।  
 जिसके होठों के रसिम्न राग से पराजित होकर  
 बिद्रुम बटोर हो गया। जिसके दातों की निर्मल  
 बानि से बिजित होकर निर्मल सुवना तीरियों में

द्विप गये। जिनके मुखचंद्र के सामने, चन्द्रमा एक खप्पर की भांति लगता है।)

सकल विधिनिधान काव्य

भाषा के अनुरणन और विविध वाद्यों की ध्वनियाँ देखिए—

दुण कट त्रियट क्रियटर तट सुप  
 सु सु द सं नरवे त्रगुभिं धि  
 कुं गिद दु धा भें धोदि दुधादि  
 दुष्ट मट किटि त्रिय त्रिय त्रियात्र  
 हप हपु सुतुतु सु त्रिय त्रिय  
 परि परि परि रि परि त्रय त्रय  
 तपु तपु तपु तपु

देने लदे लंद लदललु  
 बिरिदिरिबिरिदिरि बिरि मरि बिरि रायहि  
 भं भ भिगिा बिटि भिगिा बिटि भायहि  
 टट्ट टट्ट टट्ट टट्ट ठग टुगे टुगे ङगहि  
 कि कि कि वा वा संबोपहि २

ऐसे शब्द वेदों में मान्य नहीं हैं। शब्द समझाने पर प्रदर्शित करते हैं ।

२. पञ्चमः खरित (प्रथमः खरित १) (मिह)

“मय संतु वरिणि त्रहि वेर वंष्टु,  
स्वर दंष्टु सरोरष्टु ममि मखंष्टु।

१. नयनदी राजस्थान (मालवा) के धारा नगर निवासी कवि हैं तथा मंदलगु घरिउ  
प्रभंश की प्रकाशित कृति है। इसकी तीन हस्तलिखित प्रतियाँ घामेर मण्डार में  
श्री वस्तुरचन्द बागजीवान की संरक्षता में विद्यमान हैं। यह काव्य १२ मंत्रियों का है  
तथा इसका रचनाकाल सं० ११०० ई. है।

२. यह भी धप्रवाशित राज्य है। वृत्ति की प्रति घामेर नगहार में सुरक्षित है। दक्षिण  
पन्ना ३४, १२-१३

३ यह शायद धर्मशास्त्र है। १४ संक्षिप्त में पूरा हुआ है। प्रतिमा धर्मर  
जयपुर में है। देखिये प्रति संख्या (पृष्ठ १११-१३०)। इसके सिद्ध प्रमाण  
मिलते हैं। रचनाशाला १८ वीं शती का दर्ज है।

जहि वने बहु विगतु मरीर,  
 धनदातु सगु जग दातु भीर ।  
 पदु सगु सगु विमलु हसत,  
 बर लखी दीनि धनदातु हसत ।  
 हन विमलु सगुनि देवसेनु,  
 मरि विमलसेनु विन पीतसेनु ।  
 धनदातुदातु सगु जग हसत,  
 धनदातु सगु जहि सुनिहसत ।  
 विन विमलु विमलु बहु धनदातु,  
 बरिनि विमलु हति कृतदातुदातु ।

हृत्पत्र को प्रगाढ़ता करना, रोगों का निवृत्ति होना, उठ उठ कर हार तोड़ना, बापों को न भूलना वगैरह जड़ित मनो को मोदना आदि सब कार्य-कलापों में उत्तम की दमतीय शक्ति का सहायक होता है। सर्वांग बढ़ा ही रोमांचक है। शरीर-मजबूत नारी की पीछा धरती में गहरा तब जोर पड़ता है।) तथा उद्वेलन में नारी-विशेष सर्वांग को उत्तम भावित करता हुआ है।

४ संविधान परिषद् (नेमनाम गरिन्)  
(सभामा देव निर्दिष्ट)

त्मक समृद्धि का अनुमान लगाया जा सकता है। इन कृतियों का कलापक्ष अपने ही ढंग का है। इनमें महापुराण, पुराण, चरित काव्य, रूपक काव्य, कथात्मक शृंगारिक सण्डकाव्य, संधिकाव्य, रास आदि अनेक काव्य रूप हैं। इनकी कलात्मकता, ऐतिहासिकता तथा काव्य रूपों पर सामान्य जानकारी इस प्रकार दी जा सकती है। इनको इन प्रबन्ध बाध्यों की सामान्य विशेषताएं कही जा सकती हैं। ये इस प्रकार हैं :—

### राजस्थान के अपभ्रंश काव्यों का कलापक्ष

राजस्थान के अपभ्रंश के प्रबन्ध बाध्यों का कलापक्ष छंद, अलंकार, दण्ड-चपन भाषा आदि सभी रूपों में पूर्ण है। ये कवि कला के प्रति सच्चा प्रेम करते थे। यहाँ तक कि इन जैन कवियों को इतना अधिक प्रेम था कि अनेक अजैन कवियों के ग्रन्थों की भी इन कवियों ने अपने भंडारों में सुरक्षित रखा है। बौद्ध रचनाएँ, अमुल रहमान का संदेश रासक तथा बीसलदेव रास ग्रन्थ इस बात के अवलत उदाहरण हैं।

राजस्थान की अपभ्रंश बाध्य पद्धतियों में दोहा-बोपाई पद्धति की प्राधान्य मिला है। अपभ्रंश बाध्यों में तोटक, दोषक, अटिल्ल, टोपा, इहुगुप्ता, पट्ट-हिया, रास, भुण्डली, बरुन, घत्ता, रहु, रासाकुल, पादाकुल, पगभटिका, प्लवंग मुजगप्रदान आदि अनेक छंद मिलते हैं। यही नहीं, छंदों और वर्णन की बाध्य पद्धतियों ने हिन्दी साहित्य के प्राधुनिक बान तक को प्रभावित किया है।

इसी प्रकार कला पक्ष में स्वाभाविक अलंकारों, दण्ड चपन की अनुप्रासमयिकता, गारापकता तथा अन्वयात्मकता का अमूर्तलन दृश्य है। जैनियों ने ही नहीं, अनेक अजैन कवियों ने भी राजस्थान तथा पञ्जाब के बाहर अपभ्रंश में काव्य रचना की है।

अतः इनका कलापक्ष भावपक्ष में निर्बल नहीं है। चंद की चारण शैली में अपभ्रंश के अंशों से इस भाषा की शमता का परिचय मिलता है।

### राजस्थानी अपभ्रंश काव्यों में काव्य रूप

प्रादिकानीन हिन्दी जैन साहित्य में जिस प्रकार पद्धतियों और काव्य रूपों में वैविध्य मिलता है ठीक उसी प्रकार राजस्थान के अपभ्रंश काव्यों में भी काव्य रूपों का वैविध्य मिल जाता है। चरित, रास, प्राग्यान, चर्चरी, कथा, संधि, लोच-कथा-काव्य आदि अनेक काव्य रूप मिलते हैं। अपभ्रंश के इन काव्य रूपों का मूल इन पुरानी हिन्दी के काव्य-रूपों में दृष्टि-गोचर होता है। यद्यपि इनमें से अनेक काव्य रूप अपभ्रंश में नहीं मिलते परन्तु उनमें प्रकारान्तर से इनका सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है। काव्य पद्धतियों में भी अपभ्रंश की इन वर्णन पद्धतियों का विवरण पुरानी हिन्दी की रचनाओं के मूल में है। रूपक-काव्य, संधिकाव्य तथा चरित-काव्यों में ये काव्य रूप स्पष्ट दृश्य हैं। मुक्तक काव्यों में नीति, स्तोत्र, स्तवन, दोहा, सगभाष आदि अनेक काव्य रूप मिल जाते हैं। इस तरह वैविध्य भूतक काव्य रूप अपभ्रंश की इन पद्धतियों में देखने को मिलते हैं। काव्य रूपों का यह वैविध्य अपभ्रंश की अपनी विशेषता है। पुरानी हिन्दी में जो अनेकों प्रकार के काव्य रूप मिलते हैं उनमें वैविध्य प्रस्तुत करने की प्रेरणा अपभ्रंश के इसी काव्य रूपों ने दी है।

### राजस्थान के अपभ्रंश की ऐतिहासिकता

राजस्थान की अपभ्रंश रचनाएँ अपनी ऐतिहासिकता का प्रतिपादन भी करती हैं। इन रचनाओं के द्वारा लक्ष्मीनारायण, सम्राट और अमृत के साथ लक्ष्मी का ऐतिहासिक महान् काल का वर्णन है। अपभ्रंश की कथा कहिरा, बन्धु विद्या, अर्जुन



हैं परन्तु यहाँ हम प्रमुख रूप से तीन कवियों के मुक्तक काव्यों को सोझरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये कवि राजस्थान के अग्रभ्रंश भाषा के मुक्तक काव्यकारों में प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। ये निम्नांकित हैं :—

१. जोइन्दु—परमप्यमासु (परमात्म प्रकाश)¹

२. मुनिरामसिंह—पाहुड दोहा²

१. देवसेन साधय धम्म दोहा

इसके अतिरिक्त जिनदत्त के उपदेश रमायन रास (सं० ११००-१२) हेमचन्द्र के प्राकृत व्याकरण (१२००) के अग्रभ्रंश के दोहे, सोमप्रभाचार्य का कुमारपाव प्रतिबोध (सं० ११६५) तथा मेरुतुल के प्रबन्ध चितामणि (सं० १३६१) आदि के अग्रभ्रंश अंशों को भी इस प्रसंग में विस्मृत नहीं किया जा सकता। साथ ही अग्रभ्रंश के हरिवेल के कथाकाव्य धम्म परिवला सं० १०४४ और राजस्थान में विरचित अग्रभ्रंश की अनेक गद्य कृतियों पर भी अग्रभ्रंश रूप में विस्तार में लिखा जा सकता है। जिस पर हम यथावसर अग्रभ्रंश विचार करेंगे। यह सब सम्पत्ति राजस्थान में उत्पन्न कवियों की निधि है। यहाँ उक्त तीनों कवियों के काव्य जीवन के कतिपय चुने हुए उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये पद्य मुक्तक

काव्य हैं तथा इनके वर्ण्य विषय आध्यात्मिक, उपदेश प्रधान तथा शांत रंग पूर्ण हैं।

जोइन्दु:—१. परमप्यमासु (परमात्म प्रकाश) योगिन्दु

१. योगसार

परमप्यमासु

(२) अणु जि ति त्पु म जाहि जिय अणु जि गद्यम म मेनि

अणु जि देउ म चिति तुहुं अणा विमन्नु मुएवि (१६५)

(निर्मल स्वभाव वाले उम परमात्मा को छोड़कर तीर्थ यात्रा, छुट्टेवा तथा किसी भी अन्य देवता की शोचना व्यर्थ है)

(२) जमु हरिणभरी दिवसइए तगुएनि बंभु विचारि एवहि केम संमति बड वे संडा पडिचारि (१.१२१)

(जिनके हृदय में मृगनयनी मुँदरी निवास करती है वह ब्रह्मविचार कैसे कर सकता है? एक ही म्यान में दो तनवार कैसे रह सकती हैं?)

(३) अं दिहामृगमणि ते अणवणि न दिट्ट तें बारणि बड धम्मु बरि धणि ओम्भणि बड निट्ट (२.१३२)

१. देखिये परमप्यमासु—योगिन्दु—डा० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये द्वारा सम्पादित सन् १६३० रचनाकार का समय श्री राहुलजी ने १००० ई० माना है। ये हेमचन्द्र के पढ़ने हुए थे। इनका जन्म स्थान राहुलजी ने राजस्थान माना है। जोइन्दु जैन मुनि थे। इनका दोनों ग्रन्थों के वर्ण्य विषय ज्ञान, समाधि, अत्यन्त निरंजन, आत्मा परम तत्त्व, निरंजन योग, पंच, पोषी पत्रो, निन्दा भूयध्यान, योगभावना आदि हैं।

२. देखिये पाहुड दोहा, सम्पादक—डा० हीरालाल जैन बारेंडा सोरोज सन् १९३३। मुनि रामसिंह राजस्थान के थे। राहुलजी इनका समय सन् १००० ई० मानते हैं। इनका वर्ण्य विषय—जगन्पूज, निरंजन साधना, आत्मा, पापघ्न सन्तन, गुरु महिमा, वात्स्यायन्य निन्दा आदि हैं। डा० हीरालाल जैन इनको राजस्थानी का मानते हैं। साथ ही देखिये—हृदी काव्य धारा, श्री राहुल साहसराजन—बिनाब महम इनका सन् १९६४



हैं परन्तु यहाँ हम प्रमुख रूप से तीन कवियों के मुक्तक काव्यों को सोदरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये कवि राजस्थान के अग्रभद्र भाषा के मुक्तक काव्यकारों में प्रतिनिधि बड़े जा सकते हैं। ये निम्नांकित हैं :—

१. जोड़न्दु—परमप्ययामु (परमात्म प्रकाश)¹

२. मुनिरामसिंह—पाहुट दोहा²

१. देवसेन सावय धम्म दोहा

इनके अतिरिक्त जिनदत्त के उपदेश रमायन रास (सं० ११००-१२) हेमचंद्र के प्राकृत व्याकरण (१२००) के अग्रभद्र का दोहा, सोमप्रभाचार्य का कुमारवान प्रतिबोध (सं० ११६५) तथा मेरुतुल्ल के अग्रभद्र चित्तामणि (सं० १३६१) आदि के अग्रभद्र अंशों को भी इस प्रसंग में विस्मृत नहीं किया जा सकता। साथ ही अग्रभद्र के हरिवेण के बयाबाध्य धम्म परिवला सं० १०४४ और राजस्थान में विरचित अग्रभद्र की अनेक गद्य कृतियों पर भी अपेक्षित रूप में विस्तार में लिखा जा सकता है। जिस पर हम यथावसर धन्य विचार करेंगे। यह सब सम्प्रति राजस्थान में उत्पन्न कवियों की निधि है। यहाँ उक्त तीनों कवियों के काव्य बीज के कतिपय छन्दे हुए उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं। ये ग्रंथ मुक्तक

काव्य है तथा इनके वर्ण्य विषय आध्यात्मिक, उपदेश प्रधान तथा शांत रस पूर्ण हैं।

जोड़न्दु:—१. परमप्ययामु (परमात्म प्रकाश) योगिन्दु

१. योगसार

परमप्ययामु

(२) अणु जि ति त्थु म जाहि जिय अणु जि गरुम म मेवि

अणु जि देउ म चिति तुहुं अणु विमन्नु सुएवि (१.१५)

(निर्मल स्वभाव वाले उस परमात्मा को छोड़कर तीर्थ यात्रा, गुरुदेवा तथा किसी भी अन्य देवता को मोक्षदा अर्थ है)

(२) जमु हरिणन्दो दिपवडए तमु एरि बंधु विपारि एवहि केम संमति बड के मंडा पडिपारि (१.१२१)

(जिसके हृदय में सुगन्धनी मुंदरी निवास करती है वह ब्रह्मविचार कैसे कर सकता है? एक ही स्थान में दो तनवार कैसे रह सकती है?)

(३) जे दिट्ठामूरगमणि ते अणवणि न दिट्ठ तें बारणि बड धम्म बरि धणि ओधणि बउ निट्ठ (२.१३२)

१. देखिये परमप्ययामु-योगिन्दु—डा० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्वे द्वारा सम्पादित मन् १६३० रचनाकार का समय श्री राहुलजी ने १००० ई० माना है। ये हेमचंद्र के पहले हुए थे। इनका जन्म स्थान राहुलजी ने राजस्थान माना है। जोड़न्दु जैन मुनि थे। इनके दोनों ग्रन्थों के वर्ण्य विषय ज्ञान, समाधि, धन्य निरंजन, आत्मा परम तत्त्व, निरंजन योग, पय, पोषी पत्रो, निन्दा शून्यस्थान, योगभावना आदि हैं।

२. देखिये पाहुट दोहा, सम्पादक—डा० हरालाल जैन बारंजा मोरार मन् १२१३। मुनि रामसिंह राजस्थान के थे। राहुलजी इनका समय मन् १००० ई० मानते हैं। इनके वर्ण्य विषय निरंजन साधना, आत्मा, पापघ्न स्थान, गुरु महिमा, बाबादास निन्दा, हरालाल जैन इनको राजस्थानी का मानते हैं। साथ ही देखिये—हमारे माहान्यादन-विनाय महान इन्द्रादाय मन् १६४६



(२) मणु यत्तणु दुल्लह सहिबि भोयहं बेरिउ जेण  
ईयण कज्जे कण्णयस मूव हो खंडिउ तेण  
(वही दोहा २१६)

(मनुष्य दुर्लभ सन को प्राप्त करके भी जिसने उसको भागो में लिप्त किया उसने ईश्वर के लिए कल्पवृक्ष का समूचीच्छेदन कर डाला, ऐसा समझो)

इस प्रकार उक्त उद्धरणों में हम इन कृतियों का शिल्प समझ सकते हैं। अथर्वश की इन रचनाओं की मुख्य प्रवृत्तियों का विस्तारण सधेर में इस प्रकार किया जा सकता है।

### राजस्थान के अथर्वश मुक्तक काव्य

उक्त मुक्तक रचनाओं में दार्ष्टान्तिक रचनाएं प्रमुख हैं। इनमें कवि ने संसार की नश्वरता, मुक्ति का स्वरूप, आत्म-दर्शन, आत्म-ज्ञान, कर्म-विपाक, विषय निवृत्ति और वैकल्य का सुन्दर वर्णन किया है। ऐसी रचनाओं में जो इन्द्रु का परमात्म प्रकाश और मुनिरामनिह कृत पाटुह दोहा प्रमुख कृतिया हैं। दार्ष्टान्तिक उपदेशों के साथ जैन कवियों ने आत्म-गुडि और सदाचार की भी पूर्ण महत्व दिया है। नीति और सदाचार से ही मनुष्य जितना आत्म-निष्ठ साधक बनकर सतीविकारों को दूर कर सकता है उतना तब और तृप्ति तथा बाह्यद्वन्द्व में नहीं। ऐसी रचनाओं में देवमेन का "साधय धम्म दोहा" और जिनदत्त सूरि का "काल स्वरूप कुलक" और उपदेश रमागन राम प्रमुख हैं। इन कवियों का मुख्य उद्देश्य धर्म विस्तारण करना तथा प्रचार है।

उपदेश प्रधान रचनाओं में दूसरा स्थान रत्नो, रत्नबन सगंधी रचनाओं का आता है। अथर्वश के संघिषय, अमय देवमूरकृत जितुण रत्नो तथा बर्ममूरकृत ऐसी ही रचनाएं हैं। जिनदत्त सूरि की बर्बरी भी प्रसिद्ध गान तथा कृत है।

अथर्वश में रची कुछ उपदेश प्रधान रचनाएं बौद्ध और सिद्धों की भी मिलती हैं। जिनमें वेवव बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। बौद्धों ने इन मुक्तक रचनाओं में कर्मकाण्ड रुढ़िवादी दृष्टिकोण तथा बाह्यद्वन्द्व की खूब निन्दा की है। इन्हीं बौद्धों में दोहाकोश, चर्याद तथा बर्ममीर दर्शन पर लिखे कुछ श्रौंको के सिद्धान्त भी मिलते हैं। जिनमें कई फूटकर पदों में विषय वैविध्य, भावों की तीव्रता तथा अभिव्यक्ति की शक्ति मिलती है। इस प्रकार जैन धर्म दोनो अथर्वश प्रधान काव्यों में उपदेश प्रधान, धर्म प्रधान, नीति तथा सदाचार प्रधान भावनाएं ही मिलती हैं। ये सब उपदेश जनता को सदाचारी बनाने के लिए जनता की ही भाषा में लिखे गये थे। अतः जैन कवियों ने अथर्वश भाषा की ही प्रयोग की। क्योंकि अथर्वश उस समय जन साधारण की बोधधान की भाषा थी।

जैन कवियों ने जितने भी काव्य लिखे हैं उन सभी में धर्म प्रत्यक्ष के रूप में विद्यमान है। उदाहरणार्थ चरित काव्यों की ही में इनमें कथा-त्मकता, प्रेमास्थान, मोक्ष मायाएं तो रहती ही हैं, कवियों ने उनमें स्थानीय रंग, समाज की परम्पराएं, प्रेम तथा मोक्ष कथाओं की रंगीनियों द्वारा मर्म बना डाला है। धर्म उनके मूल में है। प्रेरणा के रूप में यह धर्म इन रचनाओं में विद्यमान है। बड़ी बड़ी तो यह धर्म रचनाओं की पुनर्पुनः तथा बन जाता है। कर्म-विपाक, पुनर्जन्म दर्शन और दर्शन की विविध धाराओं का जन समाज में प्रचार करने के लिए जैन कवि काव्यों में अनेक स्वरों में उपदेश बनाया होना पड़ता है। उपदेश और जैन दर्शन के ये रूप उनके कवि में प्रचारक बना देते हैं। डॉ॰ कोटल के कथादर्श की रचना का अन्वय जैनियों के कर्म-विपाक का सिद्धान्त दर्शाता है। ऐसी की सिद्ध करने के लिए जैन कवि दर्शन के दर्शन

## हृदय-वेदा

की प्रीति कर उसे सीखा से तोर मोह दो से ।  
 ली कर्म सिद्धांत की दृष्टि के लिए जैन कवि स्वयं से  
 वह दुर्लभ-महात्मा का स्थापना किया है । अन्तर्गत  
 साहित्य की रचना की तुल्यता प्राप्त धर्म प्रचार है ।  
 जैन धर्म का प्रचार है फिर कवि ।

जैन कविओं ने महापुरुषों की प्रीति से  
 देव जन्म का प्रचार है । अन्तः ज्ञान का प्रचार है ।

जैन धर्म का प्रचार मात्र पर साधारण है  
 ली कवि का प्रचार है । वह कवि का प्रचार है  
 कि प्रचार है। वह भी जैन कवि ने समाज के  
 लक्षण में प्रचार दिया है। जैन कवि ने समाज के  
 ली है। वह भी जैन कवि ने समाज के  
 ली कवि ने साधारण पर प्रचार है ।

जैन धर्म का प्रचार है। वह भी जैन कवि ने समाज के  
 ली कवि ने साधारण पर प्रचार है ।  
 ली कवि ने साधारण पर प्रचार है ।  
 ली कवि ने साधारण पर प्रचार है ।

# जैन-साहित्य

लेखक—श्री अग्रचन्द्र नाहटा

**रा**जस्थानी जैन साहित्य बहुत विद्याल एवं विविध है। विद्याल इतना कि परिमाण में मेरी धारणा के अनुसार चारणों के साहित्य में भी बाजी मार लेगा। उसकी मौलिक विविधताएं भी कम नहीं हैं। उसकी सबसे प्रथम विविधता यह है कि वह जन भाषा में लिखा है। अतः वह सरल है। चारणों आदि ने जिस प्रकार शब्दों को तोड़-मरोड़ कर ध्वनि संघों की भाषा को दुरुह बना लिया है वैसे जैन विद्वानों ने नहीं किया है। इसीलिए वह बहुत अधिक लोगों द्वारा सुगमता से समझा जा सकता है। उसकी दूसरी विविधता है जीवन की उच्च-स्तर पर से जाने वाले प्राणवान् साहित्य की प्रचुरता। जैन मुनियों का जीवन निवृत्ति-प्रधान था। वे किसी राजाओं आदि के आश्रित नहीं थे, जिसमें कि उन्हें बड़ा-बड़ा खाटुकारी वर्णन करने की आवश्यकता होनी। बुद्ध में प्रोत्साहित करना भी उनका धर्म नहीं था और भृंगार रसीप्यादिक साहित्य द्वारा जनता को विकसित की और अक्षर बनाना भी उनके आचार-विरोध था। अतः उन्होंने जनता के उपयोगी और उनके जीवन को उंचे उठाने वाले साहित्य का ही निर्माण किया। चारणों का साहित्य धीररस प्रधान है और उसके बाद भृंगार रस का स्थान आता है। भक्ति रचनाएं भी उनकी बुद्ध प्राण्य है। पर जैन साहित्य नैतिकता और धर्म प्रधान है और शान्त रस की सुगमता तो सर्वत्र पाई जाती है। जैन विद्वानों का उद्देश्य जन-जीवन में आध्यात्मिक जागृति प्रेरणा था। नैतिक और धर्मपूर्ण जीवन ही उनका धर्म मर्य था। उन्होंने अपने रस उद्देश्य

के लिए कथानकों को विशेष रूप में अपनाया। तत्त्वज्ञान मूला एवं कठिन विषय है। साधारण जनता को वहाँ तक पहुँच नहीं और न उसमें उनकी रुचि बरम हो सकती है। उनको तो दृष्टान्तों के द्वारा धर्म का मर्म समझाया जाय, तभी उनके हृदय को वह धर्म छू सकता है। कथा—कहानी सबसे अधिक लोक-प्रिय होने का कारण उनके द्वारा धार्मिक तत्वों का प्रचार प्रीतिता में हो सकता है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने दान, शीत, तप और भावना एवं इसी प्रकार के अन्य धार्मिक व्रत-नियमों का महात्म्य प्रगट करने वाले कथानकों को धर्म-प्रचार का माध्यम बनाया। इनके परभाव जैन तीर्थंकरों एवं आचार्यों के गुणवर्णनात्मक एवं ऐतिहासिक काव्यों का नमूना आता है। इनमें जनता के सामने महापुरुषों के जीवन-मार्ग सत्य रूप में उपस्थित होते हैं। इन दोनों प्रकार के साहित्य में जनता को अपने जीवन का सुधारने में एक नैतिक तथा धार्मिक मार्गों में परिपूर्ण करने में बड़ी प्रेरणा मिली।

राजस्थानी-जैन-साहित्य का महत्त्व के सम्बन्ध में दो बातें उल्लेखनीय हैं—प्रथम : भाषा-विज्ञान की दृष्टि में उसका महत्त्व है, द्वितीय : १३ की में १५ की शताब्दी तक के अनेक राजस्थानी स्वतन्त्र राज्य उपरस्थ नहीं है। उसकी पुर्न राज्य-स्थानी-जैन-साहित्य करता है। अतः जैन राज-स्थानी भाषा के विकास के कुछ राजस्थानी-जैन-साहित्य द्वारा ही प्राप्त होते हैं, क्योंकि जब से राजस्थानी भाषा में कवियों का निर्माण आरम्भ हुआ तब से



बालावबोध, हेम ध्याकरण भाषा टीका, सारस्वत बालावबोध ।

२. छंदः—विगन शिरोमणि, ब्रह्मचन्द्रिका, राजस्थानी गीतो का छन्द ग्रन्थ, वृत्त रत्नाकर बालावबोध ।

३. अलंकारः—वाग्भट्टालंकार बालावबोध, विदग्धमुखमंडन बालावबोध, रसिकप्रिया बालावबोध ।

४. काव्य टीकाएं—भर्तृहरिसातक, भाषा-टीकात्रय, धमर सातक, लघुस्तव बालावबोध, विमल स्वमणी केन की ६ टीकाएं, धूलस्थान कयामार, बादम्बरी कयामार ।

५. पद्यकः—माधवनिदान टब्बा, सत्रिरात कलिका टब्बाद्वय, पद्यानन्द टब्बा, रंजजीवन टब्बा, सातस्त्रीकी टब्बा, कुटुंबर प्रयोगों के संग्रह तो राजस्थानी भाषा में हजारों पत्र प्राप्त हैं ।

६. गणितः—सीतावती भाषा बीरार्द्र, गणित सार बीरार्द्र ।

७. ज्योतिष—लघुजातक, वचनिका, जातक वर्णपट्टि बालावबोध, विवाहपट्टन बालावबोध, शुक्ल दीपक बालावबोध, चमत्कार चिन्तामणि बालावबोध, मुहूर्त चिन्तामणि बालावबोध, विवाहपट्टन भाषा, गणित साठीसो, पंचांग नयन बीरार्द्र, शुक्ल दीपिका बीरार्द्र, धंगपुररत्न बीरार्द्र, वर्णपत्राकन सञ्जाय ।

हीरकलश—राजस्थानी दोहो आदि में यह ज्योतिष सम्बन्धी ग्रन्थ महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । इसकी रचना सं० १६५७ में हीरकलश नामक खरनर पद्यीय जैन दत्त ने की है । पद्यसंख्या १००० के लगभग है । इसे साराभाई मण्डिराव नशाब ने दुर्गराजी बिरेबन के माध्व ग्रन्थमाला में प्रकाशित भी कर दिया है ।

८. नीतिः—चाणक्यनीतिटब्बा, पंचाख्यान—बीरार्द्र । मन्त्रालाक प्रनमोहृत्यनी यह कारसी ग्रन्थ 'नीति प्रकाश' के नाम से मुहणोत संग्रामसिंह रचित उल्लम्ब हुमा है जो बहुत ही महत्वपूर्ण है । पंचाख्यान का गद्य में अनुवाद भी मिला है । जोधपुर से 'परम्परा' मासिक में यह प्रकाशित हो रहा है । एक दोहा सार भी प्राप्त है जो बहुत सुन्दर है ।

९. ऐतिहासिक—मुहणोत नैगमी की खान तो राजस्थान के इतिहास के लिए प्रनमोह ग्रन्थ है । यह सर्व विदित है । मुहणोत नैगमी जैन धावक थे । इन्होंने मारवाड के ग्रामों के सम्बन्ध में एक घोर भी महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखा है, जिसकी प्रति उनके वंशज बुद्धराज जी के भतीजे बुधराज जी मुहणोत के पास है । इस ग्रंथ को प्रारम्भ में लाना अत्यन्त आवश्यक है । नैगमी की खान का कुछ भंग मूल रूप में पं० रामबर्णजी ग्रामीणा ने दो भागों में प्रकाशित किया है । अभी उसका एक सुन्दर संस्करण राजस्थान पुरातन मंदिर में छपा है । जिसका सम्पादन श्री बदरी प्रसाद जी साबिरया कर रहे हैं । राठौड़ धर्मसिंह की शान भी समकालीन जैन-दत्त लिखित मेरे संग्रह में है । जिसे मैंने 'भारतीय विद्या' में प्रकाशित कर दिया है । राठौड़ों की खान घोर बंदाखनिया जैन मतियों द्वारा लिखित ग्रन्थ है । जोधपुर के गांवों की उदर संबंधी हकीकत जयपुर के श्रीगुम्पजी के पास है, जिसकी प्रतिनिधि मेरे संग्रह में है । बाहमेर के दत्त इन्द्रचन्द्रजी के संग्रह में बेतदग्रन्थीय जिनमसुन्दर रचित राठौड़-बंदाखनी मैंने देखी थी । लुनागु रावों, माराबाद बीरार्द्र, जैनचन्द्र प्रबोध बीरार्द्र आदि अन्य विद्वत् ऐतिहासिक तो नहीं, पर साराभाई के आधार में ऐतिहासिक ऐतिहासिक है । वर्णपट्टन ग्रन्थ बीरार्द्र में बीरार्द्र के ऐतिहासिक की कई बातें लिखित होती हैं । जैनवादी, धावकी, लंकी, देव नगर वर्णन में बदरी

१. प्रथम भाग प्रकाशित हो चुका है । द्वितीय छप गया है । तीसरा ही प्रकाशित होगा ।



हैं जिनमें तीन अपूर्ण हैं। उनमें भी विविध विषयों का वर्णन बहुत ही मनोहर है। इनका परिचय मैत्रवर्ण्य लेख द्वारा राजस्थान भारती में प्रकाशित कर चुका हूँ। मुनि जिनविजयजी से १७ वीं शताब्दी के मुकवि मूरचन्द्र रचित पदैक-विषाति नामक ग्रन्थ की एक अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है। ग्रन्थ संस्कृत में है। पर प्रासंगिक वर्णन राजस्थानी गद्य में ही दिया है, जो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। ग्रन्थ की पूर्ण प्रति प्राप्त होने पर इसका महत्त्व भली भाँति ही विदित हो सकेगा। पद्य में दुष्काव वर्णन, दौत-ताप भर्णन आदि रचनाएँ प्राप्त हैं। नगर-देश वर्णनात्मक पद्यबद्ध रचनाएँ भी विद्वानों की अनेक मिलती हैं।

(१८) सम्वादः—सम्वादमंजक जैन रचनाओं में बहुत सी का सम्बन्ध जैन धर्म से नहीं है। इनमें कवियों ने अपनी सूझ एवं कवि प्रतिभा का परिचय अनेक रूप में दिया है। मोती कपासिया सम्वाद, जीम-दात सम्वाद, आल-जान सम्वाद, उद्यम-कर्म सम्वाद, घोवन-जरा सम्वाद, लोचन-बाजल सम्वाद आदि रचनाएँ उत्कृष्ट योग्य हैं।

(१९) देव-देवियों के छंदः—लोकमान्य कई यश, यतिदत्त आदि घर, विपुर आदि देवों की स्तुतिरूप छन्द, जैन यतियों द्वारा रचित बहुत से मिलते हैं। उन देवों-देवताओं का जैन-धर्म में कोई सम्बन्ध नहीं है। रामदेव जी, पादूजी, मूरबजी और कमरमिह जी आदि की स्तुतिरूप भी कई रचनाएँ मिलती हैं।

(२०) लोकवाणीयें संछन्द्यी ग्रन्थः—लोक साहित्य के सरक्षण में जैन विद्वानों की सेवा अतुल्य है। मैत्रजी लोकवाणीयों को उन्होंने अपने दन्तों में सहे हैं। एक २ लोकवाणीयों के सम्बन्ध में संछन्द्य एव लोक भाषा में उनके बहुत से दन्त

उपलब्ध हैं। बहुत सी लोकवाणीयें तो यदि वे अपनाते तो विस्मृति के गर्भ में कभी की विनीत हो जाती। यहाँ राजस्थानी भाषा में रचित कुछ लोकवाणीयों की सूची दी जा रही है—

छंदबध चरित	कर्ता	विजयमसुद्र, रूपचन्द्र
कपूर मंजरी	„	मतिमार
गोरा बादल	„	हेमरत्न, लक्ष्मोदय
चन्दनमलयगिरि	„	भद्रमेन, शोमहर्ष, जिनहर्ष
		मुधनिहंम, यनोदधन,
ढोला मार	„	कुशन नाभ
नदबतीमो घोड़ा	„	मिह कुशनगणि जिनहर्ष
पनहरवी बनाराम	„	वीरचन्द्र
पचारूपान	„	बकराराज, हीरकलक्ष
प्रियमेनक	„	समयगुन्दर, मानसागर
भोज-चरित	„	मानदेव, तारग, हेमानन्द
		कुशनधीर ।

( देखें ना. प्र. पत्रिका में प्रकाशित मेरा लेख )

विजय चरित्र—महाराजा विजय की दान-वीनता, पराक्रम एवं बुद्धिमान्य लोक साहित्य में सबसे अधिक प्रचारित है। भारतीय प्रदेश का भाषा में विजय संबंधी लोक कथाओं का प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। मर-मुर्दर भाषा में भी करीब ४५ रचनाएँ प्राप्त हो चुकी हैं। यहाँ उनमें थोड़ी सी राजस्थानी रचनाओं का उल्लेख किया जा रहा है। विद्वान् जानने के लिए मेरे विजयसाहित्य संबंधी जैन साहित्य ( विजय स्मृति ग्रन्थ में ) देवता चरित्रे ।

दन्व नाम	कर्ता नाम
विजय चौगडी,	हेमानन्द, मुनिमान
पद्म दत्त चौगडी,	विजयमसुद्र, लक्ष्मोदय, मानहर्षन

मिहान्न दम्भी, मन्दचन्द्र, इन्द्रचन्द्र, विजयमसुद्र, हीरकलक्ष, विजयनाम

मानस चोर बीरार्ज, रात्रावन, धर्ममोम, लाम  
बर्धन ।

मोह बना दम्पती वनिज दम्प दह है :—

मीनारती बीरार्ज, बरबदुरि मित्र कुलननाम  
विद्या विमान बना, हिरानंदपुरि, धामापुरा,  
मानदामन, रात्रिदि, विन-  
हर्ष, धर्मोदयन ।

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

विद्या विमान बना, ललाचार्ज, गारुण

मे "जैन दुर्वर बनिमो" भाग ३ के परिशिष्ट  
में दृष्ट १८३३ से २१०४ तक में ही है ।  
की संख्या २१०० के लगभग है । जिसमें  
के बरीब लो रात्रिपानी मोहनीतो की है ।

(२१) जैनियों के मान्य देवों पर  
विद्याना ने कुछ संशय बसाये हैं जिसका उल्लेख  
किया जा चुका है । देखो सामाजी, द्वापारी  
सामाज्य इत्ये मुख्य हैं । और भी जैनिय संशय  
मोहनीतोतो विद्याना पर पुनरुत्तर माहित्य बहुत  
जैन परिषद द्वारा किया गया है । जैनियों  
की भी ऐसा विषय नहीं जिस पर जैन (सामाज्य)  
रचनाया व्यापारित न मिले ।

सामाज्यी जैन रचनाओं की विविधता का  
के लिए उन रचनाओं की विविधता बरतण में  
पर दृष्टि दायता ही कारण होता । माननीय विद्याना  
परिचय में १८३३ से १८४४ तक का है ।

इन मध्यवर्ती ४०० वर्षों में जैन विद्वानों ने निरंतर राजस्थानी में रचना की है और वे छोटी-मोटी शताधिक संख्या में हैं। पद्य-साहित्य के साथ-२ इस समय की गद्य रचनाएं भी प्रचुर हैं। जबकि १७ वीं शताब्दी से पहले की जैनतर गद्य राजस्थानी रचना स्वतन्त्र रूप से एक भी प्राप्त नहीं है। केवल अचनदास खीची की वचनिका में गद्य के थोड़े से उदाहरण मिलते हैं। जबकि इन ४०० वर्षों में करीब ५०-६० ग्रंथों के बड़े-बड़े बालावबोध राजस्थानी गद्य में जैन विद्वानों के द्वारा निर्मित प्राप्त हैं। खरतरगच्छीय विद्वान् मेरुमुन्दर अनेले ने ही २० ग्रंथों पर गद्य में बालावबोध-भाषा टीका लिखी है। जिनका परिमाण ३०-४० हजार श्लोक के करीब का होगा। चारण आदि कवियों द्वारा रच्यो की लेखन प्रचुर के समय से प्रारम्भ हुआ प्रतीत होता है। गद्य-वार्तायें तो अधिकांश १८ वीं शताब्दी में ही लिखी गई हैं।

(२) रचनाओं की संख्या पर दृष्टि डालने से भी जैनतर राजस्थानी साहित्य के बड़े ग्रन्थ तो बहुत ही थोड़े हैं। कुटुंबर दोहे एवं शिगल गीत ही अधिक हैं जबकि राजस्थानी जैन ग्रंथों, राम आदि बड़े २ ग्रन्थों की संख्या संकष्ट है। दोहे और शिगल गीत हजारों की संख्या में मिलते हैं। उनका स्थान जैन विद्वानों के रत्नमय, सज्जाय, गीत, भास, पद आदि लघु कृतियों से लेती है, जिनकी संख्या हजारों पर है।

(३) कवियों की संख्या और उनके रचित साहित्य के परिमाण में तुलना करने पर भी जैन साहित्य का पक्ष बहुत भारी नजर आता है। जैनतर राजस्थानी साहित्य निर्माताओं में दोहो व गीत निर्माताओं की छोड़ देने पर बड़े २ स्वतन्त्र पद निर्माता कवि थोड़े में रह जाते हैं और उनमें से भी किसी कवि ने अपने-अपने ५-४ करोड़-करीब और

छोटी २०-३० रचनाओं में अधिक नहीं लिखी। राजस्थानी भाषा का सबसे बड़ा ग्रन्थ "बस भास्कर" है। जबकि जैन कवियों में ऐसे बहुत से कवि हो गये हैं जिन्होंने बड़े २ राम ही काफी संख्या में लिखे हैं। महा बुद्ध प्रपाद कवियों का ही निर्देश दिया जा रहा है:—

(१) कविवर समयमुन्दर:—भाष राजस्थानी के महाकवि हैं। प्राकृत, संस्कृत भाषा में अनेकों रचनाएं लिखने के साथ राजस्थानी में भी प्रचुर रचनाएं निर्माण की हैं। कुटुंबर मवन, सज्जाय, गीत आदि की संख्या तो ६०० के लगभग प्राप्त है। जैसे सोताराम चौगई राजस्थानी का जैन-रामायण है। यह ग्रन्थ ३००० श्लोक प्रमाण है। इसके अतिरिक्त साम्ब प्रभूमन चौगई, चार प्रदेय बुधराम सोनावती राम, नन्दमण्डीराम, प्रियमेवज राम, पुण्यसार चौगई, बल्लवधीरी राम, सपुष्प राम, वसुधास राम, यादव्या चौगई, सुल्कन कुमार प्रबन्ध, चक्र शंति चौगई, गीतमण्ड्या चौगई, धनदत्त चौगई, माधुवदना, पुत्रा श्रुतिराम, शेरजी चौगई, बेटी प्रबन्ध, दानादि कौशल्या एवं शमा धनीसी, बर्मधनीसी, पुण्यधनीसी, दुर्गावर्णन धनीसी, सर्वदाधनीसी, आनन्दगुणधनीसी आदि आदि राजस्थानी में बहुत में पद हैं। कुछ रचनाएं तो हमारे द्वारा प्रकाशित भी हो चुकी हैं।

(२) जिनदुर्ध:—इनका दीर्घापूर्व नाम प्रम-राज था। यह राजस्थानी के बड़े भाषी कवि हैं। इन्होंने पूर्ववर्ती जीवन में राजस्थानी भाषा में और दीर्घ में पाठन एवं ज्ञान पर हजारों विधिन भाषा में ५० के बटोर पद एवं शिगल मवन आदि कुटुंबर रचनाएं की हैं। इन्हीं में कई ग्रन्थ तो बड़े २ भाष्य हैं। इनकी अन्य रचनाओं का ब्रह्मण्य एक नाम रत्नों के बटोर होगा।



# डिगल साहित्य

डॉ० मोतीलाल मेनारिया, संचालक राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

भारतीय साहित्य में राजस्थानी साहित्य ( जो डिगल साहित्य के नाम से प्रसिद्ध है ) का स्थान कितने महत्व का है यह बात साहित्य-प्रेमियों में छिपी नहीं है। राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो भाव स्फूर्ति घोर उद्गम है वह केवल राजस्थान के लिए ही नहीं बरन् सारे भारतवर्ष के लिए गौरव की वस्तु है। घोर-रस की कविता तो इतनी उच्च-कोटि की बन पड़ी है कि उस तरह की कविता संसार के अन्य किसी साहित्य में मिलना दुर्लभ है। कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर को एक बार जब घोर रस की ये कविताएं सुनाई गईं तब वे मंत्र-मुग्ध में हो गये घोर बोले—“भक्ति रस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य में किसी न किसी कोटि में पाया जाता है। राधाकृष्ण को लेकर हर एक प्रान्त में मंद या ऊंची कोटि का साहित्य पैदा किया है। लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त में जो साहित्य निर्माण किया है उसको जोड़ का साहित्य घोर वही भी नहीं मिलना।”

राजस्थान के कवियों ने अपनी कविताएँ दो प्रकार की भाषाओं में लिखी हैं, डिगल घोर रिंगल। डिगल राजस्थान की बोलीचाल की भाषा राजस्थानी का साहित्यिक रूप है घोर रिंगल की प्रेरणा अधिष्ठ प्राचीन, अधिष्ठ साहित्य समग्र तथा अधिष्ठ छोड़-

गुल-विशिष्ट है। इसकी उत्पत्ति अपभ्रंश में हुई है।

राजस्थानी भाषा का नाम डिगल क्यों घोर बन पड़ा इस विषय में भिन्न २ विद्वानों के भिन्न २ मत हैं। पहला मत है कि “डिगल” शब्द का घमनी अर्थ अनियमन प्रपञ्च गंवाह था। वज भाषा परि-माजित थी घोर साहित्य-शास्त्र के नियमों का अनुसरण करती थी। पर डिगल इस सम्बन्ध में स्वतंत्र थी। इसलिए इसका नाम डिगल पड़ा। दूसरे मत के विद्वानों का कहना है कि इस भाषा का प्रारम्भिक नाम ‘डगळ’ था पर बाद में डिगल शब्द से तुल्य मिलाने के लिए शब्द ‘डिगल’ कर दिया गया।<sup>१</sup>

तीसरे मत में डिगल में ‘ड’ वर्ण बहुत प्रयुक्त होता है [यहाँ तब यह डिगल की एक विशेषता कही जा सकती है]। ‘ड’ वर्ण की इस प्रधानता को ध्यान में रख कर ही डिगल के साम्य पर इस भाषा का नाम डिगल रखा गया है। जिस प्रकार बिहारी-लखार प्रधान भाषा है उसी तरह डिगल भी लखार शब्द प्रधान भाषा है।<sup>२</sup> चौथामत—डिगल, डिम्+गल में बना है। डिम् का अर्थ हमक की ध्वनि तथा गल का अर्थ से लगाना है। हमक की ध्वनि रण बघी का आह्वान करती है तथा वह घोरों को उत्पत्ति करने वाली है। हमक घोर रस के देवता मणारेव का वाद्य है। अने में ओ कविता निबन्ध कर डिम्-

१. डॉ० एल. पी. टेम्पेस्टरी (Journal of the Asiatic society of Bengal Vol. X, No. 10, Page 376)

२. डॉ० हरप्रसाद द्विवेदी (Parliamentary report on the operation in search of B.S. of Hardie Chronicles, P. 15.)

३. श्री गजराज घोषा [मालवी-प्रचारिका पत्रिका, भाग १४, पृष्ठ १००]



# आभाण शतकम् और राजस्थानी कहावतों की परम्परा

लेखक—डा० कन्हैयालाल सहल, पिलानी

राजस्थान की सम्पदा और संस्कृति को समझने में जैन विद्वानों के ग्रन्थों से बड़ी सहायता मिलती है। सं० १९६६ के पोष मास में श्रीधन-विजय गणेश ने 'आभाण शतकम्' नामक ग्रन्थ की रचना राजनगर के समीप ऊठमापुर नामक नगर में की थी। इसकी प्रत्येक कहावत ऐसी है जो राजस्थानी लोकोक्तियों का अनुवाद जान पड़ती है। तुलना के लिए यहाँ कुछ कहावतें उद्धृत की जा रही हैं—

मल्लः प्रदक्षिणावर्तः पयसा भूयसा भृत ॥४॥

घण्ट्यहारं द्रुत तेन निमील्य नयने निजे ॥१०॥

गतातिविषया पूर्वं ब्राह्मणेन च बाध्यते ॥२१॥

पानीयस्य गतिर्नोचैः ॥२३॥

हुष्टायाः को निजाम्बायाः

पाणिनीत्वं प्रकाशयेत् ॥२७॥

पुच्छमिषं दृष्टो क्षत्रियापुत्रमपि

सरलं यथा न स्यात् ॥२८॥

भूपतिः पुरुषोत्तमिनि प्रजायाः

का गतिस्तदा ? ॥३८॥

राजा मित्रं न वदति ॥३९॥

सूर्यं प्रति राज्ञः शिल्पं

स्वच्छपुत्रि पतिप्यति ॥४२॥

यत्नवान् बर्गनामाय यथा

तत्को निवेदने ? ॥४४

अथो नमस्य मर्त्यस्य

मस्तके मोतिवन्धनम् ॥४४॥

ऐहिक समतासीत्वं

त्यक्त्वा कः पारलौकिकम्

वटिरथं तनुजं यद्धुदरस्थं

समीहते ॥४६॥

नृत्ये नट्याः प्रवृत्ताया वदनाच्छादनं यथा ॥९॥

गवादीनां यथा पाशं हस्तिगारे मङ्गले ॥७३॥

दन्ति भक्षणो यद्गन्निदन्ता पूषन् पूषन् ॥८५॥

विवाहे विहिते सग्नपूजया चि प्रयोजनम् ॥८६॥

धर्मयेनोक्तया दन्ता न विनोक्तया हि धीधनैः ॥८९॥

भवितुं भयन्देव ॥९२॥

उप्यने याहान् धान्यं, सूर्यने ताहान् जने ॥९६॥

वरस्य च वराणां चोक्ते दर्पणप्रमाणेन चिम् ॥१०१॥

पाद प्रमाणं कार्यं यावत्प्रवृत्तादनाशुचम् ॥१०२॥

सन् १८६२ के राज्य एशियाटिक सोसाइटी के

जर्नल में श्री लाचरंड बिहा आम्बर ने 'Marw-

ari Weather Proverbs' प्रकाशित करवाई।

इसी प्रकार Adams Archibald ने कनिष्ठ

मारवारी कहावतों की प्रथम अनुवाद के साथ

पाठों के समक्ष रखा।<sup>१</sup>

1. Journal of the Royal Asiatic Society 1892 (pp. 253-267).

2. The Western Rajputana States by Adams Archibald (pp. 90-97).

## “भाव-लता”

हृदय-दली में उत्पन्न सुन्दर सुमनप्रद लतिकाओं । सुम सुद्धि के विशाल वृक्ष प  
न चढ़ो, और चढ़ो तो उतारो मत । अरे, उतारके फल चराने के इच्छुक हृदय प्राणी ।  
उतार पर चढ़ो उतारते तुम्हें निर्दयता से कुचलते संकोच न करेंगे । तुम्हारे सुमनों का  
आनन्द तो सुमन से मैत्री के हित ही है । उड़ने वाले ही सुम पर चढ़ने और तुम्हारी  
मृदुलता से स्वयं से अधिपति है । तुम्हारा आनन्द लेने वाले उड़ते ही उड़ते हैं द  
मृदुलता से हटते वन तुम्हारे पास आते हैं । अगर सहित चढ़कर नीचे आने वाले सदा प  
ही हवा से तुम्हें कुचलने वाली तो ईश्वर तुम्हारी सेवा रक्षा करे ।

—श्री २ इमान्तर विपत्ति, बम्बई

# डिगल साहित्य

डॉ० मोतीलाल मेनारिया, संचालक राजस्थान साहित्य अकादमी, उदुपपुर

भारतीय साहित्य में राजस्थानी साहित्य ( जो डिगल साहित्य के नाम से प्रसिद्ध है ) का स्थान कितने महत्व का है यह बात साहित्य-प्रेमियों में छिपी नहीं है। राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो भाव स्फूर्ति और उद्वेग है वह केवल राजस्थान के लिए ही नहीं बल्कि सारे भारतवर्ष के लिए गौरव की वस्तु है। बीर-रस की कविता तो इतनी उच्च-कोटि की बन पड़ी है कि उस तरह की कविता संसार के अन्य किसी साहित्य में मिलना दुर्लभ है। कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर को एक बार जब बीर रस की ये कविताएं सुनाई गईं तब वे मंत्र-मुग्ध में हो गये और बोले—“भक्ति रस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य में किसी न किसी कोटि में पाया जाता है। राधाकृष्ण को लेकर हर एक प्रान्त में मंद या ऊंची कोटि का साहित्य पैदा किया है। लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त में जो साहित्य निर्माण किया है उसको जोड़ का साहित्य और वही भी नहीं मिलता।”

राजस्थान के कवियों ने अपनी कविताएँ दो प्रकार की भाषाओं में लिखी हैं, डिगल और पिगल। डिगल राजस्थान की बोचवाल की भाषा राजस्थानी का साहित्यिक रूप है और पिगल की प्रोत्सा अधिकांश, अधिकांश साहित्य समग्र तथा अधिकांश छोड़-

गुण-विशिष्ट है। इसकी उत्पत्ति प्रपञ्च में हुई है।

राजस्थानी भाषा का नाम डिगल क्यों और जब पड़ा इस विषय में भिन्न २ विद्वानों के भिन्न २ मत हैं। पहला मत है कि “डिगल” शब्द का प्रसंगी अर्थ अनियमित प्रवृत्ति संसार का। इस भाषा पर-माजित की और साहित्य-शास्त्र के नियमों का अनुसरण करती थी। पर डिगल इस सम्बन्ध में स्वतंत्र थी। इसलिए इसका नाम डिगल पड़ा<sup>१</sup>। दूसरे मत के विद्वानों का कहना है कि इस भाषा का प्रारम्भिक नाम ‘डगल्ल’ था पर बाद में पिगल शब्द से तुल्य मिलाने के लिए शब्द ‘डिगल’ बदल दिया गया।<sup>२</sup>

तीसरे मत में डिगल में ‘ड’ वर्ण बहुत प्रचुर होता है (यहाँ तक यह डिगल की एक विशेषता बनी जा सकती है)। ‘ड’ वर्ण की इस प्रधानता की ध्यान में रख कर ही पिगल के साम्य पर इस भाषा का नाम डिगल रखवा गया है। त्रिम प्रकार विहारी-सकार प्रधान भाषा है उभी तरह डिगल भी द्वार शब्द प्रधान भाषा है।<sup>३</sup> बोधायन—डिगल, डिग्ल+गल से बना है। डिग का अर्थ हमक की ध्वनि तथा गल का गले से सान्य है। हमक की ध्वनि रण बर्फी का आवाज बनती है तथा वह बीरों की उत्पत्ति करने वाली है। हमक बीर रस के देना मजारेब का भाषा है। देने में भी कविता निश्चय कर हिम-

१. डॉ० एल. पी. टेगोटीरी (Journal of the Asiatic society of Bengal Vol X, No. 10, Page 376)

२. डॉ० हरप्रसाद द्विवेदी (Parliamentary report on the question a search of MSS of Bardic Chronicles, P. 15)

३. श्री गजराज घोषा [नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, भाग १४, पृष्ठ १२२]

1  
2  
3  
4  
5  
6  
7  
8  
9  
10  
11  
12  
13  
14  
15  
16  
17  
18  
19  
20  
21  
22  
23  
24  
25  
26  
27  
28  
29  
30  
31  
32  
33  
34  
35  
36  
37  
38  
39  
40  
41  
42  
43  
44  
45  
46  
47  
48  
49  
50  
51  
52  
53  
54  
55  
56  
57  
58  
59  
60  
61  
62  
63  
64  
65  
66  
67  
68  
69  
70  
71  
72  
73  
74  
75  
76  
77  
78  
79  
80  
81  
82  
83  
84  
85  
86  
87  
88  
89  
90  
91  
92  
93  
94  
95  
96  
97  
98  
99  
100

बदन गई है। भाज की मान्यता है कि किसी भी प्रेमोन्मत्त से जो कविता की जाती है उसमें वह रस चमत्कार और बल कदापि नहीं आ सकता जो स्वान्तः सुखाय वसिता करने वाले कवियों की रचना में मिलता है<sup>1</sup>। यह कथन ठीक भी है; और वास्तव में यही कारण है कि राग्याश्रित कवियों की कविता में आत्मानुभूति और आत्म-विस्मृति की प्रधान छाप हमें नहीं दिखाई पड़ती है। कारण भावों में स्वान्तः सुखाय रचनाकार कवि भी हुए हैं किन्तु ऐसे कवियों की संख्या एक तरह से न होने के बराबर है।

भाषा—द्विगल कविता की भाषा प्रधान रूप से दो प्रकार की पाई जाती है। और भाषा बाल के वाच्य शब्दों की भाषा बहुत अस्त-व्यस्त, बेमेल है, जो द्विगल व्याकरण की दृष्टि में अशुद्ध है। लेकिन इनके बाद के अन्यो तथा फुटकर कविताओं की भाषा बहुत शुद्ध, संयत एवं प्रौढ़ है। फिर भी एक बात जो द्विगल के सभी कवियों में समान रूप में पाई जाती है, वह है। शब्दों की मन-माने ढंग से तोड़-मरोड़। यह तोड़-मरोड़ इनके मन-माने ढंग से की गई है कि भाज उसके मूल रूप के पहिचानने में भी भारी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उदाहरणार्थ—

शब्द	शुद्ध रूप
जुडटिळ	वृषिष्ठिर
पय	पार्य
वेसा	वेदसा
भोग	भवन
बोछ	बबब
हेनरी	दिल्ली

छंदः—द्विगल में सबसे अधिक प्रयोग दोहा, छप्पय का हुआ है। छप्पय पद्यति का अनुकरण बहुत पीछे तक होता रहा है। आधुनिक काल में भी उसका प्रभाव ज्यों का त्यों देखा जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि द्विगल कविता में वीर रस का प्राधान्य है, जिसका निरूपण इन छन्दों में अधिक सफलता के साथ हो सकता है। दोहा, छप्पय के प्रतिरिक्त मन्दाक्रान्ता, मुक्ताशम, भुजङ्गप्रपात, पदरी और तोमर आदि छन्द भी प्रयुक्त हुए हैं। फुटकर रचनाओं में गीत छंद का प्रयोग भी बहुत हुआ है, जो द्विगल साहित्य की खास विशेषता मानी जाती है। छप्पय की द्विगल में 'बदित' और दोहा की 'दूहो' कहते हैं। हिन्दी में दोहा छंद एक ही प्रकार का होता है पर द्विगल में इसके दूहो, मोरठियो दूहो, बडा दूहा और नूँवेरी दूहो बार भेद माने गये हैं।

अन्यकार—द्विगल में अधिकतर वर्णनप्रमत्त प्रधान कविता है। अनन्य द्विगल कवियों ने ऐसे अलंकारों का प्रयोग विशेष रूप में किया है जो वर्ण्य विषय की मञ्जीरता एवं भाव व्यञ्जना को बढ़ाने में सहायक होते हैं। इनकी फुटकर रचनाओं में अलंकारों का प्रदर्शन कम देखा जाता है। लेकिन कमबख्त शब्दों में उदमा, उपमत्ता, अलंकार आदि सादर्य मूलक अलंकारों का प्रयोग बड़े संयम के साथ किया है। अलंकारों के कर में परस्पर भाव अछट करने की प्रवृत्ति द्विगल कवियों में बड़ी भी नहीं दिखाई पड़ती। एक अलंकार अत्यन्त ऐसा है जिसका प्रयोग द्विगल कवियों ने अत्यधिक मात्रा में

1. When a poet turns round and addresses himself to another person, when the expression of his emotions is tinged also by that desire of making an impression upon another mind, then it ceases to be poetry and becomes eloquence.

विद्या है बर है बसन्त-मगरी । इसे हम हिन्दी में  
सन्तदुल्लभ का एक भेद कह सकते हैं । बसन्तमगरी  
का साधारण विषय यह है कि किसी रस के प्रथम  
रस का प्रारम्भ बिना वर्णों में हुआ हो उसके  
प्रतिपद रस का प्रारम्भ भी उसी वर्ण से होता  
जाता है । जैसे—

एकदश वरद्वय प्रीत्य, हीन गतः पावनः स्यात् ।

होती होती दिवाली, बरसी मकरा बरसे ॥

—दरगाची

रस — विना काल में बीर रस का आभास है। अतएव, रस का अर्थ काल रसों का भी विनय विनय है पर आभास बहुत कम। विनय रसों का हीन बोध। मात बीर रस ही में रस-रस है। विनय में ही बीर रस का एक तरह का आभास है। अतएव, रस-रस। विनय का ही अर्थ काल का हीन आभास में ही विनय की हीन रस का हीन रस का ही विनय है। अतएव

गये हुए बीर नायक को अनुसन्धिति में उठने को  
पत्नी की घर पर क्या दशा है। मैत्रिण विद्वान् के  
बलि उन्हें न मूचे। विद्वान् बलिता में नायक के  
एक हाथ में तखतार दिखाई देती है तो उसे  
दूधरे परतू में उसकी बीर पत्नी है। दोनों ही रो  
में नायक एवं नायिका मिली मरी रहते। दोनों ही  
शेन में प्रसीधता और पूर्णता है। नायक  
बीर क्षात्रियों की मोहित भावनाओं को ही  
उत्तरो में अपनी रचनाओं में ला जाता है जो कि  
साहित्य को विद्वान् के बलिों को पूर्ण देता है।

दिव्य कान्त में बोर राग की प्रकाश देव का  
कुल लोको ने यह निरर्थक दिखाता है कि दिव्य  
भन्ना बोर राग के निचे दिव्यी जगदुल है उन्ने  
भुंजार पारि प्रप रागो के दिव्य लो। मेरि का  
दिवादा भगवान् है बोर राग के प्रदिष्ट रूप  
रागो की भी पारि प्रपदिष्ट दिव्य कान्त है  
॥ १ ॥



महाद्वार नामक इस रामो का निर्माता बाबू सं०  
१३२० के आस पास ठहरा है ।

बीनारदेव रामो एक बर्तमानक काम्य है जो  
११६ लोगों में सम्मिलित हुआ है । इसकी भासा बोल-  
बात की सादरपानी, बर्तमान बहुत साधारण तथा  
बसा भाव अधिकांश अनिष्टमित्र है । इस संग  
में कहा है कि बाबू सं० ही ऐसा निबन्ध  
जो एक बर्तमान है ।

बाबू नाम का बोर्ड कवि पुष्पराज के सादर रूप  
में हुआ ही नहीं ।

(४) जट्टराजः—ये बाबू बरसाई के कर्तुर्गुण  
से । इसका विषय हुआ बोर्ड अन्य सभी एक ही  
मित्र । लेकिन प्रसिद्ध है कि पुष्पराज रामो के  
निम्नलिखित दोहे के बाद का जो संग है, वह  
उन्हीं का विषय हुआ है :—

बाबू बाबू मणि मणि मणि, बर्तमान ही डाक ।

१. पृथ्वीराजः—ये बीकानेर राजवंश मे मे से । इनका जन्म वि० सं० १६०६ के मार्गशीर्ष मे हुआ था । सम्राट् प्रबकर के प्रसिद्ध मेनापति महाराजा रायसिंह इनके बड़े भाई थे । पृथ्वीराज बड़े वीर, स्वदेशाभिमानी एवं स्पष्ट भाषी थे । ये सहृदय कवि होने के साथ ही संस्कृत साहित्य, दर्शन, ज्योतिष, छंद शास्त्र, संगीत शास्त्र आदि कई विषयों मे भी पारंगत थे । इनकी रचना 'वैली कृष्ण रुक्मणी' री' डिगल साहित्य मे शृंगार रस का सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ माना जाता है ।

इसमे श्री कृष्ण के साथ रुक्मणी के विवाह की कथा का वर्णन है और भाव, भाषा, भाषुर्य, शीघ्र और विषय सभी दृष्टिओं से यह अपने रङ्ग बङ्ग का प्रतिम है । इनके "दशरथ रावउत," 'बमदे-रावउत,' और गङ्गाधरही नामक तीन ग्रंथ और भी हैं । इनके सिवाय इनके रचे दो ग्रन्थ और बहे जाते हैं—प्रेम दीपिका, और श्री कृष्ण रुक्मिणी चरित्र ।

२. ईश्वरदास—इनका जन्म मारवाड राज्य के आद्रेस नामक गांव मे सं० १४६५ मे हुआ था । ये जाति के चारण थे । ये उच्च बोटि के भक्त थे । अपने समय मे वे देवता की तरह पूजे जाते थे । लोग इन्हें "ईशरा सो परमेशरा" कह कर इनका सम्मान करते थे । इनके ग्रंथों के नाम ये हैं—हरि रस, छोटा हरि रस, बाव लीला, छुल भगवन्त हंस, गरुड पुराण, छुल घागम, निदास्तुति, देविदान बैराट, राम बैरास, सभापर्व, और हाना भाला रा कुदविमी । इन्होंने शाला और बीर दोनों रसों मे रचनाएं की हैं । इनकी भाषा बहुत सरल तथा स्पष्ट है । कविता मे बही भी परिधम की भक्त नहीं दिखाई देती ।

३. दुरसाजी—ये झाडा गोंध के चारण थे । इनका जन्म सं० १५६२ मे तथा देहावसान १०१०

मे हुआ । ये राष्ट्रीय कवि थे । महाराणा प्रताप की प्रशंसा मे लिखी हुई इनकी 'विरहदयहारी' का एक-एक दोहा अपने ढंग का प्रतिम है । ये प्रबकर के कृपा पात्र थे । प्रबकर के आश्रित होकर भी इन्होंने कभी एक शब्द भी उनकी प्रशंसा मे न लिखा । यह एक ऐसी बात है जो दुरसाजी को अन्याय चारणों मे ऊँचा उठा देती है । इनकी कविता मे तात्कालीन समाज का बड़ा सुन्दर चित्रण हुआ है ।

प्रबकर समद प्रयाह, तिह डूबा हिन्दु तुरक ।

मेवाडो तिल माँह, पोषण भून प्रताप सी ॥

४. मुहणोतनेरासी—ये जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) के दोरान थे । इनका रचना काल १७२० के लगभग है । इन्होंने डिगल गद्य मे एक इतिहास ग्रन्थ लिखा है जो "मुहणोन नैरासी री रवान" के नाम मे प्रसिद्ध है ।

५. मान—इनके वंश, माता-पिता के संबंध मे कोई जानकारी नहीं है । इन्होंने "राज विनाय" नामका एक ग्रन्थ बनाया जिसकी समाप्ति १७३७ मे हुई थी । इतिहास और काव्य दोनों दृष्टि मे यह ग्रन्थ महत्वपूर्ण है ।

इसके अतिरिक्त मध्य काल के अन्य कवि बादर, श्रीधर, मूबो, सिक्कास, दयाराम, हरिदास, बीर भाण जगदीश व बरगोदान आदि हुए हैं ।

उत्तर काल (सं० १८८०—१९६७)

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ के मान मान डिगल साहित्य का उत्तर काल भी प्रारम्भ होता है । भाषा और विषय दोनों की दृष्टि से इस काल मे महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं । बोधकाव्य की राजस्थानी और बज्जभाषा, डिगल वर बनना प्रभाव जमाने लगी और नर काव्यों का रचना बहुत कुछ कृष्ण लीला, राम कर्हिदा तथा अन्य नैतिक और लौकिक विषयों के मे निरा । इस काल की डिगल

घोर अन्धकारावन दिवस में मोक्ष का अन्तर है।  
 गुरुदेवी की ओर उज-भावा मिश्रित इस दिवस का नाम  
 गुरु दिवस ने 'कृतिम दिवस' रखा है, जो ठीक  
 ही प्रमाण होता है। इस बात में बाकीराम यदि दो  
 एक कहिये थे ही किमुद दिवस में कविता की है  
 पर अन्तर्मुख देखने में इनकी भाषा पर उक्त दो  
 भाषाओं का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

३ मोती नाम—ये बीकानेर के महाराजा  
 मन्त्रि के अर्पित थे। इनकी "अन्तरात्र" नामक  
 एक छन्द बनाया जिसका दूसरा नाम 'अन्तरात्र-  
 कवच' भी है। इसका निर्माण सं० १८०० के आस-  
 पास हुआ है। इन छन्द के आधार पर मोतीराम  
 दिवस कवच के लक्षण बहि बड़े आसकते हैं।

का पता लगता है। बाकीराम संज्ञा, गिर  
 पारसी तथा अज भाषा के प्रभाव संज्ञा होने  
 मान ही साध इतिहास के एक बहुत बड़े भाषा थे।  
 सुन्द, गिरधर बरिधर की भाषा ही बाकीराम के  
 मूलधार थे।

सूर्यमन्त्र—ये सूँदी के राजा दरबारी कवि थे।  
 इनका जन्म पारसी की मिथल भाषा के एक उच्च  
 छिन्न कुल में वि० सं० १८७२ में हुआ। सूर्यमन्त्र  
 का विवाह किये थे पर इनके कोई सन्तान नहीं हुई  
 वे बड़े विवागी, मदन, सुदुर्लभ मित्राज एवं सत्य  
 प्रवृत्ति के पुरुष थे। सुन्दर कवि होने के अतिरिक्त  
 सूर्यमन्त्र एक उच्च कवि के विद्या भी थे। इनका  
 बस भावार्थ, बावर्त विद्या, गरी सुन्दर की

## संत-साहित्य

लेखक—श्री रामनाथ 'बमलाकर', राजस्थान सार्वजनिक सम्पर्क विभाग, जयपुर ।

संत मानव जाति के ऐसे जगमगाते रत्न हैं जिनके मन, वाणी और कर्म के दिव्य प्रकाश में मानवता का पथ प्रान्वित होता प्रया है। सन्तो ने अपने निःस्वार्थ जीवन के आदर्श से समाज के हृदय में कोई हुई परमार्थ-परक भावना को जागृत और विवसित किया है। उनके सात्विक विचारों ने मानव-प्रवृत्तियों को ऊँचा उठा कर परोपकार और निःश्रेयस की ओर उन्मुख किया है। सन्तों की लोक हितायिणी प्रवृत्ति ने मनुष्य को "बहुजन हिताय बहुजन सुखाय" जीने का संदेश मिला है। सन्त साहित्य की गुणा ने ईर्ष्या, द्वेष और मारबाट में भरे लोक में एक प्रलोचिक दान्ति के मन्दन खानन की सृष्टि की है, जहाँ भटकी हुई, प्रताड़ित और सतप्त आत्माओं को जीने का रास्ता मिलता है। तुलसीदासजी के रासो में सन्त धाम के वृक्ष की भाँति दूसरों के लिए ही फलता-फूलता है। सच्चा सन्त संसार को देता ही देता है। संसार में कुछ लेता नहीं है। महात्मा मुन्दरदासजी ने सन्त की देन के महत्त्व का प्रतिपादन बितना अच्छा किया है—

साबो उपदेश देत, सबी र सोत देत,  
ममता मुबुडि देत, कुमति हरत है।  
माराग दिखाई देत, भाव ह भगति देत,  
प्रेम की प्रतीति देत अमरा भरत है।  
ज्ञान देत, ध्यान देत, सातम विचार देत,  
ब्रह्म को बसाई देत, ब्रह्म में भरत है।  
'मुन्दर' कहत जग सन्त कुछ देत नहीं,  
संग उन निर-रिज देखीं करत है।

संसार के घसतू से सतू की ओर, अन्धकार में प्रकाश की ओर तथा मृत्यु में अमरता की ओर ले जाने वाली सन्त परम्परा भारत में प्रति प्राचीन काल से धनी प्राती है। सतवाणी के उदाहरण सर्व प्रथम वैदिक साहित्य में उपलब्ध होने हैं। ऋग-वेद के ऋषिपय कथानक सम्बन्धी सूक्तों को छोड़ दिया जाय तो दोष सारा ऋगवेद सन्तों की वाणी ही है। सामवेद तो ऋगवेद में के ही मन्त्रों का चुनाव है, जिनकी एक विशेष दृग में सामगायिकों ने स्वर निपि बना रणी थी।

वेदों में 'एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति' अर्थात् एवेदवरवाद का प्रतिपादन हुआ है। उपासना के लिए उपासक एक ही ब्रह्म के मित्र-मित्र रूप पश्य कर सकते हैं—

एवं सद्ब्रह्म ब्रह्मा ब्रह्मि ।  
अभिनयं मानसिद्वान् प्रातृ ॥

वेदों के पदवाच सन्तवाणी का दूसरा आविर्भाव भगवान् बुद्ध की गाथाओं में तथा तीसरा आविर्भाव दसिगु के दोष और वैष्णव भक्तों में मिलता है। वेदवाणी, बुद्धवाणी और दसिगु की तामिल वाणी ही वह सूत्रबन्दी है जिसमें से बाद की मारी भारतीय सन्तवाणी की सगल शाखाएँ प्रसृत हुईं।

उत्तर भारत की सन्तवाणी में राजस्वाम की देन विशेष महत्त्वपूर्ण है। यों ही राजस्वाम का अतीव अमनी वीरता, लौह और पद्मजन के निग्न अस्त्र विधान है ही, वही सन्त साहित्य का सूत्रन की सुवचन भाषा में हुआ है। सन्त साहित्य, राजस्वाम

सुन्दरान, रत्नरत्नी, बभनरत्नी, पञ्चिद जी, स्वामी  
सुन्दरान, रत्नरत्नी, बभनरत्नी, पञ्चिद जी, स्वामी  
सुन्दरान, रत्नरत्नी, बभनरत्नी, पञ्चिद जी, स्वामी  
सुन्दरान, रत्नरत्नी, बभनरत्नी, पञ्चिद जी, स्वामी

### मुनि रामसिंह

जैन मुनि रामसिंह ने ११ वीं शताब्दी में जन्म  
लेते हैं। इनका जन्म हुआ था। इनका जन्म हुआ था।  
इनका जन्म हुआ था। इनका जन्म हुआ था।  
इनका जन्म हुआ था। इनका जन्म हुआ था।

इनका जन्म हुआ था। इनका जन्म हुआ था।  
इनका जन्म हुआ था। इनका जन्म हुआ था।

मरमवाली में पवित्र किया था। इसी वर्ष  
बनारस की यात्री के जोड़ की यात्री बनने ली।  
बनारस में प्रेमदास की जो यात्री की है।  
बहुत जल्दी ही बड़ा महरी है। इसके बाद  
मर्म की वेधने वाली सुन्दरानिपुणम हट्टी और बड़ा  
रत्न में मिलान अनुभूति है। इसी भाषा की ही  
जन्म और जन्म है।

मरने विषय प्रभु ने जो विद्वानों के जन्म  
विषय करता है विषय में ही के जन्म  
की विषय 'जात्रा' है—

जब मरने में न देनिये, परमपत्नी व बड़ा।  
एक मरने में न देनिये, परमपत्नी व बड़ा।  
बड़ा बड़ी की विषय है तात्रा वेत्ता की है।

ज्यों हम सोरें तू न जोरै,  
हम सोरें पे तू नाहि सोरै ॥

हम बिसरें पे तू न बिसारै,  
हम बिगरे पे तू न बिगारै ॥

हम भूलें तू भानि भिलावै,  
हम बिभुरें तू भंगि लगावै ॥

तुम्ह भावै सो हम पे नाहो,  
दादू दरसन देहु गुमाई ॥

दादू सर्वतोभावेन प्रभु की दारण मे रहे—

तू साहिब मैं सेवक तेरा,  
भावै सिरि दै सुली मेरा ।

भावै करवत सिर पर साहि,  
भावै लेकर गरदन मारि ।

बिन्तु ऐसी दारणागति मे बितना ध्यान है,  
दादू ही इसका उत्तर दोगे :—

प्रेम सहर की पालकी ध्यानम बैसे धार ।  
दादू खेले पीव सो, यह मुख बछा न जाइ ॥

रज्जब जी

संत दादू दयाल के शिष्य रज्जब ने दो संघों की रचना की “बाणी” और “सर्थगो” । सदा मे इनकी सालिया ५४२८ और संग २४ हैं । इतनी बड़ी गण्ठा मे सायद बिनी भी अन्य सन्त ने सालिया नहीं बड़ी । रज्जबजी ने कविता, सधेदे, अरिजल आदि अनेक पद्यों मे रचना की है । इनकी रचना अपिबतर राजस्थानी मे है और अत्यन्त ही सरस है । इनकी कुछ सालिया और पद बहुत दुष्ट हैं । सालिया उष्ण बोधि की हैं ।

राय का रग रज्जब पर गहरा बड़ा । प्रभु के प्रेम मे उनकी हृदय और उनका सर्वस्व समर्पण बैरोड़ है—

राय ईश्वर के रग रागो ।

परम पुष्ट संगि प्राण हमारो मगन गलित मदमाती ।  
साम्यो नेह नाम निर्मल भूँ गिनत न सोली साती ॥

दगमग नहीं धड़िग होई बीठी,  
सिर धरि करवत काती ।

सब विधि मुखो राम ज्यों,  
राखे यह रम रीति मुहानी ॥

जन रज्जब धन ध्यान तिहारो,  
बेर बेर बलि जानी ।

बपनाजी

बपनाजी नराले के निवासी तथा दादू दयाल के प्रधान शिष्यों मे से थे । इनका बड़ बड़ा गुरीला था । इनकी गुरु भक्ति बड़ी गहरी थी । साहित्य की दृष्टि मे पद्य रचनाएं उत्कृष्ट बोधि की नहीं है बिन्तु भगवान के चरणों मे सर्वस्वार्पण की भावना इनकी बहुत बड़ी थी । बपनाजी ने दूँडाडो में सोये-सादे दाम्ने मे राख का ऊँचा निरूपण और मानिस के बिरह का बड़ा सजीव चित्रण किया है :—

हरि धावै हो जब देखो धांगण मरारै ।  
कोई सो दिन होई रे जा दिन चरणों धारै ॥

+++  
तारा गिलता मोहि बिहावै रीणि निरामी ।  
बिरहणी बिलार करै हरि दरसन की प्यामी ॥

प्रेम के व्यापार मे मिर का लोहा करना पड़ता है । मिर देने पर भी प्रीतम मिय जाये तो भी बपनाजी की राय मे यह लोहा “मुर्तगा” ही है ।

बपना इहि प्योगार मे टोटा मनहु न धांगि ।  
मिर साईं जै हरि मिरे, लव लग मुदा जगि ॥

बाजिदुजी

रम दयान के हृदय मे बरहना का योग्य लव उमरा जब दि बहू दिनी जंदन मे शिराणी का निवार करने कावे है । और बज्जब और बर इनका

मन जीव—देम की ओर दूर गया । बाद की  
 जेजे-जोजे शायदवा जेजा गरुड काया हुआ ।  
 जेजे परिवर्तन जेजे में जेजे जेजे पर जेजे सुखसुख  
 जेजे जेजे जेजे की । जेजे भावा में जेजे  
 जेजे जेजे है । जेजे जेजे जेजे की जेजे जेजे  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे है । जेजे की  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे —

जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे जेजे ।

तो विन वृत्त हरि तो नगी गायभा । जेजे जेजे ।  
 यह प्रेम लक्षणा भक्ति है विन सुनिह सखी जेजे ।

मन परमेश्वर में सुख का स्वाद सुख ऊँचा  
 है । सुखसुखजी के जेजेजुगार सुख के जेजे  
 जेजे जेजे जेजे ही जेजेजुगार है ।

जाहूँ तो न रोम तोप जाहूँ तो न राग रोम,  
 जाहूँ तो न धीर भाव जाहूँ तो न धान है ।  
 जाहूँ तो न बख्शार जाहूँ तो नही विचार,  
 जाहूँ तो न संग न तो जोड़ पछावा है ।  
 जाहूँ तो न सुख जेजे जाहूँ तो न जेजे—जेजे ।  
 जेजे जेजे जेजे जाहूँ तो न सुख है ।  
 सुखर बहान मोई ईसा की जेजे ईसा,  
 मोई सुखर जेजे सुखी न जेजे है ।

‘नव परिणीता से’-

## तुम आई तो

तुम आई तो देहरी द्वारे गूँज गई सहनाई,  
कुहक-कुहक कोकिल कंठो ने म्वर गागर तुलकाई ।  
कन्दपिल इस रूप सुरा को चय कर चादनियां बीराई,  
मपिल घुंघराली अलको मे उलभ-उलभ सभा शरमाई ।  
तन्द्रिल स्वप्निल सी पलको मे मादकता ने ली भ्रंगडाई,  
जवा कुमुम मे चरणो को छू प्रागन को माटी मुस्काई ।  
मुस्काई तो हरसिगार ने भर-भर मुस्कानें निपराई,  
शरमाई तो बदली के धूँघट मे सिमटी मोन जुन्हाई ।  
सघन उदासी की छाया को छेड़ गई नटपट पुरवाई,  
मूने मन की परती धरती फिर आनामो मे झंकुराई ।  
बरमो मे भोगी-भोगी ये मूनी ग्रंथिया फिर कजराई,  
मेहदी रचे सधे हाथों फिर ठप-ठप ढोलक धपकाई ।  
कंगना खनके बिछुआ टुनके पैरो पैजनिया छनकाई,  
कोने आनर तुलसी के तरु दिवला की बानी जगमाई ।

कु. हेम एम. ए

तुम जहाज में काम तिहारी तुम तजि अनत न जाऊँ ।  
तो तुम हरिजू मारि निबासो धीर डोरनही पाऊँ ॥  
बरगुदास प्रभु सरण तिहारी, जानत सब संसार ।  
मेरी हंसी सो हंसी तुम्हारी, तुमहूँ देणु बिचार ॥

सहस्रों बार्द व दयावाई बरगुदासजी की  
शिष्याएँ थीं । इन दोनों सत बचिपत्रियों ने भी  
संत साहित्य की भीष्मि की है । दुर महिमा,  
बैराग उपशान्त, सुमिरन आदि अनेक ग्रंथों पर

इनकी सुन्दर रचनाएँ हैं । रत्नगङ्गा के साधनाथ जी  
१८ वीं शताब्दी में एक प्रसिद्ध संत हुए हैं जिन्होंने  
हरिराम, बर्गविराट, हरिकीर्ता निबन्धन परमाणु  
कूटकर सबद और जीव समझौतरी इन्हीं की रचना  
की थी ।

अन्त में इनकी पवित्र करने वाली बाली के  
अमर रचनाकार इन संतों के चरणों में अर्पण  
करके करते हुए मैं यह पावन प्रणाम समर्पण करता हूँ ।

## पूर्वी अंचल का प्राचीन काव्य

[illegible]

साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकें बहुत ही कम मिलती हैं।

२. बलभद्र के शिखनख पर मनीराम की टीका—हिन्दी संसार प्रायः यही जानता रहा कि बलभद्र पर सबसे प्रथम टीका गोपाल कवि द्वारा स० १८६१ वि० में हुई। किन्तु हमारी खोज में मिली यह टीका सिद्ध करती है कि गोपाल कवि की टीका में लगभग ५० वर्ष पहले ही स० १८४२ में मनीराम कवि द्वारा इस ग्रन्थ-रत्न की टीका की जा चुकी थी—

अष्टादश ध्यानीय में संवत् समसिर मास ।

कृष्ण पक्ष पार्चै सुतिथि सोमवार परमास ॥

कवि मनीराम की इस टीका की ही बलभद्र के शिखनख पर प्रथम टीका मानना चाहिए।

३. धपत विलास—हिन्दी संसार में यह माना जाता रहा है कि देव कवि सनाढ्य ब्राह्मण थे। हिन्दी साहित्य के प्रायः सभी इतिहासों में इसी बात का समर्थन किया गया है। किन्तु बरनाबरसिंहजी के आश्रित कवि भोगीनाथ की इस पुस्तक में सिद्ध होता है कि देव कवि काव्यकुञ्ज ब्राह्मण थे, सनाढ्य नहीं।

काव्यय मोत्र द्विषेदि कुल काव्यकुञ्ज कमनीय ।

देवदत्त कवि जगत में भये देव रमणीय ॥

४. प्रेम रत्ननागर—राजकुमार रतनपात्र के आश्रित देवोदास का जिला यह ग्रन्थ प्रेम की व्याख्या करने सुन्दर और वैज्ञानिक ढंग में करता है कि देवदत्त आदर्श कविता होना पड़ता है। भाषाशुद्धता इस प्रकार के ग्रंथ भी हिन्दी साहित्य में नहीं मिलने। 'नवीन' का 'नेह-निधान' भी कुछ इसी प्रकार का ग्रन्थ है। प्रेम के स्वरूप का सुन्दर और मोहकपूर्ण विवरण इस प्रकार के ग्रंथों में ही मिल सकता है। हमारी याद में—

'प्रेम को निरूप', 'मीन हंस आदि की प्रेम' तथा अन्य अनेक उदाहरण दृष्टव्य हैं।

५. विचित्र रामायण—बलदेव वैश्य (संकेत-वान) कृत यह रामायण वास्तव में विचित्र है। बालकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड के दार्शनिक प्रसंगों को निकाल कर गोप बग का विभाजन १४ अंकों में किया गया है। इस ग्रन्थ में काव्य और कथा दोनों की प्रतिभा मिलती है। स्थान-स्थान पर केशव का भी स्मरण हो आता है। प्रकृति वर्णन इस काव्य की एक और विशेषता है। शुद्ध काव्य की दृष्टि में यह पुस्तक एक उच्च स्थान की अधिकारिणी है।

६. राधाभगवत—पार्वती मंगल, जानकी मंगल तथा रविमणी मंगल के नाम तो सुने जाते हैं किन्तु मत्स्य के कवि गुनार्द्र रामनारायण ने राधा मंगल उपस्थित करके राधा और कृष्ण का विवाह भी विधि विधान में करा दिया है। इस पुस्तक में कल्पना का परम प्रयोग है और व्रज की विवाह पद्धति का मूल्य तथा गौरी विलग्न फिर दूधामात्री बरसाई। दुह्न की मूँठन दुह्न गाराई।

अथवा

पूरी तरकारी पानरि भारी और मुहारी भान बनी ।

बापो घन प्यारी माय मुहारी बेनी कारी जान बनी ।

आदि की स्थानीय रीति हो समझ सकते हैं।

७. गिरवर विलास—कवि उदयराम निम्न यह एक ऐसा सुन्दर ग्रन्थ है जिसमें राम का स्वरूप को बनाने के साथ-साथ कृष्ण का एक सर्वोच्च चित्र भी उद्भिन्न किया गया है। ऐसा मन्दम होने लगता है जैसे कवि ने दर्शन, सरोवर, वृक्ष, रत्न आदि सभी को अपना प्रदान कर दी है। राम प्रथम प्राण तो व्रज की मोरछो का एक मन्त्र ही बन जाता है।



साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकें बहुत ही कम मिलती हैं।

२. बलभद्र के शिखनख पर मनीराम की टीका—हिन्दी संसार प्रायः यही जानता रहा कि बलभद्र पर सबसे प्रथम टीका गोपाल कवि द्वारा सं० १८६१ वि० में हुई। किन्तु हमारी खोज में मिली यह टीका मिट्ट बरती है कि गोपाल कवि की टीका में लगभग ५० वर्ष पहले ही सं० १८४२ में मनीराम कवि द्वारा इस ग्रन्थ-रत्न की टीका की जा चुकी थी—

अष्टादश व्यालीम मे संवत मगसिर माम ।

बृष्ण पक्ष पाचें सुतिथि सोमवार परगाम ॥

कवि मनीराम की इस टीका को ही बलभद्र के शिखनख पर प्रथम टीका मानना चाहिए।

३. वषट् विलास—हिन्दी संसार में यह माना जाता रहा है कि देव कवि सनाढ्य ब्राह्मण थे। हिन्दी साहित्य के प्रायः सभी इतिहासों में इसी बात का समर्थन किया गया है। किन्तु बलान्वरसिंहजी के आश्रित कवि भोगीनाथ की इस पुस्तक में सिद्ध होता है कि देव कवि बाल्यवृत्त ब्राह्मण थे, सनाढ्य नहीं।

काव्यप मोत्र द्विवेदि कुत्र काव्यकुत्र बभूवोय ।

देवदत्त कवि जगत में भये देव रमणीय ॥

४. प्रेम रत्ननागर—राजकुमार रत्नराज के आश्रित देवीदास का लिखा यह काव्य प्रेम की व्याख्या करने सुन्दर और वैज्ञानिक ढंग में करता है कि देवदत्त आदर्श कविन होता पड़ता है। साधारणतया इस प्रकार के काव्य भी हिन्दी साहित्य में नहीं मिलते। 'नवीन' का 'नेत्र-निधान' की कुछ इसी प्रकार का संघ है। प्रेम के स्वरूप का सुन्दर और सोझारण्य विवेचण इस प्रकार के जैसे काव्यों में ही मिल सकता है। इसकी जगह पर तो मे—

'प्रेम की निरूप', 'मीन हंस आदि की प्रेम' तथा अन्य अनेक उदाहरण दृष्टव्य हैं।

५. विचित्र रामायण—बनदेव वैश्य (लंडेन-वान) कृत्न यह रामायण वास्तव में विचित्र है। बानकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड के दार्शनिक प्रसंगों की निवारण कर लेप बया का विभाजन १४ अंकों में किया गया है। इस ग्रन्थ में काव्य और बया दोनों की प्रतिभा मिलती है। स्थान-स्थान पर केशव का भी स्मरण हो आता है। प्रकृति वर्णन इस काव्य की एक और विशेषता है। सुष्ठु काव्य की दृष्टि में यह पुस्तक एक उत्तम स्थान की अधिकारिणी है।

६. राधासंगम—पार्वती संगम, जानकी संगम तथा कृष्णसंगम के नाम तो सुने जाते हैं किन्तु मत्स्य के कवि सुमाई रामनारायण ने राधा संगम उपस्थित करके राधा और कृष्ण का विवाह भी विधि विधान से करा दिया है। इस पुस्तक में बल्यना का पर्युक्त प्रयोग है और प्रेम की विवाह पद्धति का सूक्ष्म तथा सजीव चित्रण फिर दूधामाती बरवाई। दुग्ध की झूठन दुग्ध गराई।

अथवा

छूटी तरकारी पानरि भारी और मुगरी भोज घनी ।  
बाधो घन प्याली माग मुगरी बेनी बारी जान बारी ।  
आदि की स्यादीय रसिब ही समझ सकेंगे ।

७. गिरवर विलास—कवि उदयराम विनिज यह एक ऐसा सुन्दर काव्य है जिसमें राम के स्वरूप की बगने के साथ-साथ प्रकृति का एक सजीव चित्र भी उद्भूत किया गया है। ऐसा सन्तुल्य होने लगता है जैसे कवि ने पर्वत, सरोवर, वृक्ष, रत्न आदि सभी की बगना प्रदान कर दी हो। रत्न प्रसंग प्राप्त तो वृक्ष की लीलाओं का एक सन्तुल्य चित्र आता है।



# राजस्थानी लोकगीत

लेखिका—लक्ष्मीकुमारी बूढावत

लोक साहित्य जन-जीवन का दर्पण है। जन मानस की भावनाओं, भावनाओं तथा कल्पनाओं का स्पष्ट प्रतिबिम्ब लोक साहित्य में जगमगाता रहता है। जन समाज ने अपने हृदय के समस्त रस और पीड़ा को उँडेल कर लोक साहित्य में भर दिया है।

कोटि-कोटि मानव ने अपनी अनुभूति और अभिव्यक्ति को शब्द-शरीर दे लोक साहित्य की रचना की। जन मानस ने वही कहा जो जन-जीवन में है। अपनी कामनाओं को दिखाया नहीं, इच्छाओं को दबाया नहीं और न ही आदर्श का आडंबर लगाया। जो बाह्य, जो समझा स्पष्ट शब्दों में कह दिया। जो महसूस किया उसे बिना भिन्नक के सरलता से गाकर कहा। मानस की दुर्बलताओं को भी साहस के साथ खोला दिया। रहस्य का पर्दा नहीं खोला। इसीलिए लोक साहित्य के सीले में सदियों से मानव अपने मनोभावों के प्रतिबिम्ब देखता आ रहा है। यही लोक साहित्य की महत्ता और विशेषता है।

यों तो विदग्ध भर के मानव के मनोभाव इच्छाओं, आकांक्षाओं और कामनाओं एक ही होती हैं। राग, विराग, मृगा और प्रेम सभी में हैं। मित्रों पर सभी की आँखें स्नेहाधु से सजल हुई हैं तथा बिगड़ने पर सभी के मदन रोये हैं। उन्सव पर आनन्दित होना एवं दुःख से दुःखित होना भी मानव जीवन का धर्म है। भिन्न २ देश एवं प्रदेश का लोक साहित्य, लोकमानस की सूक्ष्म भावनाओं के सुन्दर भीने पटों की भिन्न २ रूपों में खिलता है। जैसा कि उपर कहा गया है कि लोक साहित्य जन-जीवन

का दर्पण है। जन-जीवन के कर्मण्य जीवन में जो परिस्थितियाँ आती हैं, उनमें उत्पन्न कठिनाइयाँ आचार-विचार प्रकृति प्रदत्त मुक्तिधामों तथा दुर्वि-धामों की अनुभूति और अभिव्यक्ति लोक साहित्य में स्वतः समाविष्ट होती रहती है। प्रत्येक प्रदेश की भौगोलिक स्थिति, वहाँ की रहन-सहन, ऐतिहासिक तथा धार्मिक परम्पराएँ, वहाँ के लोक जीवन में विविष्ट प्रकार की भावनाओं को मूर्त रूप देती रहती है।

राजस्थान की अपनी विविष्ट ऐतिहासिक परम्पराएँ रही हैं। गाथादिनों तक पुरुष तनवार की धार से और स्त्रियाँ जोहर की ज्याना में मीनती रही। यहाँ के जन साहित्य में प्रीति, वीरता और अनिदान की भावनाओं का सर्वोत्तरी होना उचित ही है। जन जातियों में भीव मानता विविष्ट स्थान रखते हैं। मुगलों के सगलार आक्रमणों में मेवाड़ की रक्षा करने में इनका महत्वपूर्ण योग रहा है। इन्होंने अपनी भावनाओं को लोक साहित्य में शब्द का रूप दिया है। मुँड होता है। भीव तीरों की वर्षा कर रहे हैं। भीवनिवा सँकाओं को सगलना पट्टेबाजी है। वे छूटे हुए तीरों की चुन चुनकर, भीवियों में पत्थर भर-भरकर भीवतीरी की में जाकर देती रहती हैं। ऐसे रूप उनके हृदय पटन पर अंकित हो जाते हैं। उन समयों की याद दिना भीवनिवा भीवों की का साकर उमास्ति कानी रहनी है। आकरनी सिम्बर के मन्नात्र बहादुर भीवों की भीवनिवा जब मन्नी में जाती है, हृदय पटन उठता है—

मानविये रहने माँदर साते,  
 झूँगरिया मे पात रंगीना भीव जी  
 हो रंगीना भीव जी.....  
 भीवजी बी टूटी भावको  
 सिरदार रा टूटा सैन  
 हो रंगीना भीवजी - - -

रंगीने भीव, यहां मानस मे तो मन्दार काटने  
 है। हमें तो मेवाह के पहाड़ों में ले बने। पार्वत्य  
 प्रदेस के साप २ मेवाह के पहाड़ों मे उनका बंरा  
 परम्परागत मोर, फिर उन पहाड़ों के साप-साप  
 बीरता की दार बने न दारे ?

मानविये रहने माँदर साते,

शक्ति जमा कर ली थी। ये सूर्य सनोः कर  
 माँदने सने थे। पटेल, तुम 'मारे जाओगे। हो  
 तुम मारे जाओगे। इन समय तो तुम्हारे विर  
 बर्तनी हवा मे झोने सा रही है। तुम्हारा वि  
 ऊंचा है। पर हमारे हाथ से युद्ध में मारे जाओगे  
 देवाने नहीं, यह साक्षात्की बा देन मेवाह है। इ  
 पर ऊंचे २ उनके भूरोने हैं और नीचे बीरने  
 सागर भरा है। पटेल, राजा बनने की इच्छा है  
 की तोड़ दो, दानवा तुम्हारी भंषा लेने जाते  
 सम्मानो। इसी में तुम्हारा कायदा है। राजा बने  
 के मानस में तुम हमारे हाथ से मारे जाओगे॥

वीररूपकी राजस्थान लोक साहित्य में पग पग पर उत्कट प्रेम की गाथाओं और गीतों का मिलना नितान्त स्वाभाविक है। यहां के जन साहित्य का दावा है:—

“मरू घारे देस में, नीपजे तीन रत्न,  
एक डोलो, दूजो मातण, तीजो बसूमल रंग।”

इस देश में तो तीन रत्न पैदा होते हैं—मरूचा प्रेमी, प्रेमिका और तीसरा बसूमल रंग जो वीररूप और प्रेम का प्रतीक है।

सूमल के मादक सौन्दर्य की मुग्धता में समूचा राजस्थान महक उठा था। बल्लभ के कुसुम सी सूमल को प्राप्त करने को अनेक हृदय बिगल हो उठे।

महेन्द्र के वीररूप और वीर्य पर मरू की उस अपूर्व सुन्दरी का हृदय रीझ गया। सूमल और महेन्द्र की प्रणय गाथा की कौटि २ बंटो ने गाया। बिना पके हुए सदियों में राजस्थान भाज भी उसी स्नेह और उमंग से गाता है। इस लोक गीत की ध्वनि में ही कोई चमत्कार है। सुनने वाला भावुक हृदय सिर घुमने लगता है :

बाळी रे बाळी बाजळिया री रैलही रे  
हां जी बाळीही बांळ मे बसनें बीजळी  
म्हारी बरसा री सूमल हाने नी धालीजा रे देस  
म्हामो सूमल मादलियो रे भेट भूँ  
हां जी बरियां तो राख्या सूमल बेसडा  
म्हारी जग मोठी सूमल हाने नी धालीजा रे देस  
सोमइलो सूमल रो सख बारेळ भूँ  
हां जी बेसडला मादेची रा बातण नाग भूँ  
म्हारी जग धाली सूमल हाने नी धमराणे रे देस  
माकडलो सूमल रो खाडा री धार भूँ  
हांजी रे बांलडरदा रंग भीरी री रत्नरळिया

म्हारी धमरत भर सूमल हाने नी रमोला रे देस  
होठडला सूमल रा रैसमियां तार भूँ  
हां जी रे दातडला भजळदंती रा दाडम बीज भूँ  
म्हारी हरियाळी ए सूमल हाने नी रसिया रे देस  
पेटडलो सूमल रो पीपळिये रो पान भूँ  
हांजी रे हिवडलो सूमल रो साने दानियो  
म्हारी नाडुकडो सूमल हाने नी धमराणे रे देस  
जापडली सूमल की देवळिया ग पंभ भूँ  
हांजी सापळही मरीठी पींठी पानळी  
म्हारी मादेची सूमल हाने नी धमराणे रे देस  
जोई रे सूमनडी ए मोडवाणे रे देस में  
हांजी रे माणी रे सूमल ने राणे महंद रे  
म्हारी जैसाणा री सूमल हाने नी धमराणे रे देस ॥

प्रकृति देवी इस प्रदेश में विशेष प्रसन्न नहीं रही। एक और बाजुबापय अनन्त मरू मागर दूमरे छोर पर धारावती की पथरीनी पहचिपों। यहाँ का जन जीवन कठोर धममाध्य रहा है। यहाँ के पुरुष वर्ग को व्यवसाय में निमित्त और मुक्त की चार्करी में विशेष कर बाहर ही रहना पड़ा। पीछे में विरहणियों ने प्रकाश पति की याद में, उन्हें उगावम्भ देने दीप्त घर धा जाने की विनती करने हुए न जाने कितना साहित्य रच बना। वीररत्न लक्ष विद्योपनिष में जलते हुए धरने मानस की समस्त मधुर स्मृति और विरह पीडा की मोहनीयों में भर कर समुद्र और विष की बुँटे के पीनी रूँ और विनाडी रही। इसी दबाव और मानसिक दूष ने यहां के मोहनीयों को मार्मिक बना दिया और उनमें हृदय की विमोहित करने की क्षमता भर दी। विरहिलों को वकल माना है। कितना सुन्दर और स्वाभाविक विचार है उनका:—

नो तो मातो मरु सुनसतो जी म्हात्ता राज ।  
 म्हात्ता तो मोहलो मोरी रा पांव रो जी  
 मुता मे देवता मंजरजी ने मास्ता जी  
 मोई माथे पचरण ए जी पाग  
 मोई मरुत ए जी कमाव  
 मोता मे मोमी प्यारो प्रेम रो जी  
 मोहला मोहलजी भंडर जी रो मपकी जी  
 मोई देवती ठनवतो ए जी ए मेन  
 मोती रे भांगला गुहरो गुग रितो जी  
 मोतरा बापी भंडरजी ठाल मे जी  
 मोई मेन पारो पचगळ  
 मोता प्यारवा पारजी मेन मे जी  
 मोता प्यार मेन भंडरजी बड पाला जी  
 मोई मोहला पाला रा बडरु वितात  
 मोहला मोही मोहलपार रो जी  
 मोता प्यार पार रो जी बरि जी  
 मोई गुहरो ठालो पचर रो बडर  
 मोता प्यार गुग बरि जी  
 मोहला रो जी बरि बरि बरि जी  
 मोई भांगला पचर पचर  
 मोता रो पारो पचर रो रो पचर  
 मोता पचर रो पचर पचर पचर रो  
 मोता पचर रो रो पचर पचर  
 मोता पचर पचर रो रो पचर  
 मोता पचर पचर पचर पचर रो

## पीर का घनत्व

—श्रीमती रेगा बर्मा

रामपुरी, रामपुर, बिहार

यह पास की रातो पड़ी देखें  
 मोन हैं  
 जैसे कि इनको बाल हो के सामिया-  
 गुग की मोहला हो  
 मूत-भंडर मे भर पारि माने हैं  
 मोर नीचे  
 मारवेट मे पुंघातो-पनिता  
 दो पेमे पाव  
 दो घाने मेर  
 कि जाने तीन 'हार' ?  
 कौता भी होमे हो ?  
 मोहा भी चित्ती हो होमी ?  
 मोर पाग के रमरे मे  
 पचपच, पचपच की पचिती ?  
 'पानी' का पचपच बरि होवा ?  
 एक पचर ? हिमरु पचर ?  
 बेचर ? मोन ।  
 पचर ? मेरी मोहला  
 बरि कि तुम बरि हो ?  
 पचर हो ?  
 पचर हो पचर कि होम हो ?  
 पचर हो पचर पचर ?  
 पचर पचर पचर ?  
 पचर पचर पचर ?

# राजस्थानी साहित्य : परम्परा और प्रगति

श्री रावत सारस्वत, संपादक, मरुवाली, भीरामगंज, बनीपार्क, जयपुर ।

राजस्थानी साहित्य की परम्परा का आदि मूल समग्र एक हजार वर्ष पहिले के उस ग्रंथकार मुनीन कान में छिपा हुआ है जब भयभ्रंशों से देश भाषाओं का जन्म हो रहा था। तत्कालीन कतिपय जैन ग्रंथों में प्राचीन राजस्थानी के फुटकर दूहे प्राप्त हुए हैं। चौदहवीं शताब्दी तक प्रारम्भ के चार पांच सौ वर्षों में राजस्थान, गुजरात और मानवा के विद्यालय भू भागों में बोली जाने वाली इस भनामदेया लोक भाषा की विविध उत्पत्तनीय सामग्री सभी प्राप्त नहीं हो सकी है। पर पंद्रहवीं से उन्नीसवीं के मध्य तक की चार-पांच शताब्दियों में गुजरात, बाठियावाड़, मारवाड़, मेवाड़, डूंगड़ा आदि विभिन्न प्रदेशों में इस भाषा के विभिन्न रूपों में विद्यालय साहित्य की सृष्टि हुई। गुजरात और राजस्थान की भाषाएँ इस संयुक्त परिवार में मोलहवीं शताब्दी में ही पृथक् होनी प्रारम्भ हो गई थी और अनेक प्रकार के साम्य के रहते हुए भी मात्र गुजराती और राजस्थानी दो पृथक् भाषाएँ हैं। राजस्थानी का यह समृद्ध परिवार अग्रप्राथम्य रूप में अजमेर, पंजाब और सिंध की भाषाओं पर भी अपना स्पष्ट प्रभाव छोड़ता आया है। राजस्थान के देशी राज्यों ने अंग्रेजों की सामना रबीकार कर राजनैतिक दृष्टि से निरिचलता प्राप्त की तभी से राजस्थानी साहित्य की अथोदधि प्रारम्भ हुई, जब राजाओं को न तो और गीत सुनाने वाले चारणों की वादयंत्रता थी और न अन्ति साहित्य को पढ़ने-सुनने के ही संस्कार उनमें रह गये थे। अंग्रेजों के संपर्क में उनकी भारतीयता उन्हें खो

रही थी और पूरे पाश्चात्य सभ्यता में रंगे हुए वे साहित्य और कला को प्रथम देने की अपने पूर्वजों की परम्परा भी त्याग रहे थे। राजस्थानी भाषा और साहित्य का यह सुगुणित काल सन् १९३० तक प्रायः डेढ़ सौ वर्षों तक चलता रहा। जनमानसों और भाषाओं की खोज करने वाले योरोपीय विद्वान् संस्कृत साहित्य के समत्वार्थों में आकर्षित होकर भारत की ओर आने लगे हुए। उसी समय बर्नल टॉड के 'राजस्थान इतिहास' में प्रेरित होकर देश-विदेश के पुरातत्व वेत्ता राजस्थान की ओर भी मुड़े। इसी समय में राजस्थानी के पुनर्जागरण का काल प्रारम्भ होता है, जो एक ओर राजा राजा और प्रजा की भाँगे कर भारतीय राष्ट्रीयता के पुनर्स्थापन के प्रयत्नों और दूसरी ओर अंग्रेजों के स्थान पर हिन्दी की प्रतिस्थापित करने के आन्दोलन में सनद होकर अपनी परिधि के विस्तार में अनेक देशों के व्यक्तियों की सम्मिलित कर चुका था।

राजस्थानी साहित्य का समृद्धिमान काल में मुस्लिम शासन के समाप्तान्तर बनता आया है। जिस समय मध्य एशिया में उठकर आती हुई रस्तामी लकियाँ एक के बाद एक भारत के अत्युप स्वर्ग अगार में आवाहित हो 'बर्ब मुन्द' करती हुई आ रही थी, उस समय राजस्थान के राजपूत कुलों के अन्तिम उन्माद सामना करने लगे। कोई दूसरी लक नहीं थी। इन लक के अन्तर में के रूप में आत्मा-आत्मा का अन्तर का साहित्य था। इस साहित्य के अन्तर में ही और

यम के गीत सुनने की कामना रखता था और उनके लिए कुछ और बात में यीरता दिखाने के लिये प्रयत्नशील भी रहता था। दिग्गज का यह सुविख्यात साहित्य संस्कृत साहित्य की परम्परा में प्रभावित होते हुए भी बनने मान में एक अभिन्न प्रयोग था। इसका बनना प्रयोग एवं विधान और संस्कार मान्य भी था। दिग्गज का यह साहित्य यीर और दण्ड की दो प्रत्यक्ष धारों में प्रवाहित हुआ। भाषे दिन के दुर्गों में यीर रस का साहित्य बनना अतिरिक्त प्रयत्न कर चुका था।

विषय सम्मिलित थे। संघों की टीकाएं होती गईं जिनमें थोड़ी गद्य तथा दोष पद्य में दो। इन संस्कार और कोय संघों का निर्माण भी दिग्गज।

राजनीति के प्रभाव से प्रत्यक्ष प्रभाव ही साहित्य का सुजन कार्य राज्यद्वारा और इत्यादि के उपायों और ज्ञान अंशों की समान भाषा में रहा था। साथ ही राज्यशासक के दूरे होने के संरक्षण का कार्य भी इन प्रयत्नों द्वारा किया जा रहा था। जैन विद्वानों के उगी प्रयोग के द्वारा राज्यमान्यता अंगीकारित एवं और बिना अंगीकार

बीकानेर राज्य के जिस २ स्कूल में अध्यापक बनकर आए वही उन्होंने राजस्थानी के कवियों की नई पीढ़ी उत्पन्न की। उनकी शिष्य परम्परा में आज भी अनेक अछूते कवि हैं। बीकानेर से यह नई लहर जोधपुर गई जहाँ राजनीति के क्षेत्र में लोक भाषा को राष्ट्रीय मान्यता के गीतों की वाहिनी के रूप में पहिले भी सम्मान मिल चुका था। फिर भी इस लहर में नई रचनाओं की प्रेरणा मिली। बाधु-लोक काव्य का दूसरा युग श्री मेघराज 'मुकुल' की 'सैनागो' में प्रारम्भ हुआ जिसने राजस्थानी के प्रति अनुरक्ति जाग्रत की। मुकुल ने प्रेरित होकर अनेक लेखों के कवि सामने आए। मुकुल का प्रेरणा स्रोत राजस्थान का इतिहास था तो उनके बाद आने वाले कई कवियों ने लोक जीवन, किसान आदि को अपने काव्य का विषय बनाया।

इस बाधुनिबन्धता से प्रेरित रहकर प्राचीन राजस्थानी का प्रवाह भी मंद गति में चलता रहा। दोहे, गीत और छप्पय आदि छंद निरखे जाने रहे। इस प्राचीनता को नया बना पहिनाने वाले राजस्थानी के प्रथम काव्यकार बादली के कवि श्री चंद्रमिह थे। बादली का जो सत्कार भारतीय विद्वानों द्वारा हुआ उसमें राजस्थानी कवियों का उत्साह बढ़ बना। दिगम्बर प्रेरणा लेकर उधर जोधपुर में नारायणसिंह ने सुन्दर रचनाएं कीं। नारायणसिंह में नवीन और पुरातन का अभिनव सम्मिश्रण है। उनकी 'सोम' बाधुनिबन्ध काव्य प्रणाली का उत्तम उदाहरण है। गजानन ने लेख कतिहान और चर आदिन के गीत निरखे तो रैवणदास ने दीर्घ किसान की काव्या

की खोज कर दिखाया। भानाबाद के रघुनाथसिंह हाडा ने अपनी निराखी ही छटा में प्रति सुन्दर रचनाएं प्रस्तुत कीं। हाम्य रस के भी कुछ कवि सामने आए जिनमें विमलेश की रचनाओं का व्यंग्य मराहनीय है। 'उस्ताद' और सुमनेस जोशी की रचनाओं में उनके राजनैतिक जीवन का जोश सुगन्धित हुआ। मनोहर शर्मा की अपनी शैली उनके अनेक काव्यों में ठेठ राजस्थानी जीवन की भावियां प्रस्तुत करने लगीं।

बहानीकारों में नृसिंहराज पुरोहित, मुरलीधर व्यास, श्रीलाल जोशी, सोभागसिंह, रानीचंदमी बुनारी, दामोदर प्रसाद आदि अनेक नाम उल्लेखनीय हैं। अनुसंधान के क्षेत्र में श्री नरोत्तमदास स्वामी, सीताराम सावा, धनरचन्द नाहुटा, डा० भीतीलाल मेनारिया, बन्धैलाल सहन, मनोहर शर्मा प्रभृति विद्वानों ने राजस्थानी की विनोदनाओं को हिन्दी जगत के सामने प्रस्तुत किया।

आज राजस्थानी का क्षेत्र पहले में कई गुना अधिक विस्तृत है। राजस्थानी का प्रतीकन इसमें दूर रहने वाले विद्वानों को भी अनेक कारणों से अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। राजस्थानी का बृहत् कोष बन रहा है तो भारत की सभी भाषाओं में एक मराहनीय बन्धु बन कर रहेगा। राजस्थानी का भविष्य स्वर्णिम दीप्त रहा है। जन पदीय भाषाओं और संस्कृति को प्रोत्साहन देने की ओर युग का ध्यान आ रहा है और यदि यही गति रही तो बहुत दूर नहीं जब राजस्थानी को अपनी कोला स्थान पुनः प्राप्त हो सकेगा।

# आधुनिक राजस्थानी पद्य की प्रवृत्तियाँ

श्री भुवतिराम सावरिया, जोधपुर

तत्पश्चात् छोटे बचन का मुख्य सम्बन्ध राजस्थान की अपनी सांस्कृतिक विविधता है। एक छोटे बड़े राजस्थान ने अनगिनत कविदासों द्वारा भारतीय स्वतंत्रता का बीज निरन्तर प्रकटित रखा है, वहाँ दूसरी छोटे साहित्य निर्माण के क्षेत्र में भी बह बहानी रहा है। इसी साहित्य के सादरभाव (बीर भाव) का सम्बन्ध मात्र ही साहित्य

परिस्थितियों के कारण राजस्थानी की देव के संविधान में मान्य होकर राष्ट्रीय भावों के रूप में नहीं मिल सका है किन्तु बहानी ही बीज के इस युग में अपनी गौरवमयी परम्परा साहित्य के विषे अपनी भावा का बहानी राजस्थान ने अपनी बिर बिर उदात्तता का रूप बन बिना है। जाना सब हुआ हो हुने भी रा

प्रवृत्तियों पर ही प्रकाश डालना है इसलिये हमारा ध्यानोन्मत्त काल विगत ५० वर्ष अर्थात् प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के बाद का ही है।

## (१) वीर काव्य प्रवृत्ति:—

“राजस्थान की चप्पा चप्पा भूमि समाधिवासी है।” (कर्नल टाड) ऐसी वीर प्रभुता भूमि में वीर-पूजा का विषय महत्व है। राजस्थान में शायद ही कोई ऐसा वीर, जूझार या सती हुई है, जिनकी पुण्य स्मृति में एकाध सुन्दर गीत की रचना नहीं हुई हो, एकाध दोहा नहीं लिखा गया हो। समग्र राजस्थानी साहित्य इस प्रकार वीर साहित्य की समृद्ध धारा है, जिसने आधुनिक नेता पं० मदन मोहन मालवीय और महाकवि रवीन्द्रनाथ पर अपनी प्रमिट छाव छोड़ दी। अपनी इस शानदार परम्परा को राजस्थान का आधुनिक कवि पूर्ण उत्तरदायित्व से निभाये जा रहा है। साहित्य में ‘रजवट’ की प्रेरणा देने वाले महाकवि मूरजमल मिश्रण के पद बिन्हो पर चलते हुये अनेकानेक कवि और प्रवासी ग्रंथों का निर्माण किया गया है। रव० हिंगराजदास बबिया वृत्त ‘मुगया महेन्द्र’ एक ऐसा ही उत्कृष्ट काव्य ग्रंथ है जिसमें कवि ने

अपने आश्रयदाता ठाकुर मेरसिंह द्वारा तलवार में किये गये सिंह की शिकार का सुन्दर वर्णन किया है—  
सजि सारदूळ हाथळ सबळ, जौम बवल माथे जही।  
बड़काय गैण हूँतां बिना, पन्नय पर तडित पढी॥

सोन्याणा के स्व० बेसरीसिंह बारहठ ने प्रताप चरित, राजसिंह चरित, दुर्गादास चरित, कठी रानी आदि अनेक चरित-काव्यों द्वारा इस प्रवृत्ति को पुष्ट बनाया है। श्री मनोहर वार्मा वृत्त ‘भरावली की आत्मा’ और श्री नारायणसिंह भाटी विरचित ‘दुर्गादास’ जैसे प्रवासी-काव्यों द्वारा सेखरद्वय ने इसी परम्परा को आगे बढ़ाया है। जाति भेद और स्वार्थ रहित परम स्वामिभक्त दुर्गादास की प्रवासी कवि ने आधुनिक युक्त-छंद में इस प्रकार गापी है—

धीरज न इतो धारे हियो  
कं धामरा धारो जत दरमाऊ प्रबंध माही,  
बधियो न बिगो बंधेज मन-पन—  
तो बंधे किम धमीणा छंद माही ?  
दोयण कुण धारा दुर्गादास ?  
दोयण मां भोयरा तूभ दोयण  
न हिन्दुमां हेन हय पाड़िया,  
न मुगल बारबा बाडावी भावी,

१. (प्र) संसार के साहित्य में उनका निराला स्थान है। वर्तमान काल में भारतीय नवयुवकों के लिये तो उनका अध्ययन अनिवार्य होता चाहिए। —मानवीयजी

(ब) मे तो उनको (राजस्थानी वीर गीतों को) संत साहित्य में भी उन्मृष्ट गमनाता है।  
“मुझे धिनिमोहन सेन महादास में हिंदी काव्य का आभास मिला था, पर मात्र जो मैंने पायी है वह बिल्कुल नवीन वस्तु है। ..... मात्र मुझे साहित्य का एक नवीन मार्ग मिला है।

२. महाकवि मूरजमल के प्रमुख धार अन्य ये हैं - (१) बंगमास्वर, (२) बोर मनमई (३) बलवन्त बिनाम और (४) रंदांमदय।

धामोत-धामरा-दुर्गादास। हय पाड़िया-दुष्ट में धोहों को बाट गिराना। बारबा-बाटने। बाडावी-नलवार



घोरां नै भासान, हांवा हरवल हातणी ।  
किम हानि कुळराण, हरवल साहां हांकिया ॥  
नरियंद सह नजराण, भुक् करनी मरमी जिवा ।  
पसरैनी किम पाण, पाण छतं पारो फता ॥  
सबळ चडावै मीम, दान धरम जिराणो दियो ।  
रळणी पंगत राह, फावै किम तोनै फता ॥

घोर इस प्रकार एक बार पुनः हमारे नेत्रों के सम्मुख महाराणा प्रताप और पृथ्वीराज राठोड के पत्रों में उपस्थित हृदय को नाकर चित्रित कर दिया है ।<sup>१</sup>

बन्हेपालाल सेठिया ने 'पानळ घोर पोपळ' में इसी हृदय को हमारे सामने नई भाषा घोर नई चेतना के साथ स्वाभिमान के प्रदीप स्वरूप इस प्रकार जलाया है—

पीपळ, के तिमता बादळ री,  
जो रोकै मूर उगाळी नै ।  
मिषो री हापळ सह लेवै,  
बा कूल मली बंद रपाळी नै ॥  
भरती रो पाणी पिबै,  
इसी बानव री भू च बणी बोनी ।  
कूबर री कूंग्ण जियै,  
इसी हाथी री बाण मुण्णी बोनी ॥  
घा हाथो मे तनवार चकां,  
कुण रीड बें वै है रजपूनी ।  
स्याना रें बदनै बैरपां रें,  
छापा मे रेंवैको कूनी ॥

(२) राष्ट्रीय धारा—एक प्रतीम रूप के अभाव में जन जागरण की वेना में राजस्थान पिछड़ा रहा । उसकी समूह भावना को प्रेरणा न मिल सकी और उसकी शक्ति मुक्त तथा विशुद्ध न रही । देशी राज्य इस मार्ग में बाधक बने । जनता दो पाटों के बीच में घुन की भांति रिसकर भी ब्राह्म न भर सकती थी । ऐसे समय में भिन्न २ राज्यों में स्थापित प्रजासंघों और प्रजापरिषदों ने मंजीवनी मा कार्य किया । राष्ट्रीयता की वह उन्मत्त सहर जिसमें सारा देश प्रवाहित हो रहा था, राजस्थान ने अनेक बलिदानों से सक्रिय योग दिया । फलस्वरूप जब सारा देश स्वतन्त्र हुआ तो राजस्थान की इहीम रियासतों का विस्मितीकरण होकर एक प्रान्त का रूप धारण करना, घमंड भारत की एक कानिहारी घटना थी । स्वतन्त्रता—आन्दोलन के साथ एक भाषा का महत्व भी राष्ट्रीय नेताओं और जनता ने समझा । परिणाम स्वरूप हिन्दी का राष्ट्रीय स्वरूप रिश्मिल हुआ । पर राजस्थान के नेताओं को यह भांपने में तनिक भी देरी न लगी कि यहाँ की जनता के पास पट्टचने का माध्यम हिन्दी नहीं है । वह तो राजस्थानी है और इसीलिये यहाँ के अग्रगण्य नेताओं में सर्व धा माण्डियवाच वर्मा, जयनारायण व्यास, हीरानाथ शास्त्री प्रभृति कवि हृदय राजनैतिक नेताओं ने राजस्थानी भाषा में बोल व गाकर जन-जीवन में चेतना डूबी । मेवाड़ के विमानों की उड़बोहिन करने हृदय भी वर्मा ने गाया—

बे कुरमी पर पू कुर्या मे,  
बे दादी पर बुं बुना मय,

(१) इस ऐतिहासिक मान्यता को कि पृथ्वीराज राठोड ने महाराणा प्रताप को पत्र लिखा था, कई इतिहासकारों ने इतिहास विरुद्ध टहपाया है । (घ) महाराणा प्रताप पू० ११८-११९ (वे०) डा० एम० धार० वर्मा । (ब) Mewar and Mughal Emperors-by Dr. Gopinath Sharma.



रे धा वा भोळी हूंमी जिजा के मरती वेळी भावै है ।  
 रे धा सागण काळी जहर जिजा  
 बाळां मे इमरत लावै है ।  
 इणा धुंभाधार रे भाचळ मे  
 इक जोत जगै है जगमगती,  
 भंधार घोर भाधी प्रबण्ड,  
 भा धुंभाधार धब धब करती ।  
 भावै है उर मे भाग लियां  
 गढ कोटां बंगलां नै ढहती ॥

विद्रोह वा संडा लडा करते हुये श्री गणेशीनाथ  
 'उम्ताद' भगवान और बवि मे किमानो और मज-  
 दूरो की दयनीय दशा का कारण पूछते हैं—

भां बमतारिया रा हाथ हेम सूं जडिया  
 जद मे क्यूं भूगां मरिय ?  
 बविराजा । इणरो म्यानो<sup>१</sup> दो,  
 ठाकुर जी । ये हरजाणो दो,  
 मे भरी बमाई खावै  
 घरती रो धन उपजावै  
 बसूं जग भावैरा मोह पणां मे पहिया

प्रगतिवादी अन्य बवियो मे सर्वथी भीम पड्या,  
 स्व० मनुज देपावन, प्रेमचन्द रावळ, बानसिंह भाटी,  
 विमलेन्द्र, सूर्यदासर पारीक आदि प्रमुख है । थी  
 भीम पड्या 'दिवनै री जोत' मे दीपक मे साम्य-  
 प्रकाश ला देने की प्रार्थना करता है :—

मे दिवनै री जोत !  
 जानि री भू<sup>२</sup> पहिया सूं लपट उठा दे ।  
 पगै बैग सूं लया भगेटा  
 महलां री खोटी पह्या दे ।  
 जरा लोस निरपणु री नीटा  
 महलां मे गुल सूं दोडा है

धारी कापी नीद तोड  
 भू<sup>३</sup> चेतो अब बराबी रहजै ।  
 मे दिवनै री जोत !  
 अब भू<sup>४</sup> एक सरोसी जपती रहजै ॥

(४) प्रकृति काव्य धारा:—प्रकृति ने अपना  
 अवशुंठन उलट दिया है । अपने मन्त्रे धारापकों को  
 पाकर उमने अपना रंग २ खोजकर, बरदान स्वरूप  
 उनके सामने रख दिया है । उपमानों के नये हीरक-  
 हारो को पहिन, नई सज्जा और नये धानम्बन मे,  
 जब वह हम धरा पर उतरी तो 'मेठिया' का 'जेत-  
 डरो' प्रकृति देवी का स्वागत करने को प्रस्तुत हुआ:—

म्हारै मुरपर रो है सांचो  
 गुग दुग सांचो मेजडनो,<sup>२</sup>  
 तिमो<sup>३</sup> मरै पिए दिया बरै.  
 है बरडी छानी मेजडनो ।  
 भांगू पी नै जीरो सीसो  
 मेक जगन मे मेजडनो,  
 नै मिट जामी विग धमर  
 रे येना एक जगन मे मेजडनो ॥

प्रकृति काव्य की इन परम्परा में एक मे एक  
 बदलर काव्य संपद व सुलभ प्रकाशित हुये है ।  
 बंसिंह की 'बादलों' और 'भू'<sup>४</sup> बर्षा और दीप्ति का  
 स्वाभाविक चित्रण है । 'भू' में स्त्रीगत शिरोबनायो  
 की चर्चि करने में बवि आश्चर्य महसूस छा है ।  
 वह स्वयं तो अपने रचित सूर्य के साथ रावरेण में  
 मस्त है, पर अपने ईर्ष्यानुस्वभाव की उन्मा के  
 कारण अन्य दम्पतियो को मिचने नहीं देनी :—

आप भवै बिग मोह मे  
 रहि है नीचै लडा ।

१. म्यानो—धर्म बगलाना, शूल्यो मुलमाना । २. सेजडनो—सेजरी, छानी वृत्त ।

३. तिमो—म्यामा । ४. भू—रामियो मे चलने वालो दुष्ट और बर्मे हवा ।



घोर मौनिकता है। राजस्थान के कण-कण में उनकी आत्मीयता है :—

रोही रोही<sup>१</sup> भटवतो, खेतो मोटा बार।

बितोई में घाज नहीं छै लीले रो घमवार ॥<sup>२</sup>

सीसोदयां रो देसइलो

धाने भेजे प्रेम-सनेमइलो<sup>३</sup>

घरती रो रगत पिपासा में

जीवन रो घाज भेदेसइलो ॥

(५) भक्ति-नीति प्रवृत्ति — राजस्थानी के प्राचीन धीर वाक्य की भांति यह प्रवृत्ति भी बड़ी समृद्ध रही है। मीरा धीर दाहू के इस प्रदेश में भक्तो धीर सन्तो का मार्गदर्शन जनता को बराबर मिलता रहा है। यह उन्हीं के व्यापक प्रभाव का परिणाम है कि भक्ति धीर नीति के गीत धीर दोहे अग्रणीत संस्था में घाज भी यहाँ की प्रतिष्ठित जनता के मुख में बात २ में सुने जा सकते हैं। बहुत लम्बे समय तक ये समाज में नैतिक-मौखिक शिक्षा के माध्यम रहे हैं। परन्तु बदलते हुये इस मायिक युग में नैतिक शिक्षा का महत्व धीर भी बढ़ रहा है। राजस्थान ने इस सम्बन्ध में पहल की। नये युग के नये भावों तथा उपमानों को लेकर ये मंत कवि धडा धीर समय का पाठ सिखा रहे हैं। महाराज अनुर्धतह इसमें प्रमुख है :—

ऐ मन छग ही में उठ जागो

ई रो नहीं है टोछ टिकारों,

ऐ मन छग ही में उठ जागो ।

ऐसा प्रतीत होता है मानो ज्ञान की राय-मोड़-रिदा में मे प्रसार बाटने हुये बड़ीर बीच रहे हो ।

मन की सम्भारना धीर दितलेवन की निपावे धीर पोतबाई की उपमा बिलती पड़ती है :—

बारड तो कहती किरें, हरकीनैं हकनाक ।  
जा रो ह्वै वहीनैं कहे, हियै निपाको राय ॥

इस परम्परा में सर्वश्री अमृतलाल माधुर की 'मारवाडी गीत राधायण', मनोहर शर्मा की 'घरा-बली की आत्मा', भोमराज के 'गूँघा मोती', मणि-लाल अनुर्वेदी की 'मरुभारती', उदयराज उज्ज्वल इत 'पूडमार' तथा महर्षि कान्त इत 'गुणवंती' आदि सुन्दर ग्रन्थ हैं, जिनमें समाज सुधार, धीर उद्बोधन आदि पर जहाँ एक धीर श्रेष्ठ सूक्तियाँ हैं तो दूसरी भक्ति-गंगा में निमग्नित करने की प्रबल शक्ति। 'पूडमार' में उदयराज उज्ज्वल सामयिक चेतनावनी देने हैं —

घाय लियो नह भेक उतम गुण धंगरेज रो ।

भोगण गह्वा भनेक मिरदारो सीजो समझ ॥

भोमराज 'मंगल' दुर्जन धीर बाटे की तुलना करने हुये कहते हैं —

कड़ो देवे पाह, मंगल बाटो बाह रा।

दुर्जन करे बिगाड, घायो छड़े मंगला ॥

नीति सम्बन्धी श्री माधेवान अनुर्वेदी की गति का रसास्वादन कीजिये —

नकटी नर का के करे, गयो क्या में तेन ।

घाने ग गडह के करे, मेकर के नारेछ ॥

व्याप्य अपने क्षात्र में मारक धीर सुधारक दानी क्षतियों का अधिनाशक होता है। तीसरे में बने चार लो वानवाहन व मार भर जाने हैं, पर व्याप-नाश के चार आधीवन नही भरने। दूसरी धीर व्याप टोकर मनुष्य में आधुनिक परिवर्तन ला देना है। राजस्थानी में प्रारम्भ में ही व्याप का विस्तृत स्वरूप रहा है, जिसमें न केवल दाह क्षति का क्षमनाप व्यापक कार्य सम्पन्न हो रहा है, पर मनुष्य

१. रोही-जंगल । २. मोले रो घमवार-महाराणा प्रताप । ३. सनेमइलो-नदगा ।

सुजन-वेना

थोड़ी भी तोड़ी मनी  
मूमा बिगड़े न्याय ॥

दिर भी 'दू' की मर्तार तनन और उनके  
पनाम धनदार की मान करके दूरे भी बरि की  
'दू' में पनाम ॥ - ये मूर्ख ही तो बरनात

सामयियों द्वारा बरि ने मूर्ख को  
है। ११५ संदी में संभवा-मुन्दरी के  
बार्मिनानो द्वारा बरि ने पनाम  
बना विना है। 'साम' में संभवा-  
दीनत की मने मर्षन में विनाये बर

मा की 'धृती री धुन' इस दिशा में बड़ी लोकप्रिय  
ही है। श्री मनोहर शर्मा के 'बुज्जी' के प्रतिरिक्त  
श्री सूर्यशंकर की 'जीव समझोतरी' और 'गुलामाष्टा'  
भी सफलता प्राप्त की है। कहना नहीं होगा कि  
य और कवियों का ध्यान आकर्षित करने में भारत  
विश्व लोक नृत्यकार श्री देवीलाल सामर का बड़ा  
भाग रहा है। लोकगीतों पर आधारित उनके गीत  
राज्य रंगमंच पर बड़ी सफलता में प्रदर्शित किये  
गये हैं। श्री मनोहर प्रभाकर और चन्द्रसिंह राठोड  
अवोदित गीतकार हैं। हमारे ये गीतकार हमें बरबस  
प्राचीन गीतों की ओर खींच ले जाते हैं, जो भारतीय  
इतिहास की विस्मृत कहियों को जोड़ने में बड़े ही  
समर्थक रहे। १८,००० दिगल गीतों के विमान  
संग्रह के बाद भी अनेक संस्थाएँ और साहित्यकार  
इस कार्य को पूर्ण नहीं कर सके हैं। राजस्थान की  
सम्पदा, सस्कृति और इतिहास को समझने के लिये  
उनका वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है।

प्रगतिवाद की छोड़कर विविध वादों के पक्षों  
में यहाँ का कवि नहीं पड़ा है। छायावाद, पराग-  
वाद और प्रतीकवाद की एकाग्र रचना का छोड़  
कर यहाँ विशेष प्रगति नहीं हुई है। नारायणसिंह  
की 'साध' में छायावाद की कुछ झलकें देखी जा  
सकती हैं। प्रो० गणपतिचंद्र भट्टारी की कविता  
'मिलसकण्ठे रो बाळ' प्रतीकवादी प्रवृत्ति का  
उदाहरण है।

### (७) अनुवाद प्रवृत्ति:—

(क) संस्कृत से:—राजस्थानी में अनुवाद का  
टीकापदी की परम्परा १४वीं शताब्दी में निर्धार  
की जा रही है। परन्तु साहित्यिक तान में अनुवाद

प्रवृत्ति का प्रारंभ महाराज चतुरसिंह की भगवद्  
गीता समन्वयी, गंगाजली टीका और भागीरथी,  
ठिप्पणी में होता है। फिर तो धडाधडा अनुवाद  
होने लगे। भगवद्गीता के चार और अनुवाद सर्वश्री  
हीराचान दासजी, रामचर्मा प्रायोग, मांगेचान  
चतुर्वेदी और विमलेश ने किये हैं। दुर्गा सप्तशती  
और 'महिम्न स्तव' के सुन्दर अनुवाद श्री गिरधारीचान  
दासजी ने किये हैं। महाकवि काचिदास का 'मेष-  
दूत' के अब तक प्रकाशित चार अनुवादों की भूरि-  
भूरि प्रशंसा सर्वत्र हुई है। अनुवादक हैं सर्व श्री  
नारायणसिंह भाटी, मनोहर शर्मा, मनोहर प्रभाकर  
व मांगेचान चतुर्वेदी। 'रघुवंश' और 'कुमारसंभव'  
के अनुवाद क्रमशः श्री चन्द्रसिंह और श्री विमलेश  
कल्याणदास कर रहे हैं। भर्तृहरि के 'शृंगार शतक'  
के अनुवाद का कार्य श्री मनोहर प्रभाकर ने पूरा  
किया है।

अन्य प्राचीन भाषाओं में पानी के 'धम्मपद'  
और प्राकृत के 'गाथा गल्पगती' के सुन्दर अनुवाद  
क्रमशः श्री मनोहर शर्मा और चन्द्रसिंह राठोड ने  
किये हैं।

(ख) हिंदी में—विद्यापति की 'पदावली',  
तुलसी की 'कवितावली', रमणान के 'गर्बदे' तथा  
सूरदास के कविता 'पदी' और जयशंकर प्रसाद की  
'कामायनी' के अनुवाद क्रमशः सर्व श्री गोदान  
कृष्ण कल्या, मोमदन दा, मन्मथसिंह और रत्नचान  
चरण ने प्रस्तुत किये हैं।

(ग) इतर भाषाओं में—महाकवि रत्नच-  
ान दासजी की 'गीतावली' का सुन्दर अनुवाद  
रामचान दास ने किया है। पदों की 'Hindi'

१. राजस्थान भारती पृ० ७७ वर्ग ३ पं० २ दिगल गीतों के विमान में ८० बदलावों का उ-  
ल्लेख करते हैं, 'दिगल के गीत सूद का उल्लेख संस्कृत साहित्य में भी नहीं है, भारत की  
अन्य भाषाओं की भी बात ही क्या ? महिम्न स्तव की दिगल की यह संख्या देखें।'

में मुग़लों और तोहोमियों का प्रयोग एक और वास्तविकता तो यह है कि बीरता और इन दोनों को एक ही समुद्र में कंपकर यहाँ साक्ष्य रहित का मनोरंजन किया गया है। बीरता के गुण के विषे जहाँ एक और रीति, भवान्त काहि तने के काम किया गया है तो शृंगार, हास्य और इन दोनों के द्वारा इन प्रेमात्मकों को मोह कर दिया गया है। प्रायुक्तिक युग में इन पात्रों के स्वार्थ प्राप्त नहीं है भी मेषराज 'मुकुट', किश 'मेवाली' बतिया समेत हो गई है। हजोरा के करने मोहकता प्रति मे बतती है :—

बोली रज्जुगार, नाथ, काज मे मरी बफ़ारी लम्बा  
गवशार बग़ावो मे जागू, मे बुरी पैर से बर बारी

एलोटा हो जाने पर भी जू'बाज को बुरे दे-  
मंगा है और वह एक गिराही को बिलाले ली के  
विषे प्रेरणा है :—

मे मुग़लों और तोहोमियों का प्रयोग एक और  
रखा माना की समुद्र का दोनर तो है ही, वहाँ  
हुमरी और अमार अमार दावने मे इनका बडा  
हाथ है। बीने तो तोहि-तुने दोहो में गाथाएगुत्तया  
लीला अमर होग ही है, पर समुद्र बहियों की यह  
दीर्घागत शिरोनगा बन जाती है। मरुत के ऊपरदान  
मामर अमरनपान बहि है, किहोने कडिपरत जोगी-  
मुग़ मानसिक दीवारो को बजाय-बग़ाव मे और  
अन्तर्गत द्वारा दिने मे बफ़ाने का प्रयोग किया है।  
उन्हा 'गाल रा बाळ' गवश १६५६ के मयान्त  
हुमरा पर एक मुग़ल अमर है। रामनदेही मंदराज  
म बार बाहुनगा बी देन कर उलोने बग़ा पा -

मारा मु मे गवश, मारा मु बर मेन ।  
राह मे बग़ा तिर, मार म बाव मेम ॥

राह की मुने मरिमा पर 'बजदार बरामाज'  
मे इन अमर अमर है :—

वर्मा की 'धरती री धुन' इस दिशा में बड़ी लोकप्रिय रही है। श्री मनोहर शर्मा के 'कुर्जा' के प्रतिरिक्त श्री सूर्यसंकर की 'जोब समझोतरी' और 'घुलमाळा' में भी सफलता प्राप्त की है। कहना नहीं होगा कि इस और कवियों का ध्यान आकर्षित करने में भारत प्रसिद्ध लोक नृत्यकार श्री देवीवान मामर का बड़ा हाथ रहा है। लोकगीतों पर आधारित उनके गीत नाट्य रंगमंच पर बड़ी सफलता से प्रदर्शित किये गये हैं। श्री मनोहर प्रभाकर और चन्द्रसिंह राठोड नवोदित गीतकार हैं। हमारे ये गीतकार हमें बरबस प्राचीन गीतों की ओर खींच ले जाते हैं, जो भारतीय इतिहास की विस्मृत कड़ियों को जोड़ने में बड़े ही लाभप्रद रहे। १८,००० हिमाल गीतों के विद्यालय संग्रह के बाद भी अनेक संस्थाएँ और साहित्यकार इस कार्य को पूर्ण नहीं कर सके हैं। राजस्थान की सम्पत्ता, संस्कृति और इतिहास को गमभरने के लिये इनका वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है।

प्रगतिवाद का छाड़कर विविध वादों के पक्ष में यहाँ का कवि नहीं पड़ा है। छायावाद, पञ्चायनवाद और प्रतीकवाद की एकाग्र रचना की छोट कर यहाँ विशेष प्रगति नहीं हुई है। नारायणसिंह की 'साध' में छायावाद की कुछ भजना देखी जा सकती है। प्रो० गणपतिचंद्र भट्टारी की कविता 'मिनसपणे रो बाळ' प्रतीकवादी प्रवृत्ति का उदाहरण है।

### (७) अनुवाद प्रवृत्ति:—

(अ) संस्कृत से:—राजस्थानी में अनुवाद की शुरुआत १४ वीं शताब्दी में निरनर लक्ष्मी साहू की है। परन्तु साहित्यिक क्षेत्र में अनुवाद

प्रवृत्ति का प्रारंभ महाराज चतुरसिंह की भगवद् गीता समझोती, गंगाजनी टीका और भागीरथी, टिप्पणी में होता है। फिर तो धडाधड अनुवाद होने लगे। भगवद्गीता के चार और अनुवाद सर्वश्री हीराचान शाय्ही, रामचरण शाय्ही, मांगेचान चतुर्वेदी और विमलेश ने किये हैं। दुर्गा सप्तशती और 'महिम्न स्तव' के सुन्दर अनुवाद श्री गिरधारीचान शाय्ही ने किये हैं। महाकवि काचिदास का 'मेष-द्रुत' के अब तक प्रकाशित चार अनुवादों की भूरि-भूरि प्रशंसा सर्वत्र हुई है। अनुवादक हैं गन श्री नारायणसिंह भाटी, मनोहर शर्मा, मनोहर प्रभाकर व मांगेचान चतुर्वेदी। 'रघुवंश' और 'कुमारभार' के अनुवाद क्रमशः श्री चन्द्रसिंह और श्री विनोद कल्याणाकांत कर रहे हैं। भृगुहरि के 'शृंगार शतक' के अनुवाद का कार्य श्री मनोहर प्रभाकर ने पूरा किया है।

अन्य प्राचीन भाषाओं में पानी के 'धम्मपद' और प्राकृत के 'गाथा सप्तशती' के सुन्दर अनुवाद क्रमशः श्री मनोहर शर्मा और चन्द्रसिंह राठोड ने किये हैं।

(ब) हिंदी में:—विद्यापति की 'पदावली', तुलसी की 'कवितावली', रघुनाथ के सर्वदेव तथा मुरदास के कवित्त 'पदो' और जयराज प्रसाद की 'बामनाली' के अनुवाद क्रमशः सर्वश्री गंगाचान कृष्ण बन्ना, मोमदल दत्त, माधवसिंह और देवराज शाय्ही ने प्रस्तुत किये हैं।

(स) इतर भाषाओं में:—महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'गीताञ्जली' का सुन्दर अनुवाद रामनाथ शर्मा ने किया है। अन्य भाषाओं में भी अनुवाद

१. राजस्थान भारती पृ० ७७ दफ्तरे ३ अंक २ हिमाल गीतों के विषय में २० बहसप्रसाद काहिरिया कहते हैं, "हिमाल के गीत एक वा उच्चैः संस्कृत साहित्य में भी नहीं हैं, बल्कि वे अन्य भाषाओं की भी बात ही बना ? साहित्य स्तर को हिमाल की दृष्टि प्रस्तुत देन है।"

# सुख-वेला

written in a country church yard पड़ी चाकरी पूक धली जर पली  
 का 'मोहनो' के नाम से श्री विमानमिह बोहान मुस्ती बामण लोड़ रामगिरि का नि  
 ने मरुवाद किया है। जबकि उमर गौवान की रजाइयों जनक-मुता रे स्नान जेप रो निस्नान  
 के दो मुन्तर मरुवाद श्री मनोहर धर्मा य श्री समर- मोरी बिरदां हाँह जाय न बरें बामण  
 देवता कर चुके है। (नारायण निरुप)

मुत्तमानक सम्पदन की दृष्टि से नीचे लिखे-  
 पाठक धर्मो मरुवाद के माय उगुक्त दोनो  
 बरिपो की 'उमरगौवान' की रजाई दी जाछी है।  
 मरुवाद की बिदेस है कि दोनो में से हिमी ने  
 श्री मरुवाद पर ध्यान न देकर भासमुवाद पर  
 ही बर दिया है।  
 एक मरु मरुवापुर बरपो धातन ही मेरा बर  
 पन धारी रो मुप में मोरो बरो मुप बरें बरो  
 देस निजाळो भिलो दंड जर रामगिरि नारायण  
 जठे मरुप तर हाँह मुप्य जळ जग मरुप ही बरें  
 (परीवर बरु)

Awake! for morning in the hour of Night  
 Has flung the shadow that  
 And to the hour of Last has cast  
 His shadow - a long and dark of Night.

## उर्दू साहित्य

अज मोहम्मद इफ्तखार अली शमीम अधीशक, राज्य केंद्रीय मुद्रालय, जयपुर ।

यह बात बिल्कुल जाहिर है कि हर शब्द के लिये जवान और हर जवान के लिये शब्द लाजिम व मलजूम चीज हैं। राजस्थान नाम है इक्कीम खुद मुख्तियार रियासतों के रखे और साविका मुझे अजमेर मेरवाड़ा के रखे के मजमूए का। इस बात का भी ध्यान साहिबान की इत्तम है कि हर खुद मुल्तियार रियासत का जो बरीम हो या जदीद किसी न किसी तरह मुगलियाँ खानदान के बादनाहो में ताल्लुक रहा है और अजमेर तो साहाने वक्त का जियारत गाह भी था और बराहेरास्त साही दरबार से मुताल्लिक भी। जिहाजा उर्दू जिसको इबतदा दिल्ली में हुई या दक्कन में या पञ्जाब में, साही राजधानी में राज होने के दिनों में राजस्थान में कुछ दूर नहीं रही। मुझे इसी जवान के शब्द की बात कुछ धर्ज करना है। मतबतला मामुनासिब न होगा अगर पहले यह धर्ज करदूँ कि जवान की तहकीकात करने वालों ने अपनी कोशिशों और खानकीन का मँदान या दिल्ली का बताकर हजरत अमीर तुमरो को उर्दू का बादा मादम माना है या साहजहानी लखर की जिसको उर्दूए मुफ्तदा कहा जाता था। बराजा हमनजिशी भरतूम ने मरीद तयारी करने हुए हजरत महबूब खाही गुनतान जिहाजुहीन कोशिश के हक में अमीर तुमरो और रामदेव की हमका मुश्रीद बरार देकर लखिब दारी की हम महब का संगे बुनियाद बरार दिया है। लखन वालों ने हजरत बराज सैद मोहम्मद ऐगू दराज बन्दा नवाज के खाने तक हमका लाह निबारा है यानी देखी कीदगी लदी।

मे बिचा गये तरदीद वह सबता हू कि राजस्थान के रेगिस्तान और कोह्मिस्तान में उर्दू के खान मोनी तपाश करने की जैसी चाहिये मेहनत नहीं की गयी। वरना मुमकिन था और है कि उर्दू का पीडा इसी सरजमीन में फूटना साबित होता था हो जाये। इसलिये कि हजरत बाबा साहब मोमूक के दादा वीर श्वाजागरीब नवाज अजमेरी या इन्ही के जमाने के बुदुर्ग हजरत मुनतानुवतारेकीन ख्वाजा हमोउद्दीन नागौरी की मादरी जवान फारसी थी और मुकाभी मोग इसमें नामुवाफिक थे। जिहाजा यह बुदुर्ग जिस जवान में यहाँ वालों में दुशगू करने होंगे और वे जिस भाषा में यह जवाब देते होंगे वह यकीनन ऐसी होगी जिसको एक दूसरा समझ सके। यही उर्दू की इबतदा है।

इस किमी बरदर लम्बी लमहीद में मेरा मकसद यह है कि राजस्थान जिस तरह जवान के बारे में पहले का मतबदा हासिल कर सकता है, उसी तरह हमका उर्दू साहित्य भी बहुत पुराना है। जिसके सबूत में निर्र एव बाए की तरफ मैं धारकी लखवाह दिखाना हू। धारने में बहुत में साहित्य बरिख होंगे कि अमीर मार्च १६१६ में अलफुनन तरकीए उर्दू काय जयपुर में एक बरनेनगन बिदा था। इस बरनेनगन में बिखरों की दुमदान भी की गई थी। इन्ही बिखरों में लख अफगन दोश का उर्दू तरबुदा भी था जो दरगो में गरी दक्कन लुटेरे में मुदरफिक रई के देनी बरनर पर बिखा हुआ था। इस बिखर के हजिब बरने



इसी तरह दिल्ली, लखनऊ, यू० पी० और  
दीगर मुकामात के कसीर राजस्थान में पाये जाते  
हैं। जूँ जूँ जमाना सुझरता गया और उर्दू जवान  
साफ होती गयी, राजस्थान के बायरो के घेर भी आसान  
मे आसान उर्दू मे बनने लगे। उर्दू भदब की सब मे  
बड़ी सिफत यह ही है और होनी चाहिये कि वह  
आसान जवान में आम केहम हो और इस हालत  
में अपना रंग कायम रखे। सुनाचे राजस्थान के  
बन्द पुराने बायरो के एक-एक दो-दो घेर इस  
बात के सबूत मे मुनाहिजा फरमाइये:-

(१) मीर जाजिद भली मशफता कहते हैं:-

रंजो गम बट जायेंगे दो चार दिन की बात है  
यह भी दिन बट जायेंगे दो चार दिन की बात है

(२) मोनाता तस्लीम फरमाते हैं:-

क्या भरोसा है जिन्दगानी का  
दिन अगर मे लिया तो रात नहीं  
अपना अपना पया है बसो रोना  
कोई हम मे यह बायनात नहीं

(३) मीर हैदर हसन जबी व यत्ता:-

जो उस गुन के बही नयों का चर्चा निकल आया  
अमन मे आज मुंह गुन्धो का इतना सा निकल आया  
रबीबे रुमियाह ने उन पे जाहिर की मेरी आज्ञा  
बयाने मुहूर्त मे मुहम्मद अरना निकल आया

(४) पंडित शिवदास बेच:-

जिनको खोले सुना है उनसे बेच,  
काम कोई कुरा नहीं होना।  
घादीमी गम का पतना साध है  
शिवदा देता यह जमाना साध है

(५) साहबजारा अहमद अपनी ली दीन:-

पन मे तोता है पन मे आटा है,  
सार बना है अरब तमाशा है।

(६) मिर्जा माइल:-

यल्हाह दुदमनी है बड़ी आदर के साथ  
जाना किसी के दर पे किसी आदर के साथ  
इसबाइयां उठाई और महुषा न निकला  
दिन के सिवा किसी को जब राजदा बनाया

(७) अख्तर मिर्जा अख्तर:-

बायद के मेइदे कि हवा इमको लग गयी  
दीवाना काम करने लगा होसियार का  
घाई बहार आए, सुती क्या बहार की  
अज्जाम जानते हैं जो होगा बहार का

(८) मंगूर अहमद बीमर:-

मुझको नहीं दिमाग गमे रोजगार का  
दीवाना हूँ कि काम कक' होनीपार का

(९) मायूक हुनैन अमहर:-

शोर मैंने तो किया नाचा पेशा होकर  
गुम पेशा न करो मुझकी पेशा होकर  
दिन मे पैसा तो बने आते हैं मेइमों होकर  
दिन मे अरमान निजने नहीं पैसा होकर

उर्दू साहित्य के हिस्सा मगम पर एक एनसाब  
यह किया जाना है कि इसके पुनरुत्पत्ति करने की  
इच्छा तो बूटे साथे जाते हैं या मझापी के मेइम  
मे बिदेगी पदपदान नजर आते हैं। यह एनसाब  
इस हद तक तो टीक है कि ऐसा उपास हुआ है  
अगर यह कि हिन्दुस्तानी पुन पन और हिन्दुस्तानी  
रिमो रवाज मेने टेने बलि हिन्दु धर्म की रवाजों  
और बाकिदात मे उर्दू साहित्य लायी हो बिनुब  
गनन है। बिहाइल करने कोन के मजुन मे हम लोग  
बाइलाह हुनेन राता मरतुम मेइबारा, पुनर बिनेज  
कोबानेर की सब मझी अजब मे मे लीन बन्द पैदा  
करते हैं कि जो उर्दू मे मुनवीदान और राजमग  
पर निकली की। बहने है -



# सृजन-चेतना



“अरसिकेषु कवित्व निवेदनम्—  
शिरसि मा लिख, मा लिख, मा लिख ।”  
—“नवभूति”

एक	मैं ऐसा हीरा जवाब हूँ	होय
दो	कमाली पौर	नया
दो	मेरे हृदय ने मुझे बताया	कमाल
तीन	यह मेरी है माया माया	उत्तम
चार	गीत	हीन
पाँच	बिरत गीत	हृदय
छी	मरा माया का प्रयास	बात
सात	क्या पति	नैय
आठ	माया का रंग	कौन
नौ	कहने के बग है वह घर	कौन
दस	कहना का कमाव	दरबेद
ग्यारह	कुम्हरी बिरताही	क्या
बारह	एक माया	मुझे
बात्र	हो कर	कौन
ग्यार	माया बिरताही	हीन
अठार	माया का प्रयोग	हीन
बीस	उप माया	माया
एक	बिरत गीत	माया



माननीय श्री हरिभाऊ उपाध्याय, वित्त मंत्री, राजस्थान, जयपुर

अनुराग कहे मधु है, रसने-  
 वैराग्य कहे हटजा, हटजा ।  
 अनुराग विराग ये द्वन्द्व छिड़ा-  
 भ्रम कहता है बहजा, बहजा ।  
 अज्ञान की चाह यही जग मे-  
 मुख साधन में लगजा, लगजा ।  
 पर ज्ञान पुकार कहे मन मे-  
 प्रभु के रग में रगजा, रगजा ।



प्रेम बहे में रस देता, आशीर्ष है मिलनी आदर में ।  
 फल-पुलों में रस है भरता, जीवन मिलता है सागर में ।  
 तन में तन मन जब मिलता है, तब प्रेम उगे सब बहने हैं ।  
 पर जब मन में मन जुड़ता है, तब आदर, सागर, सागर में ।  
 जब भारी नर का जोड़ा है, रस प्रेम पुहार बरसता है ।  
 भगवान का ध्यान रहे उनमें, भगवान है सादर आदर में ।



# सृजन का मान

जो रचना दिने १

गीतों का इतना मान, ध्यान से सुन लेते,  
भावों का इतना मान, हृदय में गुन लेते ।  
सपनों का इतना मान, मुग्ध उन पर होते,  
मत्थों का इतना मान, विचारों में गोते ।

कोई गीतों को कभी याद कर गा लेता,  
भावों को कोई भाव कदाचित ही देता;  
सम्भोहन में सपने सपने ही रह जाते,  
कब मलय सघर में ऊपर घरा तब साधने ।

## चतुष्पदियाँ !

•

एक कोई कम न रहा घोर गुनी गुनी न रहो ।  
एक गुनी गुम रहे कि कम कोई दुई न रहो ।  
मेरी हर मौन हर महर में बसे हो जेमे ।  
मुझमें जीने हो गुनी मेरी बिगनी न रहो ।

बहुत कम की हिरण्य मे मदन को बांधा ।  
बहुत-बहुत मे पारो के पवन को बांधा ।  
कहा गुनगो है कि कम-बहुत मे पारगो मे ।  
पौन-पौन मे पवन मर के हिरन को बांधा ।

कम का बहकाव का है मेरे सपन मे बांधी ।  
कम-पौन का कम है मेरी मरन मे बांधी ।  
कौन पार का मेरी हिरण्य मे बह दूरा ।  
कम का मेरे का कम है मेरी पन मे बांधी ।

—

—

# “गीत”

श्री ताराप्रकाश जोशी

फूलों की सौरभ का बंदी बनकर मैं बीमार हो गया ।  
बगिया वालों ! मुझे छोड़ो कौटो का चुम्बन करने दो ॥

बंद किया है मेरे तन को  
शीश महल के दालानों ने ।  
मन पर पहरेदार बिठाए  
शृंगारों ने मुस्कानों ने ॥

फिर भी मैं बेचैन बहुत हूँ मुख के सारे उपकरणों में ।  
मन परदे हटवा दो मुझको पोहा के दर्शन करने दो ॥

घरती ने जाया है मुझको  
पाम इसी मेरज बरग के हूँ ।  
बुटियाघों ने पाला मुझको  
पाम उन्हीं की घड़कन के हूँ ॥

युगो युगो में मेरे मन में मान बहून मेरी मिट्टी का ।  
सोने की झूलत हटवा दो मिट्टी का पूजन करने दो ॥

मेरे गीतों के मैघों को  
घाज शितिज पर ही मन टोको ।  
उन्हे घुमहने दो फिरने दो  
उन्हे बरसने में मन रोको ॥

मैं इस सारी दुनियाँ का हूँ यह सारी दुनियाँ मेरी है ।  
घाज मुझे जन जन के मन की चाहों का कीर्तन करने दो ॥

## मेरा स्वप्न : तेरी माया

• श्री शान भारद्वाज

मेरे द्वार रूप उस दिन या भीत भोगने माया,  
मेने धरने स्नेह-स्पर्श मे उसमें प्राप्त जगाया,  
मेरे स्वप्न स्वप्न की मलय, शिव, गुन्दरम् शोभा—  
मुझमें क्यों भीतेगी तेरी भुवनमोहनी माया ?

मेरी हो छाया मे ज्योतिष तेरे पौड मित्रादे,  
मूरज को मैने ही दान दिए धन्य उजियारे,  
धर को ध्यादत्ता ही है, मातर को महारई—  
मुझमें ही बरगा-त्रय मेरु मण्डप मकरादे,  
मैने ही उस दिन कृतो की मोद मुझे गोपी धी—  
धर बना मान बनेगी मुझमें तेरी बंजन-नामा ?

मेरी धामना का धन्य मनीष भुवन में मुजिष,  
तु बना, मेरे योग योग में मेरा जीवन मुगलिस,  
जिह्व तृप्तता दान बरणा की वेगाएँ शीघ्र—  
तु बना, मेरे जग जग की धरियाँ बरहुँ विजिष,  
धरिद्वय बरहुँ गीत गीत के शरद शरद में मुझमें—  
मुझे न जाने दिये दान इज्जत धरिद्वय ही धामना ?

मेरी धामना बरणा कर,—धरिद्वय धामना है,  
धर धामना है धरिद्वय की, धर धर धर धर है,  
धर धर धर है धरिद्वय धरिद्वय धरिद्वय धर धर है—  
धरिद्वय धर धर धर की धर धर धर धर है  
धरिद्वय धर धर धर धर धर धर धर धर धर धर है—  
धरिद्वय धर धर धर धर धर धर धर धर धर धर है

# एक दुर्घटना की है चाह — श्री कपूरचन्द्र 'कुलिश'

बहुत लम्बी जीवन की राह ।  
 एक दुर्घटना की है चाह ।  
 चला तो संग न कोई बाँह,  
 रुका तो मिली न शीतल छाँह  
 बहुत सोचा, पर धनी न बात  
 सह न पाता मस्तक आघात  
 लोट कर जाने का न उपाय  
 जिन्दगी सरिता का पर्याय  
 हुमा जीवन जैसे निरुपाय  
 न जाना जीने का अभिप्राय  
 कहाँ जाना है, मुझे न ज्ञान  
 पन्थ का ही इतना ग्रहमान  
 चला आया है इतनी दूर  
 किन्तु अब थक कर चकनाचूर  
 कहीं बुद्ध मिल जाये विश्राम  
 जेल, अस्पताल, पागल घाम  
 सभ्यता के ये आशादीप  
 निम्नहाथी के अधिक समोप  
 रण्य मानवता के विद्वाम  
 हरेगे निश्चय मेरा त्राम

× × ×

अस्पतालों की मज्जा शान  
 पथ्य, शैथ्या, परिचर्या मान  
 देह रक्षित, पर व्याकुल प्राण  
 दुःख में नहीं यहाँ भी प्राण  
 दुःख का धनोभूत आकार  
 जिपर देखो है हाहाकार  
 बेदना में बोभिल यह मन  
 कह उठा लाघो परिवर्तन

जेल का जीवन यन्त्र ममान  
 शयन, भोजन, श्रम में भ्रवसान  
 गणित ही मानव की पहिचान  
 निराला इसका वर्ण विधान  
 दृष्टि के आगे बस दीवार ।  
 लौह मम चैनन का शृंगार  
 जहाँ भय, सशय का व्यापार  
 चला करता नित नये प्रकार  
 प्रेम कहलाना है पड्यन्त्र,  
 आत्म-मुख भूल यहाँ का मन्त्र  
 एकरमता में कुण्ठित मन  
 कह उठा लाघो परिवर्तन  
 पागलों की दुनिया ही भिन्न  
 दृष्टि में है मर्मन्टि विच्छिन्न  
 न घपना और पराया ज्ञान  
 न मुख-दुग में वेगो पहिचान  
 निरोहित यही भेद का भाव  
 किन्तु तन का मन में घनगाव  
 भुलाने आया था सन्नाप  
 नहीं रहने देने चुपचाप  
 मुझे बेमुषियों में है प्यार  
 यही करने इसका उपाहार  
 ग्लानि में व्याकुल-विच्युत मन  
 कह उठा लाघो परिवर्तन  
 कहीं जाऊँ क्या कर उपाय  
 चैनना है जैसे हन-प्राय  
 लगाइँ क्यों न आगिरो दीव  
 किमनिए कहे व्यर्थ पद्यनाव

## गीत

शांतिनाथ ध्याया

पता नहीं कौनसी घड़ी धो-  
मेरे गीत कि जब जनमे थे.  
बचान मे सब तह बेनारे  
मान-मकारे रीते धामे

साध उम दिन मायम हो धो-  
सात संधेरे मे मिलती है.  
या फिर जलती दोपहरी धो-  
माने बेसी ही जाती है ।

पता नहीं, पर घुरी घड़ी धो-  
साध पोछा पाग गरी धो.  
मान मे तो सब रीते-  
दे पापुन, नानभिमी पाये ।

जिन्दा समीज गरी माने री-  
ते मजिज पर या पढ़ा है  
तम पढ़ा दिन रहे भर री-  
व साध पर या पढ़ा है ।

जिन्दा भर मे साध पर है,  
नर साध मे साध पर है  
बेसाध मे साध पर है  
दुःख मे साध पर है ।

परी निर शान्ति, विगत अयमाद  
मनी मिट जाने दुःख विपाद  
दर बने चरम स्वय उम ओर  
दुःखिया सब मजिज का ओर

जिन्दा पर सब रीसा धनमेन  
न पानी शुनिनी जिनाओ मेन  
'मुनी' । पर मेज गरी, समसान  
परी रा धनना पर विमान  
जो गीत देता चुनपाव  
परी धारी जो धाने धार  
परी धानों का गरी प्रेम  
प्रेम के धाने का दह देता"  
परी जेमे सीसा धमिमान  
परी पर जीवन का धनमान  
बीज धोनेवा पर दिशाम  
परी धानों पर धर्म विराम

परी धान का धान पर धान  
परी धान धान का धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान  
परी धान धान धान पर धान

एक बूंद अमृत की मुझे पिपासा है,  
प्यासा है, इमलिये पुकारा करता है।

जाने कब पतवार लहर में गी जाये,  
मरघट जले न कब मन के विश्वासों का ?  
जाने किम क्षण मुर्झा जाये प्राण कुसुम,  
जाने कब लुट जाय, काफिला सामों का ?

जाने किम क्षण नींद सपन की आ जाये ?  
सपना जाने किम क्षण स्वयं बिगड़ जाये ?  
जाने किम क्षण पथरा जाये नयन-मंदिर,  
प्यासा है, इमलिये निहारा करता है।  
एक बूंद, अमृत की मुझे पिपासा है,  
प्यासा है, इमलिये पुकारा करता है।

चलते-चलते मिले न जाने कब मंजिल ?  
किसे पता, मंजिल तक चरण न चल पाये  
किसे पता, कब धीरे-धीरे मन की ममता  
जाने किम क्षण मन की शृंगार छूट जाये।

जाने कब शृंगार अरुचिकर हो जाये ?  
मन की वरुण पुकार शून्य में गी जाये।  
जाने किम पतझर का भीरा रूप लूट ले,  
रूपातुर जिन्दगी मेंवारा करता है।  
एक बूंद, अमृत की मुझे पिपासा है,  
प्यासा है, इमलिये पुकारा करता है।

ध्वनि-प्रतिध्वनियों की राहों पर स्वर का संघो,  
जाने कब एक बार शब्द सा गुमगुम हो जाये ?  
जाने कब सौमन्त-गगन की परिधि साध कर,  
मेरे मन का राजहंस, फिर कभी न पाये।

जाने कब पथ पर अधियारा हा जाये ?  
किसे पता, कब मुबह किरण हम देख न पाये ?  
जाने किम बरसों का दुःख साँद धेर ले,  
रह-रह सपना संघ दुःखारा करता है।  
एक बूंद अमृत की मुझे पिपासा है,  
प्यासा है, इमलिये पुकारा करता है।

# हास तुमने बखेरा

ॐ श्री विष्णु खन्ना

हान तुमने बखेरा तनिक सा मधुर,  
चाँद ने पी लिया मुस्कराने सगा ।

गात छ कर तुम्हारा गिली चाँदनी,  
गीत मुनकर तुम्हारे बनी रागनी,  
कोकिना ने बही भूत मे मुन लिये  
स्वर, बनी बँठ की भाग्य मे वह धनी,

रोज संगीत की सींग सी पार ने,  
रह गया तट बिचारा ठगा का ठगा ।"

बाग्य के कुँज की तुम घमर गन्ध हो,  
झार के तान मे हो कमल की गिरी,  
गीत की कल्पना की धुमे प्रेरणा  
लेगनी वह गहरा है जिसे तुम मीठी,

छन्द के भेद भीनिर विनिर्मित हुए,  
गुद घाँटुआ जियही मराने सगा ।"

छन्द तुमही लिया था रिपी प्यार ने,  
रखत निर्माण का जो रि कारण बना,  
घाँटुआ जिय मदन के मदन मे हुआ,  
का पी ज्ञान की धा मई मृदंगा,

दर्शना का गुणगार जिसे मिल गया,  
भक्त बन बख्शता मुनमुनाने सगा ।"

छन्द ने कर का जिया की मरी,  
का जिया बड़ा था उमरावा हुआ,  
कल घाँटुआ ने जिय भीरु कर  
कल का कर जिया ने जिय का मुपार,

छन्द ने ज्ञान की मरिगाय का मुपार  
का लहे छन्द का है जियार बना ।

कल मदन बख्शता मरिगाय का मुपार  
का लहे छन्द का है जियार बना ।

# “त्योहार के पल”

श्री चन्द्रकुमार 'सुकुमार'

त्योहार मधन अमराई का,  
बजना केवल सहनाई का,  
मासों में मोरभ घोल गया—  
भोका कुछ ऐसा आया था पुरवाई का।

यह जीवन की क्षणभुरता मुस्कानों में-  
मधुरीने सपने सजा रही है अनचाहे।  
नयनों में घुलता जाता है काजल दृग का-  
यो गीत तुम्हारे मेरे अब तक अनव्याहे।

आकर कोई कोयल छुपके में कानों में-  
यह बोल गई है जीवन की परिभाषा सी।  
“दो धुम्बन और मिलन की प्यासी पनघट पर-  
यह गागर अभी दूबोई भोगी आना-मो।”

नो तुमने भी लजबन्ती पनक उठाई है-  
यह निमिष गीत की गरिमा में मिल आया है।  
दन काली कजरारी झलकों को घूम घूम-  
लग रहा पवन आनुर होकर बोराया है।

लाओ यह हाथ तुम्हारा, लिखदूँ गीत नया-  
यह मेहदी रची हथेली फूल सूँघ लेगे।  
केवल दो अक्षर लिखे धीरे फिर उलभ गए-  
दोनों पागल थे जैसे फूल सूँघ लेगे।

हर फूल बगारो बाई का,  
मिलना भर था परछाई का,  
यो चिर-तृष्णा लेकर कोई—  
बेवटिया आया था केवल पहनाई का।

यह चाद उलझता बादल की मनुहारों में-  
यह मदिरा पीकर आया है वाताम कही ?  
यह आँख मिचोनी बादलिया की झुरमुट में  
पर तुम हो जाने क्यों अब तक भी पाग नहीं ?

यह फिर कोई बोला है बिहग दूर लेकिन-  
ऐसा लगता है जैसे अभी अकेला है।  
‘पीऊ’ ‘पीऊ’ की टेर दर्द के कण्ठों में-  
लगता जीवन भर अगारों में सेना है।

पायल हिरणी के नयनों ने फिर देखा है-  
आजाय न कोई पारिधि फिर मूनेपन में।  
दे जाय न कोई ऐसी पीर बहुत मोटी-  
धुल आय न विष मीरा के फिर तन्मय तन में।

इन गीतों की मोगन्ध तुम्हारी विमृति ने  
मेरे जीवन की स्मृतियों को देगा है।  
हरताल छन्द तप जैसे मेरा आना है-  
पर मेरे गीत, तुम्हारे स्वर में एका है।

या जुहना मदा डवाई का,  
घट जाना पुनः दहाई का,  
मख जीवन की मोथनी तब-  
हुस्ना आया है मरना मदा जुलाई का।

# “यूँ ही प्यास जीत जाती है”

• श्री मंगल सम्मेलना •

कोई कितना ही कहनाए  
ना कोई भी ना भयनाए

सूँ ही दिवस गुजर जाता है  
सूँ ही रात बीत जाती है।

मुपिना माप नहीं देती है,  
बिर मोपाय नहीं देती है,  
माप भरा रित तो दाता है,  
प्यास घमासो की मापा है,  
जोने बाँट तो जोने है,  
हम-जैम कर पांगु कीने है।

जोने कीज निबोको मोने  
की जानो से निगमा कोने

सूँ ही रात गुजर जाता है  
सूँ ही रात बीत जाती है।

सूँ ही रात गुजर जाता है,  
सूँ ही रात गुजर जाता है,  
सूँ ही रात गुजर जाता है,  
सूँ ही रात गुजर जाता है।

भलकों का हर नया पराज,  
मेरे मान सरोवर से मन !  
तेरे हंस चुगेने जन बन !

लेकिन कितना ही सुगुर्ज  
दूत मे भर गुग मे बोराज

सूँ ही दिवस गुजर जाता है  
सूँ ही रात बीत जाती है।

भायुता का गरवर सरा  
उम पर मगा हुआ है परा  
कोई दूध नहीं पाता है  
रोति-नोति से बंध जाता है  
उर घमासो माप दुगरे  
प्यास सुमासो मगर दुगरे,

लेकिन शास्त्र है पर मेरा  
विज-देन का कम पावेरा

सूँ ही दूध गुजर जाता है  
सूँ ही प्यास बीत जाती है।

## मांग मत वरदान

• प्रो० रणजीत •

खोजता जा, हार मत हिम्मत  
कभी मिल जायगा इंसान ?  
कर प्रतीक्षा, सितम सह. पर  
पत्थरो मे मांग मत वरदान ।

जिन्दगी को मत भ्रमो मे डाल  
आवरण को छोड़, वस्तु सभाल  
सत्य को मत स्वप्न मे भुंठला  
मत फमानो मे हकीकत टाल

कर समर्पण देकर के आराध्य,  
मन बन, जान कर अज्ञान,  
खोजता जा, हार मत हिम्मत  
कभी मिल जायगा इंसान ।

देख इन कठ-पुतलियों को देख  
धर्म जिनका मानना आदेश  
बाठ के तन मे दबे शायद रही  
हो किसी व्यक्ति के अवशेष

इगलिये बेहोश रहो को लगा  
आवाज, कर आह्वान,  
खोजता जा, हार मत हिम्मत  
कभी मिल जायगा इंसान ।

## ‘गीत’

श्री गंगाराम ‘पथिक’

चाहे जितना दर्द जमाना दे मुझको-  
फिर भी जैसा था-वैसा-का-वैसा है ।

तन का घोला तो हर रोज बदलता है,  
पर मन की तमबोर नहीं बदली जाती;  
जीने के लालच मे, मरने के डर-मे-  
अरमानो की पीर नहीं बदली जानी,

मत दो मेरा साथ-अकेला चलने दो-  
तुम क्या समझोगे-मैं क्या है, कैसा है ?

काली रातें धीरे कटीली रातें है,  
नेकिन मजिल तो जानी पहचानी है,  
भूल समझतो घाई है दुनियां तिमरो-  
कदम-बदम पर बात वही दोहरानी है,

तूफानों मे लड़ना-मेरी घादत है-  
आने वाले क्या का नया-संदेश है ।

आममान मे मेरा कोई भय नहीं,  
आद-मिनारों मे फिर बंदो मन बहमाऊं:  
माटी के बग-बग मे ओं मन्चार्ड है-  
उमको अनेदेशा बरके बरों मृदुपार्ड.

प्यार बरों या नफरत का शिप बरमाछों-  
मामो का मोरम है-गुह न्ते-मा ? ।

# प्राण तुम लौटे नहीं हो

—धीमती शारदा गुप्ता

प्राण ! तुम लौटे नहीं हो-  
मे हठीले मगन मेरे-  
मार पर उठ भुल गये है।

तुम लौटे हो पास मेरे-  
गुन्य मा मय भुल गया है।  
पात्र मोना मोन मन का-  
परन बाजक मा जगा है।

लौटे पापी प्राण मेरे-  
मोन को पात्राज दे दो।  
तुम जिसे बेगुन बर्षों से  
पात्र लेगा मात्र दे दो।

प्राण ! तुम लौटे नहीं हो-  
मार मन्त्री पात्र मेरे-  
मात्र पर सा रह गये है।  
दे हठीले मगन मेरे-  
मार पर उठ भुल गये है।

मार मन्त्री को प्राण लौटे  
मार पर उठ भुल गया है।  
मार पर उठ भुल गया है।  
मार पर उठ भुल गया है।

मार पर उठ भुल गया है-  
मार मन्त्री को प्राण लौटे।  
मार पर उठ भुल गया है-  
मार पर उठ भुल गया है।

मार पर उठ भुल गया है-  
मार मन्त्री को प्राण लौटे।  
मार पर उठ भुल गया है-  
मार पर उठ भुल गया है।

## “प्राण तुम”

—श्री दयाकृष्ण 'विजय'

पलक में छिपा लूँ,  
हृदय में बसा लूँ,  
अगर प्राण तुम, स्वप्न में भी मिलो तो ।  
तुम्हें खोजते जन्म हारे अनेकों,  
कहाँ तक कहो श्वांस के पग पखा लूँ ।  
चरण भी थके उम्र की सीढ़ियों पर,  
कहाँ तक डगर को बुझा लूँ, निहा लूँ ।  
तुम्हें विश्व, करुणा-मुमन कह रहा है,  
पड़ा क्यों चमन किन्तु वीरान मेरा ?  
तपन से बचा लूँ,  
धुमन को हटा लूँ,  
अगर बांह को डाल पर तुम खिलो तो ?  
अगर प्राण तुम स्वप्न में भी मिलो तो ?

( २ )

पकी अंगुलियाँ, तार होले पड़े हैं,  
पुला स्नेह भी, धारलो में बचा जो,  
रूँघा कंठ है, घामुधों की भरी है,  
बुलाऊँ तुम्हें बिन स्वरों में बताओ ।  
कई रूप के गाव के भी मंदेरी,  
लगन किन्तु तुमसे लगी है हटोली ।  
उषा को मना लूँ,  
निशा को सजा लूँ,  
अगर तुम मिलन के दुषारे बनो तो ?  
अगर प्राण तुम स्वप्न में भी मिलो तो ?

## “मुझको मेरे सिरजन पर अभिमान है”

• श्री वीर सक्सेना •

तुम्हें गर्व है अपने छलिया रूप पर,  
मुझको मेरे दरपन पर अभिमान है;  
इतनी कच्ची नींद नहीं मोता है मैं,  
पैरो की हल्की ग्राहट में जग जाऊँ;  
मैं वह बादल नहीं, इन्द्र के इंगित पर,  
तज कर अपना अहम् बरसने लग जाऊँ,  
तुम को अपनी गुस्ता पर विश्वास है,  
मुझको मेरे बचपन पर अभिमान है;

तुम संध्या के घर पहुँचाई करते हो,  
मैं उगते मूरज को अर्घ्य चढ़ाता हूँ;  
तुम रांडित कर देते जिन प्रतिमाओं को,  
मैं उनको मिहासन पर बिठलाता हूँ,  
तुम श्रद्धा को अपमानित करके गुन हो,  
मुझको मेरी अर्चन पर अभिमान है,

तुम चलते जो गुडरे उनके बिन्हीं पर,  
मैं चलने को नई सड़ों गीच रहा;  
आग लगाते कितने तुम फूलबारी में—  
मैं इसको घामू के जन में गीच रहा,  
तुम गरिमा गाने हो मदा पुरानन को—  
मुझको मेरे मिरजन पर अभिमान है,

भूल मनाती है सबको ही प्यार की,  
उसे मध्य बहने जो इसे दुखाता है,  
यहा बहो माना जाना है मय्यामी,  
जो सबके मन का विश्राम बुगता है,  
तुम धमधमता बह दो मेरी बचनी को,  
मुझको इस भोले पन पर अभिमान है !

# प्राण तुम लौटे नहीं हो

—धीमा

प्राण ! तुम लौटे नहीं हो-  
मे हड्डिमें नयन मेरे-  
गर पर उठ मुक्त गये है।

तुम लौटे हो प्राण मेरे-  
मृत्यु का मरुत कृत लगा है।  
प्राण लौटा लौटे मन का-  
प्राण बाहर का लगा है।

लौटे प्राणों प्राण मेरे-  
लौटे को प्राण दे दो।  
तुम जिसे बेगुन बन्धु है  
प्राण लेना मात्र दे दो।

प्राण ! तुम लौटे नहीं हो-  
हर मर्तोरे प्राण मेरे-  
मर पर प्राण रह गये है।  
मे हड्डिमें मरत मेरे-  
गर पर उठ मुक्त गये है।

प्राण प्राण को प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-

प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-

प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-  
प्राण प्राण प्राण मेरे-

# एक कहानी

लो कहता हूँ एक कहानी,  
 शायद तुम्हें पसन्द आ जाये,  
 मुझे बहुत अच्छी लगती है  
 तिनका-तिनका पकड़ चोंच में  
 भ्रमी-भ्रमी हो  
 नये नोड़ के  
 नए सृजन का  
 नया-नया संतोष मिला था ।  
 घोर प्रचानक,  
 क्रूर हवा के  
 धातों-प्रतिधातों ने चाहा  
 पथी की  
 आशा-अभिलाषा  
 घोर नये निर्माणों की धमका को  
 तहम-नहस कर डाले ।  
 किन्तु नोड़ का सजग सिपाही  
 एक-एक तिनका ला-लाकर  
 नये सृजन की बलिवेदी पर  
 फिर जा बैठा  
 फिर भंभाने  
 उरा दिया  
 निम्नीम गगन में

एक-एक तिनके को  
 नन्हे पंछों की  
 महती गुस्ता का  
 गहरा,  
 बहुत-बहुत गहरा  
 उपहाम उड़ाने ।  
 भीत ।  
 बावला पंछी फिर तैयार हो गया ।  
 बाघ शीश पर कफन  
 सृजन की  
 प्रसन्न पीर सहने को ।  
 (घोर) नाश के भोंके  
 फिर आये दुहराने  
 क्या पुरानो ।  
 (दुहारार्थ भी)  
 विन्तु  
 सृजन का फूल  
 गदा मिलता ही थापा ।  
 घोर क्या चलती हो धार्द,  
 चली जा रही,  
 शायद तुम्हें पसन्द आ जाये  
 मुझे बहुत अच्छी लगती है

धी विरनाथ मचंदर

संजन-नेत्रा

# “मैं अपनी दिल्ली का अकबर”

• श्री

बहने को अपनी माता का  
एक एक क्षण पढ़ जाना  
मेरे मन तक गमक न पाया  
मेरे मन पर है या कि मनपर

बुद्धि दिन इसी गीत में बीते  
सागर किनारे मुझे पड़ा है  
बुद्धि दिन भटका इसी भरम में  
गीतों का बचाव करा है

गोष्ठा पूजा धर्म  
वर्ष काट तादे कर  
बेचन एक वाक्य गिनी  
गिनी भीत वन भर श

जिग पर टिकी हुई है पुष्पी  
धर्म हाथ वर वीर न बाई  
वर्ष गता वर्गों में मेरी  
जिग पर कर रही मुझ

गीत रही सागर गहर पर  
रूढ़ रहा है शब्द गिना  
जिग में रही हुई है मेरी  
वही हाथ गता है गता

एक दिन एक दिन  
शब्द गता एक सागर गिता है  
शब्द गता एक के गता है  
शब्द गता एक के गता है

शब्द को बुद्धि गता पर  
शब्द गता गता मुझ  
एक दिन गता था है गता  
शब्द गता का गता गिता

शब्द गता गता गता गता  
शब्द गता गता गता गता  
शब्द गता गता गता गता  
शब्द गता गता गता गता

शब्द गता गता गता गता  
शब्द गता गता गता गता  
शब्द गता गता गता गता  
शब्द गता गता गता गता

# एक कहानी

लो कहता हूँ एक कहानी,  
 शायद तुम्हें पसन्द आ जाये,  
 मुझे बहुत अच्छी लगती है  
 तिनका-तिनका पकड़ चोच में  
 अभी-अभी ही  
 नये नोड के  
 नए सृजन का  
 नया-नया संतोष मिला था ।  
 घोर अचानक,  
 झूठ हवा के  
 धातों-प्रतिधातों ने चाहा  
 पक्षी की  
 भाषा-अभिलाषा  
 और नये निर्माणों की क्षमता को  
 तहस-नहस कर डाले ।  
 किन्तु नोड का सजग सिपाही  
 एक एक तिनका ला-लाकर  
 नये सृजन की बलिबेदी पर  
 फिर जा बैठा  
 फिर भंभाने  
 उठा दिया  
 निम्नीम गगन में

एक एक तिनके को  
 नन्हे पंखों की  
 महती गुरुता का  
 गहरा,  
 बहुत बहुत गहरा  
 उपहाम उड़ाने ।  
 भीत ।  
 बावला पंखी फिर तैयार हो गया ।  
 बाघ शीश पर कफन  
 सृजन की  
 प्रसव पीर सहने को ।  
 (घोर) नाग के भोंके  
 फिर घाये दुहराने  
 कथा पुरानो ।  
 (दुहारार्थ भी)  
 किन्तु  
 सृजन का पुत्र  
 मदा मिलता ही थापा ।  
 घोर क्या चलती हो धाई,  
 चली जा रहो,  
 शायद तुम्हें पसन्द आ जाये  
 मुझे बहुत अच्छी लगती है

श्री विश्वनाथ मचदेव

# “ मैं ऐसा दीप जलाता हूँ ”

● डॉ० रामगोपाल वर्मा 'दिनेश' ●

तुम दीप जलाते रोज,  
रोज बुझ जाते है ।  
मैं ऐसा दीप जलाता हूँ,  
जो घाँघो में भी जला करे।

सिखाता नहीं तुमसे पद,  
तुमसे भक्ति का ज्ञान नहीं ।  
हर क्षण मे रह जाते हो,  
मृत होने काभी क्षण नहीं ।  
ऐसा पद बनाता हूँ,  
जिगमग भक्ति भी बना करे,  
ऐसा दीप जलाता हूँ,  
जो घाँघो में भी जला करे।

तुम पूरे पद, पद काव्य का,  
जो बालक से बालक है ।  
हर पद, हर पद काव्य का,  
जो बालक से बालक है ।

मैं ऐसा पद बने बालक से  
जिगमग भक्ति भी बना करे,  
मैं ऐसा दीप जलाता हूँ,  
जो घाँघो में भी जला करे।

मागर वो सीमा भी जगमे,  
परलो को बाँध न पाई है ।  
जिगमग दीप को दिव्य ज्योति,  
नीहार मोह में पाई है ।

मैं तुमसे गेह गुणाता हूँ,  
जो परदेसी का भगा करे ।  
मैं ऐसा दीप जलाता हूँ,  
जो घाँघो में भी जला करे।

जब न रह ज्योति का पद, तुम  
पूरे हो परलो के लो  
तुम जे न बने हो ज्योति का  
जो भगवत काव्य काव्य काव्य है ।

मैं ऐसा पद बने तुम से  
जिगमग भक्ति भी बना करे ।  
मैं ऐसा दीप जलाता हूँ,  
जो घाँघो में भी जला करे।

# रूमानी चाँद

प्रो० 'शलभ'

विचारों के नगों में चूर !

खोजे हुये नये मूत्र के उन्माद में खोया सा,  
नई ध्वनि, नये आवायों की आसक्ति का  
मारा सा,

नये सृजन-शिल्प की वीथियों में,  
अवसादमयी प्रमादकता में प्रमत्त,  
उस

एंग्लो केथोलिक चर्च के सँभालते फाटक में  
अपनी इस

ऊमरी जमीन की अनेकानेक यात्रिक  
यत्रणाश्रों के

अनवृत्त,  
अजाने गीतों की मधुरीली,  
किसी एकान्त बलांत

गुवा साध्वी के हृदय की गूँज में भूमता हुआ  
बुद्ध अच्छा सा देख रहा है ।

ग्राममान की ज्यामिति की  
उदास—मोती पुस्तक के गोलाकार फेले हुए  
पन्ने के

गुदूर बोने पर,  
एक जेट

अपनी दुम की घुँघारी पैमिल में  
एक लम्बी, किन्तु मोड़ी घुँए की रेखा  
गोचरता जा रहा है,

उमके आगरी छोर पर कुछ सटक रहा है,  
दूज का खोद है !

'हृदिया खोद—कैसे हो ?'

मुन कर यह—चौका वह ।

जाने क्यों हवा की हल्की परत पर  
हैम-हैम इतराया वह ।

हां, जी । तुम

आजकल तो 'हलदिया' ही दीखते !

हालाँकि देखे हैं तुम्हारे दो चित्र धीर—

अगवार में छेदे थे :

अच्छे थे न बुरे थे ।

किन्तु,

तुम अब भी इतने बेसबर हो ?

नेनिन का युग नहीं, न्यूनिन का युग है यह ।

परते जो उठ रही—उनको तुम उठने दो,

नाच रही भाँवरियाँ—उनको तुम नचने दो,

उभरेगा चित्र तो—होगा ही न्य स्पष्ट,

गुलेगा भेद फिर तेरे यथार्थ का,

नितान नग ।

नि पट ।

उम्रत विचारों को उड़न निगाहों को

उठी धीर ऊपर तो—

कुछ नहीं

द्वितीया का खोद नहीं, जेट नहीं,

कुछ नहीं :

घुँए की रेखा वह

वाजवी बन्नायन मो फेंक चुकी

दिक्-दिक् के दूरत छोरों तक,

अधवार ।

मोचता है—मचमुच अब भी खोद अच्छा है ।

धीर धीर रीत दुग के मपनी में खोसा है !

अनीन धीर आगत को

अचकानी खोदियों ने उमे में दूबोसा है ।

ऐसा एड्रेन्वरम बर,

अब भी खोसा है ।



## वह मेरी है भारत-माता

—श्री मेघराज 'मुहल'

मधु मे भरा जहाँ युग-यौवन, ज्योति किरण मे न्हाया जीवन,  
दिशा-दिशा में उजला-उजला, जिसका घतदल सा खिलता मन,  
पूलकित सस्मित चकित विश्व यह, जिमकी गरिमा को है गाता,  
जिसकी गोदी मे दिशि-दिशि की, संस्कृतियों का मन लहराता,

वह मेरी है भारत-माता !

जहाँ सृजन आकार ले रहा, जहाँ मनुजता मनुज पा रहा,  
जहाँ ग्राम्य सुकुमार प्राण-धन, नई कमल के गीत गा रहा,  
जो धरती जल-प्लावन पूरित, जो धरती नित शस्य श्यामला,  
जो धरती उन्मुक्त विजयिनी, अभिविक्ता युग-युग की गाथा,

वह मेरी है भारत-माता !

दोषशिला सी सदा प्रज्वलित, स्वर-प्रधर में जो नित भंजित,  
आकर्षण के मध्यबिन्दु सी, ध्रुववादो से कभी न वधित,  
जहाँ संतुलन कभी न ढिगता, जहाँ लोक मन कभी न चिक्ता,  
जहाँ सलीला हृदय लहरता, जहाँ मुक्ति विश्वास विकसता,

वह मेरी है भारत-माता !

जहाँ धोस के कंपन मे भी, रम जातो सदियों की पिरकन,  
जहाँ प्यास के धुलक होठ पर, खुनियाँ सदा भूसरर प्रातो,  
होठो पर ले ज्वार-सिन्धु का, जो अभि-शक्ति मुक्ति-सघ-दाना,  
प्राणोच्छवास जहाँ रम-राता, सह-सम्पित्व जहाँ मुस्कता,

वह मेरी है भारत-माता !

जहाँ सदा उन्मेप सजग हैं, युवा उमंगे राह दिक्तातो,  
जहाँ चेतना करे साधना, सृजन-बान्धियाँ मुखरर गातो,  
जहाँ नया साहित्य शृपक मटहूरो का दर्शन मरमाना,  
जहाँ नया मानव प्रहरो बन, युग-रक्षा का भार उठाना,

वह मेरी है भारत-माता !



# विरह गीत

• श्री चन्द्रकुमार 'सुकुमार'

टणमण बाजै टोकराजी, गण मण गाडी जाय,  
कामणगारी सी सिणगारी, बैठी भौला खाय ।

बैल्या भागै भालर भूमे नीगर बाग्यां जाय,  
पाछै उडती मांटी, हाळी । सन्देसो पठवाय ।  
की'जे बादळ सा बादीला घरा सांवता आय,  
सासरिये री नीब निबोळी पीपळ नै पुजवाय ॥

बायर बाजै, काजळ लाजै, रुत पाछो मूड जाय,  
वयां नै देर करो परदेशी, आसूडा पुछवाय ।

नेणा मा सावणियो बसग्यो, पलकां बसग्यो नीर,  
हिवडै बसगी अगन हठीला, अघरां बसगी पीर ।  
गजब कर्ग्यो घो रूप उघारो, ने बैठी तगदीर,  
घ्याज बढै मुळकै पाहोगी, छातो लागे तीर ॥

मैदी राचे, कागद बाचे, सुपनों दिन ढळ जाय,  
राखूं जागे हियो बावळो बेरो, घोळूं घाय ।

तपता बीतै तावडो जो, गळनां बीने रान,  
सांभ संवारे पलक बिछाजं, निगुपट निगुपट बान ।  
हिचक्या मूं भर घाबै छानो मै'दिन मारो रान,  
मोत्यांरी जागोर मुटावे नेणा री बरगान ॥

बाया कांपे हिवडो हांपे, हिचकोळीं मुळ जान,  
जोगण बणगी सेज बमूमल, आख्या नीद न घान ।



## “रूप छवि”

• श्री पुरुषोत्तम ‘उत्तम’

वैसे प्राप का चरम लक्ष्य प्रगोचरक बाने तिरंगे की छत्र छाया प्राप्त करना ही है, और उसके लिए प्राप जन हित, समाज हित तथा राष्ट्र हित की दुहाई देने में नहीं सकते । ज्योंही प्रापको बिना वैसे की व्यूक और बिना किराए का बङ्गना बिना कि प्राप का प्रगना हित ही सर्वोपरि रह जाता है । चुनावों के समय इन्हे प्राप अपने दरवाजे पर हाथ पमारें कई बार देख सकते हैं पर क्या मजान कि बाद में इनके दर पर प्रनेक धक्के बाने के उपरान्त भी प्राप इनके दर्शन कर सकें ।

प्राप जन नेता, किसान नेता, मजदूर नेता, लोक नायक तथा जन नायक प्रादि उपाधियों के जनक है । प्राप को जातिवाद में सल्ल नफरत है लेकिन चुनाव के समय थोटा और बेटी जाति बाने को ही देने के प्राप पूरे हिमायती बन जाते हैं । वैसे भी प्राप हर नाम बाने काम के लिए अपनी ही जाति बानों को प्राथमिकता देने है ।

पुरातनता प्रथवा सदीवाद को प्राप कतई पसन्द नहीं करने, इस ही लिए प्रापने सामान्यता की प्रतीक जमीनदारी और जमीनदारी को समाप्त कर दिया है । प्रथम देग में कोई भूमिहीन रहने बाना नहीं है । यहा तक कि प्रापने अपने नाबालिग लड़के को भी मकड़ों बीधा जमीन दिनचारी है चाहे ४७ गांव की गोबर या पोखर की ही बयो न हो । वैसे किसान में पक्के के वैसे लेने का कानून प्रापने बना दिया है परन्तु प्राप तो अपने उज्ज ब्रा प्राप्रा हिम्सा ही बमून करते हैं और तो और जमीनदारी तो भूमा और कष्ट ही किसान को छोड़ने के पर प्राप वह भी नहीं छोड़ पाने । क्योंकि प्राप को गोवंश की रक्षा तो बानी है और जनता जनार्दन की विमुक्त दुग्ध सेवा के लिए गो रस भण्डार तथा गो मेरा केन्द्र आ बाना है । प्रापको “प्रथम प्रथ उपजापो” प्राप्तिजन की प्रथमिक बिला है, इसके लिए प्राप तराबों करण की बड़ी-बड़ी योजनाएँ बाने रहते हैं । परन्तु वह भी गङ्गा के समान प्रापके स्वार्थ-वाहक की गङ्गाधर ही में समा जाती है और जन-भगर बंग बुभुक्षान-प्रतिप्रधान में लङ्गता ही रहता है ।

प्राप बिनयुक्त निरपृह, मोह रहित एवं निरहित है । लेकिन पार्टी का पद, नगर-निगम की प्रत्यक्षता, जिना परिषद की प्रमुखता, पंचायत समिति की प्रधानता और विधान सभा प्रथवा लोक सभा की सदस्यता में सदा बिके रहता ही पसन्द करने है । प्रापने देखने-देखने ही प्रतीक प्रथम बान में दा प्रथम बङ्गना बनवा लिया है । पद के प्रभाव में प्राप अपने भाइयों के व्यापार पर पर नगा देने है । इनका व्यापार बिना पूँजी या बाल्बाने के ही चल जाता है । सरकारी कार्यालयों में बिना टैरफै के ही प्रार्थी और बिना कर्जा के ही प्रथम प्रेमेण्ट होना रहता है ।

यदि प्राप जनता द्वारा चुनावों में चुना जाते हैं, तो समाज बाल्बान बनें, प्रापने प्रथम प्रथम, नगर विधान सभा, प्राप ० टी० प्रो० की प्रार्थनी सदस्यता प्रथम प्रथम प्रथम प्रथम प्रापने लिए हैमर ही रहते हैं । वैसे ही बठिन्दा के समय प्रेनु प्राप जीवन दासी, भूदासी का बङ्गना प्रार्थनी रहते हैं और प्रापने समय में उसे प्रापने कर अपनी जीवन सीता राम सीता या प्रार्थनी सीता की प्राप प्रथम

## साँझ का रंग

— विदग्धमर दुःख —

साज की साँझ का रंग लीले  
प्रहृति का चित्रा उदम सा-  
भूत गया वह सगनऊ प्रवष की  
रमीन मामो का साहीन ।  
साज उमरी गुनिसा के  
गिरहरी की पूरे माने मान  
गना होना है,

कुन उमर गन है ।

साज उमरा के गनाम पीर स्नेह  
कीर रहे है ।

साज उमरे सहेन रंगो के दूध  
गुन रहे है ।

साज उमरे बीमल हाव  
गदगदा रहे है ।

## कस्वे के बस स्टैण्ड पर

— मागीर्य भाव —

पों पों

कोई उतरा

कोई पा पना गया ।

रिमी के उतरने पर

कोई रोहरा गिन उठा

मुनियों की पीं गिरा

एकदम गुनजार हो उठी

पाग में गहा तागे बाग

जम्हारी में उठ भेठा

बहन पहन फिर जाग उठी ।

रिमी के जाने पर

गदगद पर बेतहाशा

गुन लोचनी हुई

दूर भाग जाती है बग

पीर अभी—अभी

दी सागे गुन मे

देगो रग जाती है ।

रहे है । साज के ही गुन का रंग लीले में साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साज के ही गुन का रंग लीले में साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साज के ही गुन का रंग लीले में साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है ।

साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है ।

साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है । साजगार के रिमिनीय पीर गुन के बगल पर रहे है ।

# रतना का रूमाल

श्री मनोहर वर्मा

रतना मेरी नौकरानी है।

रतना ने बताया कि उसका पति बनक है।

रतना और मेरी पत्नी युवा हैं। हम उमर हैं, पर मेरी पत्नी के मुकाबले वह काफी दुबली, शुष्क और उदामीन है।

रतना धारण्यक जरूर है, पर सुन्दर नहीं। सौन्दर्य जिसे बहा जाये ऐसी कोई चीज उममे नहीं है।

रतना सीधी है, नेक है, गरीब है। मेरे बलाका एक और घर का काम भी उमने भेज रखा है।

मेरी पत्नी और रतना

“बहूजी कुछ पैसों की जरूरत है।”

आज तो पांच तारीख ही है रतना —……तेरे पति को भी तो तनखा मिली होगी…… ?

कितनोकर तो तनखा मिलती है बहूजी……

भरे! क्यों? तेरा पति कही नगा तो नहीं करता, दूमा तो नहीं खेतता…… ?

नहीं बहूजी। चाय बीड़ी का शौक है बस। या फिर घण्टे बपड़े पहनने का……।

तो भी क्या हो रतना, सवा ली रुपया भना बार ही दिन में कैसे खूब गया? और मेरी तो दह भी समझ में मही घाता रतना, कि तुम कुन दो जीब हो, सवा ली रुपये महीने की घामद है फिर भी तू दूसरो के भाँडे-बरतन भाँजती है, रोटिया बँचती है। मेरे उनको भी तो सवा ली के बरीब ही मिलने है।

पर बहूजी, मेरे को तो कुन सत्तर और पाँच ही लाने हैं। उममे भी दस-पन्द्रह रुपया महीना दानर मे चाय-पानी का खर्च हो जाता है बार दोमती मे। दस-पाच की बीड़ी-मिगरेट जन जाती है। बीस-पच्चीस का हर महीने खुद के लिपे कपडा मे धाने है। मैं दो घरों का काम नहीं करूँ बहूजी, तो फिर महीने भर लावें क्या ?

भई, तू कुछ भी कह रतना, मुझे तो कुछ दाव मे बाना नजर आता है। या तो तेरा पति जरूर कोई नगा करता है या फिर रुपया बचाकर जमा करता होगा?……कहाँ है क्या ?

बात तो मेरी भी समझ में नहीं आती बहूजी, पर हा, इतना जरूर है कि वे नगा तो नहीं करने और न ही कही जमा करते हैं। पर यह जरूर कहूँ है कि एक दोस्त को उसके ब्याज के लिये पाँच सान ली रुपये दियाये थे, उसकी बिना और ब्याज देने है। और वह दोस्त मर भी गया बनाने है बहूजी……।

कही घाँब बाव है……। किस दानर मे है तेरा घादमी ?

दानर का नाम तो मैं क्या जानूँ बहूजी, पर हा, वे बना रहे थे कि बहुत बड़ा दानर है-मेरा बडा, राजा के महल-सा। हजार ने ऊपर घादमी काम करने है।……और लाहिया भी काम करती है बहूजी। दिन भर दँबे चलते हैं, मरपी मे कम २ लगती है। मरपी मे दँबी-दँबी। कई २ बाररामा है जो ‘इनको’ कुरमी पर बेंटी को ही काय-पाय की ला देने है, वह छंटे दे बकी छुटी के दिन लुटे दानर दिवाकर लाटेंग……।



देस्त है, बरसों बाद मिला है, साथ साथ, सिनेमा देखने सी..... ।

कभी मुझे भी ..... ।

हा .....हां..... अबके जरूर..... ।

बलक और कलक—

यह सामने जो भा रहा है न..... ।

कौन जगन ?

हा, इसका सनाम करने का स्टाइल देखना ।

जगन ने दो डंगली सलाट के सामने लाकर फूनिपर प्रकाउण्टेंट को सलाम किया और कुछ कहा ।

अब यह 'प्रपलम-चपलम सिस्टम्' की तरफ देखेगा..... ।

जगन ने देखा और दोनों सिस्टम् में से एक ने उसे हथोरे से बुलाया ।

अब देखना, यह हम लोगो की ओर कैसा गर्व में देखेगा ।

जगन ने बुल से बैठे नीरस क्लबों की ओर उड़ती हुई गर्व भरी दृष्टि फेंकी । सड़की ने एक फावत जगन को पकड़ा दी ।

अब यह कोई पत्रिका या बिताब इनसे लेगा ।

जगन ने एक पिली पत्रिका उन सड़कियों से ली और उड़ती हुई दृष्टि सब ओर दानता हुआ चल दिया । प्रपलम-चपलम सिस्टम् अपने साथ एक-दो बिताब या कोई पत्रिका घादि जरूर लाती है और अपने घंटे दो घंटे को यह जगन में जाता है, देख पड़कर थोड़ी देर में लौटा देता है । कई बार तो बिताब को बगल में दबाये २ ही धूमता रहेगा और थोड़ी देर बाद ज्यों की त्यों लौटा जायेगा ।

यह है तो हैरतम !

हां, हैरतम तो है ही पर 'एक्टर' भी बहुत

ऊंचा है यह । मुबह जब माफिक आता है, तब देखो इसकी शान । सिलकन शर्ट, वूचन पैंट, काचा चरमा और चमचमाती साइकिल । बस यहाँ दफ्तर आकर अपने वे कपड़े खोचकर रख देगा और भरने सही रूप में आ जायेगा ।

अच्छा, मैंने तो कभी ध्यान ही नहीं दिया, पार । बड़ा ऊंचा एक्टर है ।

तुम इसकी इमेज देखो कमान है । एक से एक पानदार । हमारी तुम्हारी इतनी हिम्मत नहीं जो धेंसी एक भी ड्रेस बनवावें । मारवाडी कमीने की जूतियों से लेकर पेशावरी, लोकर, पम्प, गिगा-पुरी चप्पल बगैरह कई जोड़े तो जूते हैं इसके पाग ।

बन्डर ! तुमने गूब स्टेडी किया इने ।

स्टेडी करने की बात ही है पार, धारचर्च होता है कि इतने कम रुपये में यह सब 'नबाबी ठाट' कैसे 'मेन्टेन' करता होगा ?

कुछ पार्ट टाइम ?

नहीं करता है, मैंने पूछा था । और मजा यह है कि वाइफ भी है इसके ।

वा .....ह ..... ।

और तारीक यह कि बिचर एक नहीं 'मिग' करता । उसमें भी एक और मजा..... ?

को क्या ?

जिम दो में, जिम क्ताम में प्रपलम-चपलम सिस्टम् जांगी उमी दो में, उमी क्ताम में, उन्ही के प्राम-पाम हजरत मोड़ हों ।

मगर यह सब बाजें दुर्खें कैसे माइय ?

दोनों में खरीदी है मैंने !

क्या मनचर ?

अब कभी इने एक्टर, दिनेवा के फिर उबरत

भी है तो एक-दो हफ्ता सुझने में जाता है। मोर  
में मारी बात —

सुझना —

जगह — "सब मन दिने 'बदल', हो पंथा हो  
मने मोट होवे

सुझना । मो — के ।

नगर घोर जगह—

एक हरे बाद जगह की मिश्रण। घट, पूरा  
घोर बरसात बादर बनने को हुआ दि, मर  
घने ही एक मरदाखी ने जगह को घात  
। जगह टांगे हुए बोला । मरदाखी बन  
हुआ, बोली ला —

'हुआ मो-ए जगह हुआ, हरे बा ।'

'बदल' के को ली सुझना के साथ, जगह मर-  
दाखी के दाग ला घोर मरदाखी के एक हरे में  
का बरसात । देन जगह में बहुत मरदा  
बोली मरदा बाग व मरदा । मैं तेरे मरदा के  
जगह हुआ ।

जगह के मरदाखी हरी के साथ बादर सुझने  
के साथ जगह दिना घोर मरदाखी का बरसा  
मरदाखी हुआ के को दिना के दिना मरदाखी ।

मो को सुझना के को ली हरे बा । सब को  
मो को दिना — मो को ली मरदाखी बाग है  
मो को ली ।

जगह के को ली सुझना के को ली हरे बा ।  
मो को ली सुझना के को ली हरे बा । जगह के को ली  
मो को ली सुझना के को ली हरे बा । मैं तेरे मरदा  
बोली मरदा बाग व मरदा । मैं तेरे मरदा के  
जगह हुआ ।

## बुझती चिनगारी

• भी भागीरथ भार्गव •

नगर के एक कोने में  
निर्जन मंदिर पर  
टिमटिमाते मणि  
मेघ पोस्ट के प्रकाश में  
तीन बड़े मणि  
सुझाते को बागों के  
धमका को बरसा  
मना न पाते हैं ।

बहुत बार एक भी बागे  
सुझाते हैं एक ही जगह  
जिनाहा हरे एक बा ।  
पर साधक  
मो ही सुझाते हरेमी  
बाग बागों में पती ही  
बेमोह मर जायेगी  
जो कोई बाग में हरी बिगाड़ी  
हरे में बाग बाग बागों ?  
पर निर बाद-बाग  
हुआ—हुआ जाये हैं ।

जगह के को ली सुझना के को ली हरे बा ।  
मो को ली सुझना के को ली हरे बा ।

जगह के को ली सुझना के को ली हरे बा ।  
मो को ली सुझना के को ली हरे बा । जगह के को ली  
मो को ली सुझना के को ली हरे बा । मैं तेरे मरदा  
बोली मरदा बाग व मरदा । मैं तेरे मरदा के  
जगह हुआ ।

## एक सफर

— श्री जुगमन्दिर तायल —

### जिन्दगी !

बहुत बार सोचा कि आखिर यह जिन्दगी है क्या ? जब सांफ़ ढल चली होती है और बाजारों में चहल-पहल बढ़ जाती है और धो केसों में बिजली की रोशनी में साड़ी, ब्लाउज, पेन्ट, बुसर्ट, जूते पहने निर्जीव मूर्तियाँ मुस्करा उठती हैं, जब रेडियो और लाउडस्पीकर्स द्वारा बितने ही स्वरो से कान भर उठते हैं और राह तागा-रिक्शा, मोटर, टैक्सी से भर उठती हैं, जब क्रिम स्नो, लैबण्डर की बितनी ही तरह की गन्धों से नाक भर उठती है और बितने ही चमकौले सिल्क्वन या पारदर्शी नार्वोन के बपटों से घाँवें भर उठती हैं, तब..... तब घनापास ही मन में न जाने क्यों विपाद पुन जाता है, उस घोर-घरौटे में, उस चहल-पहल में न जाने कौसा धकेलापन मन की बाटने लगता है । न जाने मन में क्यों यह सवाल उठ जाता है कि आखिर यह जिन्दगी है क्या ?

बहुन सी तस्वीरें दिमाग में उभरती हैं । ... ..  
ऊँची-ऊँची छः तल्ले वाली बिन्दिगें, घान, पीली, हरी रोशनी में बितने ही विज्ञापन ..... ऐरप्रो, बुलार और दर्द की दवा..... बँटनाथ की विश्वसनीय धातुवैदिक दवाइयाँ .. ... सनसनी लेख बहानी, दिल हिला देने वाले संगीत से भरा खानबाख ..... सुरक्षित भविष्य के चिये जीवन बीमा ..... मिनेमा तारिकाओं का प्रिय मातुल लक्ष्म ..... शक्तिदायक और पुष्टिकारक डाक्टर, धादि और नौबे लगातार बहना-बीकना घोर, दाम दम, बार, टैक्सी, रिक्शों और वेदन, .....

दूकानों से चिल्लाते रेडियो और लाउडस्पीकर..... सेल्स मैनों की यात्रिक मुस्कानें, "माइये सा क्या सेवा करें आपकी ? और जाने के बाद चले भाव हैं तावे परेमान करने । ..... जिन्दगी है ?

एक और चित्र । होटल और रेस्तराँ दुनियाँ । कलब । शस-हिनर । हल्की मिस परिवार ..... हाउ इ यू इ ? ..... बहा से खरीदी घा यह टाई ..... बेरी प्लीज टु मीट यू ..... फार योर सम्प्रीमेन्टम् ..... बाप्रेयुनेशनम् घोर सक्सेस । ..... गुने गने और पीठ के ब्याज थोड़े की पूँछनुसा जूड़े, ऊँची माइियाँ ..... पाऊ और निविस्टिक में पुने मेहरे ..... घाँरेस्टा पश्चिमी धुन और बमर में हाथ दिये नाचने जो ही .. ही .. ही .. शोमची हंमो ..... पेन्ट की ओ ..... बूट पालिस ..... यात्रिक मुक्का घोर मुहर्षा ..... यह जिन्दगी है ?

या, 'हुड मोनिय सर । ..... सर, घात्र ब हुट्टी दे दीजिये, मुझे काम है ..... सर घार यू नो रेडिय घावर बनाव टुडे ..... निरनल्य बचाम क ..... सर का बान बगुन । तुवमी का बहान बीकन, बेराब की सबाद मोबना बिहारी क भाया सोप्टर । रम नो होने ई भूगार, हज्ज, बकरा, दम्भ । ..... नारब-नईरबा मेद ..... खान सज्जा, बिबबग्धा, कडिया ..... और फिर ग्लास कम ..... हुट्टा माइये हुता देद गिराइव हो रही है ? ..... पश्चिम जो बन्वहा दम बोट का बरना

क्या कहिये है " माधुर माहुर बन का  
 प्रगटार क्या मानने ? निनगानिह ने ऐगियन  
 रिबार्ड कायन किया है फिर " " कृष्ण बन का  
 रिबन्ड क्या रहा ? बानपुर भैव को  
 बनेंगे मुनी बोधरी ? जगु दैव ने बमान कर  
 दिया " बार विमन ! 'मुजता' विमन है ओरदार  
 " बन करव में क्या मया माना दर्मा !  
 भैने दी० एम० को को मुर्दा को मुर्दा कि मया मा  
 मया विमली आई की एम का नाम है " "   
 वा विमली है ? मानने मुभजामनामे, अधिभारन  
 ओर दी० कविना ।

[illegible]

मैं तिर पकड़ कर बैठ जाता हूँ। कमरे के दरवाजे बन्द कर लेता हूँ। माइंट भी घटा नहीं करता। घामें बन्द कर लेता हूँ कि माइल सुन्नरी नहीं दीजे। बेरात घंघेरा... घंघेरा घंघेरा हो बस.....

पर वरान मेरा पीता नहीं सोचना । जिन्दगी !  
जिन्दगी क्या है ? यह मरिचकम मोर मन्दो की  
दुनिया । ये हम सोचती ठिगारों । ये ह्मारी  
कुंठा, बेचर कुंठा । दिन मोर दिवान को बारी  
पुल की वागिना । निराम हम तोड़ती ह्मारा ।  
जिन्दगी ओगे लगी हुई सुखी हो ओ जिमी राग-रिक्त  
प्रभाव मे बीरे-बीरे सुखर निजोह होकर लक बग  
रह । जिन्दगी निरामो बग भार होती हुई ।

दा. माता को माता नहीं, माता का माता नहीं  
 नहीं, दा-दीय दादी नहीं केवल पुत्र को पुत्र  
 दादा - एक पुत्र पर विचार ही यह बीच में  
 हो, कुछ नहीं, सम्पूर्ण ही केवल हो, माता नहीं  
 दादा, पुत्र दादा पर विचार को, माता को  
 देख, दादा के पुत्र - दादा को पुत्र-  
 दादा नहीं हो, दादा को पुत्र-दादा नहीं हो,  
 माता का माता और माता नहीं हो, हो केवल  
 माता, विचार, माता, माता हो दो माता को  
 पुत्र-पुत्र को पुत्र-पुत्र हो, पुत्र-पुत्र के माता को  
 माता केवल पुत्र दादा के दादा, जो एक पुत्र को  
 विचार-पुत्र हो दादा दादा, जो एक पुत्र को माता  
 हो पुत्र-पुत्र के माता के माता, माता के माता को माता  
 विचार पुत्र को विचार पुत्र विचार पुत्र दादा ही  
 दादा ही दादा ही

[illegible][illegible]

जनवरी का एक दिन। विशेष दिन नहीं था। सीधा-सा सामान्य दिन। मिशिर की दोपहर और मन-भाती खुनी धूप। जयपुर की चहल-पहल बरकरार थी। घुस्मे से भरा हुआ एक मित्र के साथ बम-स्टैंड की ओर चुपचाप चला आ रहा था। घुस्मे का कारण ये एक मित्र जो रात साय चलने का वादा कर मुबह मनेले हो चले गये थे। स्टैंड पर पहुंच कर मित्र को बिदा कर दिया तुम जाओ भले ही। नवल इतबार करता होगा 'चला जाऊंगा थोड़ी देर में'।

'नहीं। मैं फार्मेलिट्री में यकीन नहीं करता। जानते हो 'मच्छा' मित्र चल-दिये थे। फिर मुडकर बोले 'अब सब आ रहे हो बिनु ? जल्दी लौटकर यह रिस्सा भी अंतिम रूप से तय कर लो डाक्टर दे बा।'।

"बाहला तो मैं ही हूं पर सवाय छुट्टी का है न। बीरिया वरूंगा इसी महिने जाने की....."

बस जाने में देर थी। टिकट लेकर सामान रख, बाहर धूर में आ खड़ा हुआ। वस अभी खाली थी पर धीरे-धीरे भरती रही। टाइम हुआ। हार्न सुना तो सीट पर जाकर बैठ गया। देखा, पास ही एक लड़की आकर बैठ गयी है, ऊंट के घूमट रंग के चेस्टर से ढंकी हुई साधारण लड़की।

बस खी भी ओर भादत के मुताबिक चुप बैठा रहा। चर-चर-चर। बस चलती रही। कुछ घुनघुनाने की मन बर उठा। नोट बुक निवाल कुछ पंक्तियां लिखता रहा। स्टैंड धाया। पांच मिनिट एक बार बस फिर चल दी। मैं फिर अपने में डूब गया। धीमे से घुनघुनाता रहा ऐसे कि चर-चर-चर मैं ही वह घुनघुनाहट हूँ ही रहे किसी को सुने नहीं। बस में एक घुमाव लिया तो मैं हचके से उसने टक्का कर संभव गया।

फिर स्टेशन आ गया था। बस रुकी। सहसा

उमने पूछा "आप क्या मतलब जा रहे हैं ?"

"हां। और आप भी"

"मैं भी, हां"

बस फिर चल दी और मैं फिर अपनी घुनघुनाहट में डूबा रहा। उसने पूछा "आपको लिखने का शौक है ?"

"हां। थोड़ी कुछ, थोड़ा सा"

वह फिर चुप हो गयी। मैंने काँची जेब में रखी। ध्यान उचट गया था। पूछा "आप क्या मतलब ही रहती हैं ?"

"हां। आप ?"

"दिल्ली" कुछ रुक कर बनाया "जयपुर दोस्तों से मिलने आया था। आया ट्रेन में था और जा रहा बस में। सोचा कुछ बेराइटी रहेगी।"

बाहर वृक्ष और रेत के टीने उन्ही दिशा में भागे जा रहे थे और मूरत धीरे २ पहाड़ के पीछे उतरता जा रहा था। बस जाने और घुमाव पार करती बढ़ी जा रही थी। रुबाइयां मन में निजब गई थी और मन बीती बातों की दुनिया में लो गया था। एक के बाद एक ".... रिस्सी बानें मन के पटन पर उमरी आ रही थी। जीवन ! एक गुला पीपल का पत्ता, तीव्र हवा ने त्रिमे तीव्रकर शून्य आवाज में निराधार भटवने की छोड़ दिया हो। अरेला ! अरेलागन !! बचन की पंक्तियां पार पार 'कितना अरेला आर मैं !' मन बार-बार दोहराता रहा-"कितना अरेला आर मैं ! कितना अरेला आर मैं ?" बहने की नाते-रिखे सब है, देखते हैं, परिचय भी बहुत है पर बहने की हो तो है, मन की एगिनी के स्वर उनके स्वर से कुछ भय है। बाहर के उन सम्बन्धों का प्रभाव मन तक नहीं जाता। मन उनमें निस्संग है।-----उसकी ओर देखा। बड़ बाहर देख रही थी, पर बेचन हटि हो बाहर है आता मना।

गया कि मन बड़ी मोर है क्योंकि बायें कुछ मजबूत  
हंग में सोई की मजबूत है, होई पर कुछ मजबूत-मी  
पकान मोर मजबूत है। मोरी देर उनकी मोर  
देगाता रहा फिर बग की मजबूत मजबूतों का स्वाद  
कर निगाह दूसरी मोर करनी। एव निगाह  
बग की मजबूतों की मोर दावी..... धोती मोर  
मरु की मजबूत पड़े एव कृषा मजबूत, मोर दावी  
मुँह पर मुँहिया पकान रहा। मोर मोर फेद भारी  
पकान का मोर बनू या मोर का पकान। एव  
मजबूत की। मजबूत मुँह निगाह मुँह-मुँह की  
निगाह मोर मजबूत वपु। मजबूत मोर में मजबूत,  
मजबूत मोर मोर निगाह निगाह मजबूत।

बग मजबूतपुत्र की मरी पार कर रही थी।  
मजबूत दूर की मोर मजबूत मजबूत मोर दे  
उत्तर रहा था। बहुत बार गया है कि मजबूत का पार  
लोने मजबूत के मजबूत के मजबूत मजबूत है  
मजबूत मजबूत मोर का मोर मजबूत के मजबूत पर  
मुँहिया निगाह मजबूत मोर-मोर-मोर। मोर का  
मजबूत मोर मोर मजबूत मजबूत मजबूत।

मजबूत का मजबूत था। मजबूत-मजबूत के मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत। मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मोर मुँहिया मुँहिया है।  
मजबूत मोर मजबूत मोर मोर। मजबूत मोर मजबूत  
मजबूत मोर मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत

मजबूत

मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत

बहुतर ही यह पुत्र हो रही।

‘हो, बहिये’

‘पुत्र मुताबिक न। वही सही जो मजबूत मोर  
देर पहले निगाह रहे थे। मन होता है मोर ही पुत्र  
मुने.....’ यह फिर मजबूत पकान यह कर का  
हो गई।

उत्तर नहीं दिया। मोर दे पुत्रपुत्र का पकान  
दिया। मोर ही मजबूत मोर पकान मजबूत का  
मजबूत मुताबिक दिया। मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मुताबिक है।

मजबूत-मजबूत-मजबूत मोर का मजबूत। मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत

मजबूत-मजबूत-मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत

मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत

मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत

मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत  
मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत मजबूत

नर अपने काम में मग्न थे। किसी ने फिर पूछा  
“कितनी देर लगेगी भई ?”

‘भापेक घंटा’, उत्तर मिला।

कुछ समय बाद कहा “घोड़ा घूम आयें”

कुछ न बोलकर उसने पैर धागे बड़ा दिये।  
बढ़ते रहे। बस पीछे रह गयी थी। पास ही रोड़ियो  
का एक ऊँचा सा ढेर पड़ा था। भ्रजान ही वहाँ  
गलर बैठ गया। वह भी पास आ बैठो। घोड़ी देर  
घुप रह बोली “भापने वह भधूरी छोड़ दी थी”

कहा, ‘लामोती मे भावात्र गूँजेगी तो भच्छा  
नहीं लगेगा’

‘धीरे से ही। नहीं तो रहने दें, भाप न चाहें  
तो’।

धीरे-धीरे गुनगुनाना शुरू किया। फिर धीरे  
से गुनाया “जब तुमने दर्द किया है तो मैं ही पीर  
सहूपा धीर जब तुमने धनुष ताना है तो तीर भी  
मैं ही सहूंगा क्योंकि मैंने ही तो तुम्हारा हास दिया  
है यतः मैं ही घालो के प्याले मे नीर भरकर प्रति-  
दान दूँगा। जीवन चलता ही जाता है धीर राह  
बभी रकती नहीं, धीर दूर रहने पर भी बाह रकती  
नहीं। एक बार जब तीर मन को भेद देता है तो  
भून रहा ही करता है धीर भाह रकती नहीं।”

गुनकर घुप हो रही। दूर मे हल्की आवाजें आ  
एँ। वो बस की सवारियों की। हम घुप-घान बैठे  
रहे। मन की पत्तें खुलती जा रही थी—  
जैसे कमल के दल। मन में कुछ भरता सा  
लगता था जो धून्यता को, खालीपन को समाप्त कर  
एरा था। बस धीर सवारियों को भूनकर न जाने  
मन वहाँ घुमने लगा, बिना बढ़ाये ही रोड़ियो पर  
हाथ धागे बढ़ गया था धीर दूसरा भी। दो हाथ  
हाथ-पास थे। संतुलित मित्र गयी थी। हाथ एक

हल्का दबाव महसूस करता था। बैठे रहे। कोई  
नहीं बोला। “कोई नहीं बोला।” धीरे से  
कहा ‘भापका नाम नहीं पूछूँगा पर सम्बोधन’

‘रहने दें’ थोमे स्वर मे उत्तर मिला।

“हां, जरूरत नहीं है उसकी, क्योंकि सम्बो-  
धन तो दूर रहने पर ही काम आता है।”

जाना कि उसने कंधे पर सिर टिका दिया है।

कहा, “तबियत होती है कि भापका कुछ परि-  
चय जानूँ, पर नहीं, पूछूँगा नहीं। अपना भी नहीं  
दूँगा धीर सापद भाप जानना भी नहीं चाहूँगी।  
इस क्षण का सम्बन्ध पूर्व मे नहीं जोड़ूँगा, यह भी  
कोशिश नहो करूँगा कि पर मे इसका कुछे। यह  
अपने मे पूर्ण है। यह विद्वान का क्षण-जब मेरा  
विद्वान किया है तुमने, यह धनराज का क्षण-जब  
हमने भ्रजान ही एक दूसरे का नैकट्य अनुभव किया  
है किमी बाहरी कारण मे नहीं, मन के धागे मे।  
यह विद्वान का क्षण अपने मे पूर्ण है। पूर्व धीर  
पर की इसे आवश्यकता नहो”

कितनी ही देर क्षामोण रहे।

कहा, ‘त्रिभुगी मे अनेमान ही सदा पाया  
है। केवल निरापार जैसे गुला पला धून्य मे मग्न-  
कता। राह को बहव-यहव में होटल धीर बनव  
की बमक-इमक में, बानेज के समान धीर अधिकार  
मे मन ने कुछ असीब ही निरमहायता धीर अस्मान ही  
अनुभव किया है। जैसे कि अस्मान का एक तल्ला  
हो जो सहरों की दवा पर बिना दिला जाने बढ़ रहा  
हो डूबता-उतरता टककरे जाता। यह धनराज  
नही पाता कभी, जन का भर देने काका यह  
विद्वान को सन्देश मे परे हा, कुछ धर कुछ मे  
दूर हो नहो जाता। मे कुछ हूँ —

कुल व्यवस्था प्रतीत होती है। कुर्से विभाग की व्यवस्था है।

। तस्य परिचर्तन ।

( बाबा के हाथ )

(बाद के पल का स्वर)

मिथ्या—मनोपरे, यही मिथु है मनु का  
 दूसरा गौर जीवन । एक ही मनु दूसरे का प्राण  
 पालन करती है । जीवन । मनु । मनु... जीवन ।  
 विशालप्राणी भूमता । तुम्हारे मनुष्य ने मेरा  
 नाम धरकर कर दिया है, मनोपरा ।  
 मनोपरा—

दशपदा—दुखान्न क्या कर रहे हैं। मैं तो  
 देव के लक्षणों में हूँ। मेरा जीवन तो मानवों के जीवन  
 पर चलता है।

निर्धार—मार्गदर्शक । दिने केने पर ओ मार्गदर्शक  
 वरा हूमा वा वर हूमा है, मुझे प्रमाण मार्ग दर्शक  
 मार्ग दर्शक के निम्न मार्ग है, प्रमाणार्थ को जरा,  
 मार्ग दर्शक हूमा है मुक्ति दिव ।

1. The first part of the document is a list of names and addresses, which appears to be a directory or a list of contacts. The names are written in a cursive script, and the addresses are listed below them. The list includes names such as "Mr. J. H. Smith", "Mr. W. H. Jones", and "Mr. R. H. Brown".

विद्यार्थी, शिक्षक, समाज में सेवा करने वाले लोगों को प्रेरणा देने का काम है। यह काम, मुझसे भी, मुझसे

[illegible]

...the ...

करती थी, मुग़ से और मुझे दूसरा  
रूप की शोष करती है। जीवन की  
बर्बर से दूर रहना है।

मनोभरा—देख, मैं एक प्रत्यक्ष देव  
मनोहर प्राणों उम प्रत्यक्ष मैं संज्ञा होकर सी  
रहे हैं, धर्म । वास्तविक मनो भरी है अपने  
बामना करे।

निर्धार्य—मरण हो दणोषरा—दणोषरा  
 दणोषरा मे दूर जाया जाया ह मे, जीवन  
 मरण की घुरी मे दूर मरण मार्ग पर। मरण शिवा  
 मा मेरा विराग पवन हो उठा है। शान-  
 विगतिन होने वाले जीवन मे शान विगतिन  
 वा अनुमरण करया मार्गमा मेरा रूप बनी  
 बरोती ।

(निर्धार्य प्रमाण करते हैं, उपरान्त प्रस्तुत है।)  
प्रकार के नीचे उल्लिखित प्रमाण उल्लिखित। प्रमाण  
के आधार पर एक कानूनी विवेकी, कानून  
कानून, प्रमाणित.....

( एतत् प्रमाणम् )

[illegible]

११११-१२११११ ११ ११ ११११ ११ ११  
 ११११ ११११११ ११११ ११११ ११ ११११ ११११  
 ११११ ११११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

देवदत्त—तो मेरा मंत्र है सुवराज, तुम सच्चा पद ग्रहण करलो।

भजातयानु—परन्तु यह विश्वासघात होगा। पिदुभी से विमुक्त होकर किस नरक में स्थान बनाऊंगा, सही जानता राजकुमार।

देवदत्त—तब छोड़ दो इस धरती के मुख-मोन्दर्य की प्राप्ति। महाराज बिम्बसार गौतम सिद्धार्थ के प्रति आकर्षित होते जाते हैं। हमें सिद्धार्थ को राजगृह प्रवेश से रोकना होगा। उसने मेरे भावेष्ट का अपहरण कर कपिलवस्तु के संघाराम में मुझे परमानित किया था। मैं उसे शांति में न रहने दूंगा। मेरी प्रतिज्ञा बठोर है।

भजातयानु—यथेष्ट, राजकुमार, इस कंटक को पचभट्ट करना ही अभीष्ट है। मेनका ने विश्वामित्र का तप नष्ट किया था और भगव की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी अम्बिकानी रम्भा का रूप धारण कर सिद्धार्थ को। देवदत्त की प्रार्थना को जिसने तृप्ति मिले वही कर्म मुझे भी प्रिय है।

रम्भा—विस्मन्देह राजकुमार, मेरा सौन्दर्य, मेरा मृग्य तपस्या भंग कर सकता है।

देवदत्त—मित्र, उपवृत्त हुआ है।

देवदत्त—यह देखो, सुवराज भजातयानु, वृक्ष के नीचे सिद्धार्थ समाधि लगाकर बैठा है। हमें यही ने पराधा का प्रसन्नोक्त करना उचित है। प्राप्त प्राप्त सिध्य-समूह है वही। किसी की दृष्टि न पड़ जाय हम पर।

( कुछ दिनों का स्वर सुनाई देता है )

भजातयानु—देवदत्त, यह अम्बिका-मुंड बैठा। बनी टोर है। सिद्धार्थ का भंडा-बोड अभी हुआ जाता है। तपस्वी और नारी! अन्धरा पालक है।

पद्म—सुजाता, तुम्हारा दाम्पत्य जीवन कल-

दायी हुआ है। पुत्र-लाभ मिला है, तुम्हें। प्रार्थना कर लें।

सुजाता—( सिद्धार्थ के निकट जाकर ) मुझे सुकृतो का फल मिले।

सिद्धार्थ—कौन है, भन्ते। तुम्हारे आगमन का हेतु।

राधा—देवता, मेरी स्वामिनी की पुत्र-लाभ हुआ है। कर्त्तव्य प्रेरणा से आकर्षित होकर बची आई है।

सुजाता—देव, आपका प्रताप सुफलदायक हुआ है। यह है मेरी चिर वाञ्छित साधना। बावक को प्राप्तिवादि प्रदान करें।

राधा—और ग्रहण करें, देवता यह मुम्बादिष्ट शीर।

सिद्धार्थ—देवी। यह बावक बैसा और यह शीर। हा, निरदान रहकर भी आनन्द की प्राप्ति न हुई। इस प्रकार इस देह को ही विगलित कर दूंगा तो मार्ग भ्रष्ट रह जायेगा, शरीर की रक्षा करनी होगी। तभी वह समर्थ होगा और प्राप्ति बड़ेगा करने मार्ग पर, देवी। मगनमय जीवन हो तुम्हारा, मुग २ तब कीर्ति हो बावक की।

सुजाता—देव-बाणी ने उगड़न किया है। राधा का ... पादम।

सिद्धार्थ—देवी, उदर में चिरबाव में कुछ पट्टा नहीं है।

राधा—दृष्ट कीर्ति, देवता। अहीभाष्य हमारे।

सिद्धार्थ—भन्ते, मैं देवता नहीं हूँ एक नाशान्ग मनुष्य में भिन्न कुछ नहीं—( और-नष्ट करते ) बितना मुम्बाहु है यह पादम।

मुम स्वयं हीन हो हो । मुझे विश्वास ही  
मिल गया है ।

। ह्यस्य परिचयः ।

दत्तोपरा-दयारिदे भार्गव । दायरी प्रतिष्ठापना.....

( बालक के गल्ल का स्वर )

विचार्य—दलीपरे, वही मनु है मनु का  
दुसरा सोर जीवन । एक वो मनु दुसरे का आत्मा  
बारात बननी है । जीवन ! मनु ! मनु... जीवन ।  
विचार्य—जीवन ! दुसरी मनुस्य ने मेरा  
दाल बनाना का दिया है, दलीपरा ।

मनीषा—सुखदा बड़ा बड़ रहे हैं। मैं तो  
 रीक के मरणाग में हूँ। मेरा जीवन तो आगरे धूमिल  
 पर चल रहा है।

निर्धार—सारी सारी । सारी सारी वर जो सावधान  
 वर हूँ वर वर वर वर वर । मुझे सावधान सारी वर-  
 सावधान वर के वर वर वर वर, सावधान वर वर, वर  
 वर वर वर वर वर वर वर ।

27-113-64 28 29 30 31

निम्नलिखित - निम्नलिखित विषयों के विषय में विचार करें  
 १. विद्युत और चुम्बकत्व का सम्बन्ध। २. विद्युत और चुम्बकत्व का सम्बन्ध।  
 ३. विद्युत और चुम्बकत्व का सम्बन्ध।

बरनी ली, युग में और मुझे दूसरा मार्ग दिखाए  
 गल की शोष बरनी है । जीवन और मृत्यु के  
 बवंडर में दूर रहना है ।

मनीषा—देर, मैं एक प्रश्न देना रही हूँ।  
मनीषा प्रामाद उस प्रश्न में बाँध होकर मोहतर बन  
रहे हैं, धार्य । बालक प्रामो तैयार है हमने जीवर को  
बानना करें ।

सिद्धार्थ—कहाण हो दसोपरा—दसोपरा कपो  
मंदिह मे दूर जाया बाग्या हूं यों, जीवन की  
मरणा की मृती मे दूर राख मार्ग पर। दसल शिवाय-  
या मेरा शिवराम कब हो उठा है। शाल-शाल  
विपणित होने वाले जीवन मे हजर गिराई मार्ग  
वा समुद्रगण करा। मांजगा और गुप्त कपो  
कपोती ।

(निर्दोष प्रमाण करो, उनका स्वर बंद होगा।)  
 अधकार के पीछे उद्योग प्रणमता उद्योग। अंग  
 के पदार्थ एक साहित्य विवेक, साहित्य  
 साहित्य, साहित्य...

( ५१३ अक्षिपत्रिका )

अथवा—अथ देवदत्त की बात यह कि वह  
मुझसे लड़ने के लिये है। यह सब बातों के लिए  
यह सब बातें ही हैं। अथवा देवदत्त की बात  
यह सब बातें ही हैं।



( बादू दूरी पर मूनाई देना है )

मिश्रा का एक गीत । (भद्रक) — भद्रक यह  
 था । छुदेव का पतन । कामदेव के कमनीय बाणों  
 में बिद हो गये ।

२. शिष्य बोहिन्द—ऐसे गुरु और तपस्वी के साथ रहने पर हम भी ब्रह्मकृत हो जायेंगे ।

१ शिष्य—जबो, जबो बांधव । हमे यही नहीं पता ।

मुखात्—माना है देवता, स्वामी प्रीतिभा कर रहे हैं।

गिःपार्य—अथ तुम्हास माय मंगलमय करे...

(श्यामल) अब मैं साथ का साक्षात्कार करूँगा  
— साथ ही दोष में देख का दास बना दूँगा—बलिन  
हमसा, बठोर साधना में लगनस्थ करूँगा; साथ,  
दही में राहु संकर है।

देवदत्त—सम्मा ज्ञानपात्र । ताराही जगत्पि मे  
मन्द हस्ता पात्रा ।

सप्त—दशक सप्तशत, यथा शब्दे यथा  
वर्ण्ये ।

११११—११११ ११११ ११११, ११११, ११११ ११११  
 ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११  
 ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११  
 ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११ ११११

राशि पर तुम्हारा भर्त्सना बधाया है ७२४  
विमोह नहीं है तुम्हें ।

रत्ना—राजकुमार ! मैं धुन नाती हूँ..... मैं  
मे मनुष्य की वृत्ति परिवर्तित हो जा सकती है.....  
बिना यह प्रवृत्ति.....को.....।

देवदाता—एक समय मुबराक मिर्झा को बड़े धरा मारी के सोनई में विमोहित कर दिया था जोर मय हयमी मुहाराब मट्ठ आनोविक सोनई तमारे मिर्झा का भागन दिया देता.....

( संगीत ध्वनि के माध्यम से, रस का वर्णन  
 प्राप्त होता है )

मित्रार्थ का स्वर—

सावधान ! कामदेव, ये तुम्हारी नीज की चू  
बाणा हैं तुम्हें हिटलर मनोरथ होना पड़ेगा। री  
मोर का री पर विजय प्राप्त की है ही। की  
तुम्हारा कठोर है।

( ਸੰਸਦੀ ਸ਼ਾਇਰ ਸੁਧਾ ਕਵਿਤਾ ਲਿਖਿ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ )

रक्त संहारक ध्वनि—

सुखदास ! शरीर हो मनु मरीर भाव न । सुखी  
मनुष्य सुखदास भाव है ।

( २४३-१ ४३४ )

मिथुन—एक प्रकार का मनुष्य जिसका धर्म है

सिद्धार्थ—रूप, धोवन, श्री, सम्पत्ति पुरष, नारी सब खंचन है..... स्थिर कुछ भी नहीं, केवल एक मैं स्थिर हूँ .. केवल मैं स्थिर हूँ ।

षट्हास स्वर—धीर बान राहुल का विमोह भी नहीं है तुम्हें ?

सिद्धार्थ—नहीं है, यह सब पार्थिव रूप है.... प्राप्तात्मिक रूप मुझे ज्ञात हो चुका है ।

( सहसा वीणा ध्वनि सुनाई देती है । )

षट्हास स्वर—मैं राग मंजुत वरूंगा ।

( वीणा मंजुत होती है... पर उसका अन्तिम मोड़ पर तार टूट जाता है । ध्वनि मन्द से मन्दतर होती हुई लुप्त हो जाती है । )

सिद्धार्थ—धन्य है, मैं समझ गया इस रहस्य को, न प्रति निमित्त, न प्रति कठोर, मध्यम । केवल मध्यम, मध्यम मार्ग का आश्रय लेना होगा मुझे । यही प्रवृत्ति और निवृत्ति के मध्यम एक समवृत्ति है । योग और भोग के बीच का साम्य मित्र है मुझे ...

देवदत्त—उठो, रम्भा ! चलें । सिद्धार्थ पर कोई अधिकार नहीं कर सकता वह प्रविजित है, अभेद्य है ... ( ध्वनि दूर जाते दृश्य ) चलो, लौट चलें । ...

देवदत्त—मित्र भ्रातृव्य, सिद्धार्थ एक असाधारण तपस्वी है । उन्होंने काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, रसना, शृणा, रति-रश्चि, प्रवृत्ति पर विजय-लाम किया है..... वे जयत का वरुणाण करेंगे । चलें... हम भी जनवर उनका आशीर्वाद प्राप्त करें ।

सिद्धार्थ —बोधिसत्व उठ, जन ..... जन का मार्ग प्रदर्शन कर.....

( संगीत )

देवदत्त—अमिताभ की जय हो ।

सिद्धार्थ—देवदत्त, आधो बन्धु ।

देवदत्त—मुझे क्षमा कर दे भगवन् । प्रतिहिमा की भावना ने मुझे उन्नत पथ में गिराकर पतित कर दिया था । मैंने ही आपके नगर-भ्रमण के समय वृद्ध, रोगी, मृतक और संन्यासी को भेदकर बाधा उपस्थित की थी अब मैं आपकी शरण हूँ ...

सिद्धार्थ—उठो देवदत्त, तुम्हारी धर्म गति हो ..... वे निमित्त ही तो साधक हुए मेरी साधना में ।

रम्भा—मेरा अपराध क्षमा हो देव !

सिद्धार्थ—तुम कौन ! मैं नहीं पहचानता भन्ते !

भ्रातृव्य—यह अम्बपानी है—शैशवी की नगरवधु..... आपके तप में बाधा डाने भेजा था मैंने देव ! मुझ अघम, नीच, पानी भ्रातृव्य की क्षमादान दें ।

रम्भा—देव, मुझे इस जीवन से पूरा हो चली है ..... बुद्ध की शरण आई हूँ । धर्म की दीक्षा मिले मुझे ।

सिद्धार्थ—निस्सन्देह समुचित परचागान ने हृदय मन्थन कर लिया है तुमने..... तुम अधिका-रिणी हो ..... तुम्हें मिलेगा तुम्हारा भाग ।

रम्भा—उपश्रुत किया है देव ने ।

( अपराजित समूह की ध्वनि सुनाई देती है जो निरन्तर बढ़ती ही जाती है )

जन समूह—अमिताभ की जय हो..... दीनम बुद्ध की जय .....

बुद्ध शरणं गच्छामि ।

धर्म शरणं गच्छामि ॥

मम शरणं गच्छामि ॥

( धीरे-धीरे स्वर मन्द होगा )

( स्वर धीरे-धीरे )

प्रतिहारो—जागृतार ! दुसरार वधार रहे  
१ । उनके सार सार अन्त-मनुष्य भी है ।

मुन्नेरन—दुखपात्र मिहार्प का रहे है, प्रयागी !  
प्रयागी । मुना तुमने, मिहार्प का रहे है, कहा है  
कानन रातन, कामो कुमार तुम्हें दिव्य-दशम का  
नाम बताये । यामो प्रानी मोरखरी ने कहा उनका  
कहा मुन्नेरन मोर खाना है ।

( पार्श्व का स्तर धीरे-धीरे निरस्त होकर  
नष्ट होता है )

१३१-५६ वागुं नृपतिः

बुद्धिमान् बुद्धिमान् बुद्धिमान्

১৯৭১ সালের ১৫ আগস্ট

दुसरी—आपकी बेटी दुसराय ! यह जानकर  
दुसराय बड़ा दुःखी हो गई । वह जानती थी कि दुसराय  
की शाद की खबर से वह बड़ी दुःखी होगी परन्तु  
होना ही पड़ा ।

[illegible]

सुखद-विषय, यथा यथा भूयते सुखद-  
यथा यथा विषय विषयः ।

१०५-॥ अथ चत्वारिंशदधिकशतकम् ॥  
इति श्रीमद्भगवद्गीतायां अष्टाध्यायः समाप्तः ॥

[illegible]

“모든 것이 다스려질 것이다. 그러나 그 때까지는  
 내가 살아야 한다. 나는 살아야만 할 것이다.”

है। हाँ, महाराज ! भिशा मिने । मातु भी वरा मातु  
भी भिशा न हँदी ?

प्रजापति—मेरे साथ, मैं मे प्रदी बाहर को  
कभी निराश बिना है ?

इतिहासी—एव धारि सुभासित, सुभासितः  
मोक्षत पीम माधो ।

सज्जोवन—साग, यह रहे तुम्हारे दिता विदुष्य ।

राष्ट्र—विश्वी प्रणाम ।

निर्दोष—राज्य, तुम भी बुरा होगे ।

राहुन—य तो मानना पड़ा है । मित्रों के मुँह पर लीजिये ।

मित्रा—तब तो रात में... सुझावों का क्या  
 जवाब है ? सोच । सामने रात में जाओ, देखो । मित्र  
 दो ... मित्र का लक्ष्य है शर काटना है, बचाना नहीं ।

सत्यमेव जयते—येर तेहे वाग कदा येव सता हे !  
 मी मह कदा भेट कर चुकी ह !

विद्यार्थी—मुझ्झा स्यात्तु वदंति हि । न  
स्यत्तु वदंति हि । न

१०००—१००० मी १००० मी १००० मी १००० मी  
 १००० मी १००० मी १००० मी १००० मी १००० मी  
 १००० मी १००० मी १००० मी १००० मी १००० मी

राष्ट्रपति का पद और कार्य

[illegible]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

१७ अर्थात् - २००८-०९ वित्त वर्ष में ३५ करोड़ रुपये

한글로 된 문장을 한글로 쓴다.

한글로 된 문장을 한글로 쓴다.

1. 2. 3. 4. 5. 6. 7. 8. 9. 10. 11. 12. 13. 14. 15. 16. 17. 18. 19. 20. 21. 22. 23. 24. 25. 26. 27. 28. 29. 30. 31. 32. 33. 34. 35. 36. 37. 38. 39. 40. 41. 42. 43. 44. 45. 46. 47. 48. 49. 50. 51. 52. 53. 54. 55. 56. 57. 58. 59. 60. 61. 62. 63. 64. 65. 66. 67. 68. 69. 70. 71. 72. 73. 74. 75. 76. 77. 78. 79. 80. 81. 82. 83. 84. 85. 86. 87. 88. 89. 90. 91. 92. 93. 94. 95. 96. 97. 98. 99. 100. 101. 102. 103. 104. 105. 106. 107. 108. 109. 110. 111. 112. 113. 114. 115. 116. 117. 118. 119. 120. 121. 122. 123. 124. 125. 126. 127. 128. 129. 130. 131. 132. 133. 134. 135. 136. 137. 138. 139. 140. 141. 142. 143. 144. 145. 146. 147. 148. 149. 150. 151. 152. 153. 154. 155. 156. 157. 158. 159. 160. 161. 162. 163. 164. 165. 166. 167. 168. 169. 170. 171. 172. 173. 174. 175. 176. 177. 178. 179. 180. 181. 182. 183. 184. 185. 186. 187. 188. 189. 190. 191. 192. 193. 194. 195. 196. 197. 198. 199. 200. 201. 202. 203. 204. 205. 206. 207. 208. 209. 210. 211. 212. 213. 214. 215. 216. 217. 218. 219. 220. 221. 222. 223. 224. 225. 226. 227. 228. 229. 230. 231. 232. 233. 234. 235. 236. 237. 238. 239. 240. 241. 242. 243. 244. 245. 246. 247. 248. 249. 250. 251. 252. 253. 254. 255. 256. 257. 258. 259. 260. 261. 262. 263. 264. 265. 266. 267. 268. 269. 270. 271. 272. 273. 274. 275. 276. 277. 278. 279. 280. 281. 282. 283. 284. 285. 286. 287. 288. 289. 290. 291. 292. 293. 294. 295. 296. 297. 298. 299. 300. 301. 302. 303. 304. 305. 306. 307. 308. 309. 310. 311. 312. 313. 314. 315. 316. 317. 318. 319. 320. 321. 322. 323. 324. 325. 326. 327. 328. 329. 330. 331. 332. 333. 334. 335. 336. 337. 338. 339. 340. 341. 342. 343. 344. 345. 346. 347. 348. 349. 350. 351. 352. 353. 354. 355. 356. 357. 358. 359. 360. 361. 362. 363. 364. 365. 366. 367. 368. 369. 370. 371. 372. 373. 374. 375. 376. 377. 378. 379. 380. 381. 382. 383. 384. 385. 386. 387. 388. 389. 390. 391. 392. 393. 394. 395. 396. 397. 398. 399. 400. 401. 402. 403. 404. 405. 406. 407. 408. 409. 410. 411. 412. 413. 414. 415. 416. 417. 418. 419. 420. 421. 422. 423. 424. 425. 426. 427. 428. 429. 430. 431. 432. 433. 434. 435. 436. 437. 438. 439. 440. 441. 442. 443. 444. 445. 446. 447. 448. 449. 450. 451. 452. 453. 454. 455. 456. 457. 458. 459. 460. 461. 462. 463. 464. 465. 466. 467. 468. 469. 470. 471. 472. 473. 474. 475. 476. 477. 478. 479. 480. 481. 482. 483. 484. 485. 486. 487. 488. 489. 490. 491. 492. 493. 494. 495. 496. 497. 498. 499. 500. 501. 502. 503. 504. 505. 506. 507. 508. 509. 510. 511. 512. 513. 514. 515. 516. 517. 518. 519. 520. 521. 522. 523. 524. 525. 526. 527. 528. 529. 530. 531. 532. 533. 534. 535. 536. 537. 538. 539. 540. 541. 542. 543. 544. 545. 546. 547. 548. 549. 550. 551. 552. 553. 554. 555. 556. 557. 558. 559. 560. 561. 562. 563. 564. 565. 566. 567. 568. 569. 570. 571. 572. 573. 574. 575. 576. 577. 578. 579. 580. 581. 582. 583. 584. 585. 586. 587. 588. 589. 590. 591. 592. 593. 594. 595. 596. 597. 598. 599. 600. 601. 602. 603. 604. 605. 606. 607. 608. 609. 610. 611. 612. 613. 614. 615. 616. 617. 618. 619. 620. 621. 622. 623. 624. 625. 626. 627. 628. 629. 630. 631. 632. 633. 634. 635. 636. 637. 638. 639. 640. 641. 642. 643. 644. 645. 646. 647. 648. 649. 650. 651. 652. 653. 654. 655. 656. 657. 658. 659. 660. 661. 662. 663. 664. 665. 666. 667. 668. 669. 670. 671. 672. 673. 674. 675. 676. 677. 678. 679. 680. 681. 682. 683. 684. 685. 686. 687. 688. 689. 690. 691. 692. 693. 694. 695. 696. 697. 698. 699. 700. 701. 702. 703. 704. 705. 706. 707. 708. 709. 710. 711. 712. 713. 714. 715. 716. 717. 718. 719. 720. 721. 722. 723. 724. 725. 726. 727. 728. 729. 730. 731. 732. 733. 734. 735. 736. 737. 738. 739. 740. 741. 742. 743. 744. 745. 746. 747. 748. 749. 750. 751. 752. 753. 754. 755. 756. 757. 758. 759. 760. 761. 762. 763. 764. 765. 766. 767. 768. 769. 770. 771. 772. 773. 774. 775. 776. 777. 778. 779. 780. 781. 782. 783. 784. 785. 786. 787. 788. 789. 790. 791. 792. 793. 794. 795. 796. 797. 798. 799. 800. 801. 802. 803. 804. 805. 806. 807. 808. 809. 810. 811. 812. 813. 814. 815. 816. 817. 818. 819. 820. 821. 822. 823. 824. 825. 826. 827. 828. 829. 830. 831. 832. 833. 834. 835. 836. 837. 838. 839. 840. 84

मुद्रोषन—सिद्धार्थ, यह क्या मनर्थ.... राहुन  
बानक है.....उसके अभिभावक तुम नहीं रहे।

सिद्धार्थ—यथेष्ट महाराज। भविष्य मे बिना  
भूमिभाक् की इच्छा के, दीक्षा न दूंगा।

यसोधरा—मुझे दीक्षा मिले।

मुद्रोषन—यह क्या देव रहा हूं! सर्वनाश  
का पथ।

सिद्धार्थ—ममता मोह का त्याग करे राजवृ।  
कृत्य, धर्म का पावन ही जीवन का निर्वाह पद  
प्रदान करता है।

शनि—तथागत की जय। बुद्ध शरणं  
गच्छामि.....

मुद्रोषन—तब पुत्र, मुझे भी अपने संग में लें।

नन्द-छन्दक—जय हो देव।

सिद्धार्थ—यथेष्ट राजवृ। भरे कीन बान्ध  
नन्द.....छन्दक, तुम कहां छिपे थे?

नन्द—क्या कहूँ देव। यह दृश्य, यह व्यय  
देखी नहीं जाती....

छन्दक—युवराज भव तो हमे छोड़कर न जायें।

सिद्धार्थ—तुम दोनों माना मेरे पास, तुम्हें  
सन्मार्ग का, अपनी समूह्य निधि का दान दूंगा।  
तथागत के मध्यम मार्ग पर झुकड़ होकर जीवन का  
भानन्द प्राप्त करता है तुम्हें।

जनसमूह—तथागत की जय। भगवान बुद्धदेव  
की जय।

समवेत स्वर मे—बुद्ध शरणं गच्छामि।

धम्म शरणं गच्छामि ॥

सयं शरणं गच्छामि ॥

ग्रामोद्योग देश में व्याप्त बेकारी, अर्द्ध बेकारी दूर करने में समर्थ है।

ग्रामोद्योगी वस्तुएँ अपनाकर ग्रामीण भारत को

सुदृढ़ बनाइये

राजस्थान में तेल घाणी उद्योग व ऐसे ही अन्य हजारों परिवारों  
को रोजी देकर शुद्ध वस्तुएँ उपलब्ध कराते हैं।

प्रत्येक खादी एवं ग्रामोद्योग भण्डार पर उपलब्ध हैं

राजस्थान खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा प्रमाणित



एक दिन में बार बार खाता है तो ५० रुपये पाने बाधा एक दिन में कितना। किन्तु उससे हिसाब न बैठता वह पुनः अपने दिमागी विटमिनो में जोर लगाता, मैनेजर साहब के परिवार में भी तो वही ६ आणी है उनकी आमद के भ्रमजरिये भी है फिर ? किन्तु फिर भी हिमाब न होता। एक बार उसने वहाँ भ्रमबार में पड़ा था “नई देहली के राजमहल और गरीब मजदूरों की भोपड़ियों में जो विपत्ति है वह स्वतंत्र भारत में एक दिन भी नहीं टिक सकती, राष्ट्रपिता गांधी।” वह बार-बार इन शब्दों को दोहराता, सोचता, उसका मन मस्तिष्क पर सवार हो जाता छोड़े की तरह छुने मैदान में सरपट दौड़ लगाता, एक भाव आता दूसरा जाता। अगणित सहर्ष उनके गंभीर हृदय सागर में उठती, आपस में टकराती, चकना-चूर होती, उन्नति का लाभ का कोई रास्ता नहीं, बच्चों की शिक्षा के लिये कोई सहारा नहीं, वह अपने उन मासूम बच्चों का जीवन कैसे बनाये। क्या करे ? अर्थाभाव के कारण उसकी स्वयं की ही नहीं उसके बच्चों का मविष्य भी गहन भ्रमकार में परिपूर्ण था अपनी सतान के प्रति उसका मोह मयता, स्नेह साकार लड़े दिमाई देने। कभी सोचता उसने इन बच्चों को जन्म ही क्यों दिया। किन्तु वह तो परिवार नियोजन के साधनों से अनभिज्ञ था अतः सब कर्मा वह उन्हें अपने पर बांध मानता तो कभी समाज पर, तो कभी देश पर। कभी छोटे घरदान समभता, तो कभी अभिगाव। उसने अनामाश की प्रति के लिये भिन्न २ उपाय सोचे परन्तु सरचना नहीं मिली। सट्टेबाजी की, भाग्य ने पोषा दिया, जग-तान किये उसके मन में भक्ति को महाबिनी प्रबल सहर्ष भर्त्ता के जेता, जयशो के निर्भर धर्मोप वेग से उसके ईष्ट देवता के कारणों पर रहने लगने किन्तु फिर भी दिमागी

मासमान पर छाये रहने वाले भगवान ने उस गरीब रामू की एक नहीं सुनी। शायद उसका भगवान भी पूंजीपति हो गया था। दिन दिमाग साग साप काम नहीं कर पा रहे थे। क्या करे, परेशान था।

रामू की बीबी जब-तब भ्रम की समस्या के उग्र रूप धारण करने पर किसी सम्पन्न पड़ोसी के यहां मजदूरी कर लेती, कभी पाटा पीस देती, तो कभी उनके यहां चौका-वर्तन कर आती कभी उधार ही लाकर काम चला लेती। कभी ऐसा भी भ्रमपर आ जाता कि जब अपने मकान में रहने वाले भाइयों को दिखाने के लिये चूल्हे में भाग मुनगा कर ही अपनी फकीरी हानन सुगाने की ओर अपनी भावक को बताने की कोशिश करती। रामू जब कभी कारखाने में लौटता, उसकी गोमती सदैव हंसते हुए उसका स्वागत करती, कभी कोई मांग पैग करने का विचार नहीं, सीजने का कोई प्रश्न नहीं, वह अपने पति की मजदूरियों से भली-भांति परिचित थी। वह भी सोचनी इस समाज में उनके परिवार का क्या भूय है ? समाज के लिये इसका परिवार अभिगाव है अथवा उसके जैसे अनेक निर्भर परिवारों के लिये समाज स्वयं ही एक अभिगाव बना हुआ है। समाज की रीति और प्रथाओं के नाम पर गरीबों का बलिदान हो सब घरदान तो वह मान नहीं सहता। गरिब की मुल, भेद और अमानद क्या ? अमानद के लिए संतान, संतान के लिए विवाह, विवाह के लिये समाज और समाज के लिये पैसा, पैसा कहां है, विवाह एक सामाजिक रोग की मनोवेजानिज औषधि है। किन्तु विवाह के लिये पैसा। पैस के लिये समाज। जिसके नाम पैसा नहीं उसको कोई सामाजिक स्थिति नहीं। उनके लिये समाज में कोई स्थान नहीं। जीवन की

• • • • •

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

1 2 3 4 5 6 7

जन के हस्तान को तीन मील तक ले जाने की मजदूरी सिर्फ तीन घाने ।

रामू ने उस पुकारने वाले व्यक्ति के मुख को देखा, जो बिजली के लम्बे के नीचे तक आ चुका था, यह तो उसका वही बारवाने वाला मैनेजर था । वह बिना कुछ बहे सुने एक भय की सी आशंका से अपना रिश्ता लेकर दौड़ पड़ा । मैनेजर साहब आवाज लगाते ही रह गये । सभी एक दूसरा रिश्ते-बाता आ गया । यह रिश्ता यूनिन का मन्त्री था, नाम था, मोहन । मोहन ने इस सबको आश्चर्य-चकित होकर देखा । उसने रामू को रोक्कर इसका कारण जानना चाहा । रामू ने मोहन को एक ओर ले जाकर अपनी राम-बहानी सुना दी ।

मोहन भी एक मध्यमवर्गीय माता पिता की मन्तान एवं उनकी समस्त आशा, अभिलाषामों का नेत्र बिन्दु था । बड़ा ही कठोर परिश्रमी युवक था । उसने बी. ए. पास किया और फिर अपने पिता के बंधों से कुछ बोझ भार हट्का करने हेतु नौकरी की तलाश की । बड़ी २ मनीषिया बोली, संकल्प किये । प्रार्थना पत्र देते २ थक गया किन्तु सारे दफ्तरों की लाक छानने के पश्चात् भी उसे बड़ी जगह न मिल सकी । वह विचार किया, करता वह इस विकास के युग में भी अविकसित एवं बैकार था । उसके पास यूनिवर्सिटी का प्रमाण पत्र तो था किन्तु इस युग में यही तो अपेष्ट नहीं, इसमें भी ऊपर चाहिये किसी बीमबाय का वरद हस्त, सिफारिश जो उसके पास भी नहीं । इसके अभाव में भूले मरी समाज चुप रहेगा, सरकार के बानो पर खूँ नहीं रेंगने की । हा, यदि भारत हत्या करने के प्रयास में विकल हुए तो सरकार का मोटा बानूत उसके बोलत करो का शूटार करने में देर नहीं करेगा । कितनी मुन्दर अवन्या है । मरा खाने और मरने का अधिकार नहीं, अधिकार बेवजह तड़पने का है, छटपटाने का है ।

कभी सोचता था । वह युवक से युवती होता, कभी सोचता किसी विद्यालय भवन में उसकी यदि वही सुमराल होती, कभी सोचता यदि उमका पिता एक नेता होता । इसी प्रकार मडको का चक्कर लगाने दिन, महीने और वर्ष निकल गये । उसके पिता परबोक सिधार गये, माता विधवा हो गई और वह स्वयं अनाथ । आखिर कुछ न कुछ तो करना ही था । अतः उसने अपने भावी कार्यक्रम पर विचार किया । और जैसे जैसे कई धंधे भ्रमनाने के बाद अन्त में उसने रिश्ता चनाना ही प्रारम्भ कर दिया । पढ़ा लिखा था ही, होशियार था । अतः रिश्ता यूनिन का मन्त्री बन गया ।

कुछ ही दिनों में रामू और मोहन अच्छे मित्र बन गये । मोहन रामू को अपने रिश्ते की सहाय्यो दिलवा देता और इसी प्रकार उसको अन्य सहाय्यो भी करता रहता । किन्तु अधिक परिश्रम करने में रामू और अधिक अस्वस्थ हो गया, वह पढ़ने ही खासी और उबर से पीड़ित था । कुछ दिनों में ही खासी के साथ थून भी आने लगा । पहिले तो उसने इस सबकी परवाह न की । वह परवाह भी क्या और कैसे करता । इतने पैने बहों में जो अपना उचित इनाज बरा सबता, बाहर जवबाबु परिवर्तन के हेतु जा सकता । दबापक उसकी दशा खराब हुई और अपनी नौकरी एवं मजदूरी दोनों में ही अवकाश लेना पड़ा । मोहन ने उसकी अपेष्ट मेरा सुधूपा भी की, औषधि भी दितारी किन्तु बहुत देर हो चुकी थी, उसे टी. बी. का अन्वित दौर बन रहा था । रामू ने अपनी पुत्री के विशाह की विधि आर्थिक कारणों से पहिले ही टाक दी थी । अब तो इन नवीन परिस्थितियों ने उसके बानो की भी इस सम्बन्ध में पुनर्विचार करने पर मजबूर कर दिया और उन्होंने एक दिन सम्बन्ध विच्छेद की मृशवा दे दी ।



फिर यह पहरा किस पर ? यह पहरा है हमारी नैति-  
कता पर, मुझे वे नौजवान दीख पड़े जो नीचे खड़े  
चुहन कर रहे थे, और वे लड़कियाँ जो अपने दुपट्टे  
को हटा और बार-बार ढँक कर अपने यौवन का  
उभार दिखा रही थी। यह पहरा था उन पर।  
वैनी विडम्बना है हमारी संस्कृति का पुनीत स्थान,  
जहाँ हमारे पूर्वज सारे दुःख भूल जाते थे जो  
शान्ति का केन्द्र था अहाँ इतना भ्रष्टाचार क्यों ?  
क्या हम इतने गिर चुके हैं ?

वह मंदिर में प्रवेश पा गई दूसरे द्वार से जो  
रिषियों के लिए था। मैं बिना दर्शन ही लौट पड़ा।  
बाहर लोग मेरी ओर देख रहे थे। किन्तु मेरी  
कल्पना थी, किसे फुरसत थी कि 'वह यह देखे कि  
मैं दिना दर्शन क्यों लौट रहा हूँ। दया है यह  
भारतीय परंपरा की व पुरुष प्रधान समाज की  
कि मैं किसी सहलिंग का दृष्टि बिन्दु न बना।  
मेरे जैसे और भी बहुत थे। हाँ, यदि मैं लड़की होता  
तो शक्य लोगों को निगाहें मुझ पर पड़ती।  
दोरी देर बाद वह दर्शन कर लौट रही थी।  
समर्पण था मेरा ध्यान उसकी ओर आकर्षित न  
होना किन्तु मैंने देखा कि वह सीढ़ी पर बैठे  
मिथारियों को प्रसाद बांट रही थी स्वयं उनके पास  
बाहर। सोच, जब मिलारी मांगता है तब भी  
प्रसाद नहीं देते किन्तु इनमें वही एक ऐसी थी।  
जो इन सबमें विचित्र थी।

सीढ़ी समाप्त हो गयी। मंदिर की पाँच सी  
सीढ़ी ओर मैं फिर नीचे था; उसके भाई ने प्रसाद  
मंगा किन्तु अब प्रसाद बहा था बोली 'न तुमने  
प्रसाद खाया न मैंने ... प्रसाद तो खत्म हो गया।'।  
विजना छोटा- उत्तर था। किन्तु बितनी सरलता  
से कहा सोचा उत्तर। वह चल दी और मैं देखता  
रहा, सोचता रहा। क्या अन्तर है इसमें और उनमें।  
क्या कारण है इस भेद का। अन्तर ने उत्तर दिया

केवल वातावरण का भ्रमर। इनके घर में जैसी  
बातें होती हैं, जैसा वातावरण इनके पड़ोस का  
है, जो बात मित्रों व सहजियों में होती है, वही  
तो सीखती हैं ये। इन्हीं बोझिल विचारों में पारों  
ओर दृष्टि उठाई। सारा वातावरण फिर ज्यों  
का व्यों था। उसके होने में या न होने से कोई  
अन्तर नहीं। केवल मैंने उसे देखा, बस .....

②

## पिजड़े का पंखी

● गेप पैतानीम का

रामू पर विपत्ति का दूसरा पहाड़ टूटा। वह  
क्या करे। उसकी हानत और भी गिर गई।  
उसके मरने के बाद उसकी गृहस्त्री का क्या  
बनेगा ? वह चाहता था, अपनी लड़की का  
हाथ मोहन के हाथों में सौंप दे। उसे  
मोहन पर भरोसा था, उसकी मृत्यु के बाद  
मोहन उसकी गृहस्त्री को भी संभाल लेगा। इस  
प्रकार लड़की देकर यदि ऐसा लड़का मिल सके तो  
वह शांति में मर सकेगा। किन्तु इतना कहने का  
साहस नहीं था। एक दिन जब उसकी दत्ता अत्यन्त  
ही गम्भीर हो गई, अकुलाहट, चकराहट, उसके मुख  
पर भव्य रही थी, मोहन भी बड़ा चौंकापि दे रहा  
था, रामू के बीबी बच्चे सभी बहा थे, रामू ने  
मोहन के बानों में अपने मन का बोझ उकेर दिया।  
मोहन भी न लही कर सका। रामू के मुँह पर एक  
पल के लिये अत्यधिक शांति और संतोष  
की आभा कभी और चिंतन हो गई।  
जीवन में पायी थी उस अमर्यवता, असाधित,  
लहरन, पर बदलिबल आधुनिक लहरन ने  
उसकी बिर इन्दुन बाधा का पूर्ण कर उसके  
सदैव २ के असाधित मन को बिर शांति के असाधित  
में मुला दिया था।

# जिन्दगी जीप है

भी जान

जिन्दगी जीप है ।

समझो, भरपूरी बार नही ।

बार बार जिन्दगी हुई होती ।

तो लगाना है मत,

मान लोने है हम जिन्दगी बार है,

बार नही । लेकिन, दुनियाँ की गरज

करी टाई, सीमेंटेड, कटी कटी है निरी

दरारों में, भार समार मारी,

मरुत व नाम दिया दुनियाँ व दुखानी हुई ।

बार बेसार दल—बीर ?

ला दल की उट है, रीप का खराब

उस एक निरव को बुझ भी हुआ है,

कहा निरव लगाना है उट दीर

मरुत है जिन्दगी । जिन्दगी जीप है ।

जिन्दगी की जीप की लड़ाई,

दुख लड़ाई लड़ लगाना है ।

जीप के लड़ाई बार,

है की दुखानी है जीप के लड़े बार ।

(दली वर लगे बार, दुखी जिन्दगी की हुई लगे बार)

करी कटी कल जिन्दगी लगे बार—

बार—लगे लगे बार—

दुख लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार लगे बार का जिन्दगी लगे बार,

बार पर पार मियो, हंसी बहार ।

मारी पुहार मियो, जीप टकरापो म

जीप टकरापो म म म म म म ।

एक मा दोषा है दोषा पुट म म म म ।

बेने मुमाजिना मारी है बुझ मोमम म

लेकिन सी० इन्सू० सी० ट्राजि बुझ

घोर कलें पार का बुझ भाव रगो ।

रग जापो, मार कटी पार को मियो मियो

लगे ममम म म ।

जीप के इ रिम को उडा हा मेरे दो ।

मार रगो मरुत भी रीप है ।

मम, समरीहा, बीर, घोर कटी पुहार को

मरुत का रीप है ।

घोर हा मार मार,

जीप समरीहा मे बारी की । मार बार,

जीप समरीहा है, जिन्दगी पर भी रिम,

मोमम मम हा बुझ मम म म का ।

उपम है लेकिन मममम मम

मार म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

म म म म म म म म म म म म म म

# अर्वाचीन-साहित्य



● एक समीक्षा

“तंत्री नाद कवित्त रम, मरम राग, रति-रंग ।

अनपुढे पुढे, तिगे, जे पुढे मच अंग ”

- “ बिगरो ”

|                                 |      |
|---------------------------------|------|
| बन्दा-साहित्य                   | (१)  |
| श्री देवदास उपाध्याय            |      |
| मारतो की धारतो (कविता)          | (४)  |
| श्री रामदास 'दिनेश'             |      |
| बन्दा-साहित्य                   | (५)  |
| श्री भावचन्द गोस्वामी 'अनन'     |      |
| लखाही-साहित्य                   | (१६) |
| श्री रामचरण 'महेन्द्र'          |      |
| घासो तो हूवेतो री (कविता)       | (१२) |
| श्री बालागल मिश्र साहायक        |      |
| सीरि-साहित्य                    | (१३) |
| श्री रामदास 'अनन'               |      |
| समोसा-साहित्य                   | (१४) |
| श्री अरुण विजयेश्वर             |      |
| दुखरे बिरे रे दुखे दुखे (कविता) | (१५) |
| श्री अरुण 'अनन'                 |      |
| सिद्धांत                        | (२२) |
| श्री अरुण 'अनन'                 |      |
| देवदास (कविता)                  | (१६) |
| श्री देवदास 'दिनेश'             |      |
| साहित्य-संग्रह                  | (१७) |
| श्री अरुण 'अनन'                 |      |
| सुख तो हूवे                     | ११६  |
| श्री अरुण 'अनन'                 |      |
| संग्रह                          | (१८) |
| श्री अरुण 'अनन'                 |      |

## कथा साहित्य

डा० देवराज उपाध्याय, 'Shri 25', हिन्दी विभाग, मडारवा न शेष, २०२२

**सा**हित्य शब्द में महत्त्व प्रयत्न महितम् भाव बाने पर्य का भाव प्रदय वर्तमान है और इसके द्वारा जगत के जीवों को रागात्मक मूत्र मे बांधने मे महायता भिन्नता भी है, पर वास्तव मे सृजन व्यक्ति की स्वतंत्रता की घोषणा है। व्यक्ति सृजन मे प्रवृत्त ही हमलिये होना है कि कहो न बही उसमे सटक है, वह जीवन के प्रवाह मे अपनी संगति ढूँढा नहीं पाता, भतः वह प्रवाह को ही अपनी ओर मोड़ना चाहता है, उस पर अपनी धार बँडाना चाहता है। वास्तव मे देखा जाय तो मनुष्य की प्रत्येक क्रिया के मूल मे यही प्रवृत्ति सक्रिय रहती है। उसका हँसना, रोना, खाना, पीना, उठना, बैठना सब इसी आत्म-स्थापन के लोका है। बबीर ने जब कहा कि जो करूँ वही पूरा-नो पायइ इसी स्वर मे स्वर मिला कर बोले थे।

परन्तु यह आत्म-प्रवाधान या आत्माभिव्यक्ति को बिना दैनिक प्रवाह पर बहने हुए मानव के द्वारा, स्वयन्-प्रवर्तन जैसी जैविक तथा महज्जात क्रियाओं के द्वारा, बाहरी घाघानों न उत्पन्न Reflexes के द्वारा उतने सम्पक् रूप मे सम्पन्न नहीं होती जितनी बला के द्वारा, बला के द्वारा भी नहीं होती जितनी साहित्य के द्वारा, साहित्य के द्वारा भी नहीं होती, जितनी साहित्य के एक धंग उपयोग के द्वारा। धनकार-साहित्यो ने सार धनकार की पंथा के लिए 'वस्तुनः उत्तरोत्तरमुत्तर्पः कथा' प्रतीति पर वर्षों वस्तु के उत्तरोत्तर उत्तर्प का स्मरण हो रहा सार धनकार होता है। उदाहरण—

“राज्ये सारं वसुधा वसुधाधामपि पुरं पुरे मोक्षम्।  
मोक्षे तन्प तन्ने वराहानानङ्गम्बन्धम् ॥”  
प्रवां राज्य मे सार तर पृथ्वी है, पृथ्वी मे नगर, नगर मे भी महन, महन मे भी पर्वग और पर्वग मे भी एक प्रति सर्वस्व मुदारी। उसी तरह कहा जा सकता है कि जगत मे सार पदार्थ जीवन, जीवन मे अभिव्यक्ति, अभिव्यक्ति मे आत्माभिव्यक्ति, आत्माभिव्यक्ति मे भी कला-साहित्य, साहित्य मे भी उपयोग।

यहा पर उपयोग के संदर्भ मे सार धनकार का रूपक बाधा गया। इसका उद्देश्य इतना ही कहना है कि उपयोग प्राज कहानी मात्र नहीं रह गया है, कुछ मनोरंजक घटनाओं का तात्त्व्य उपस्थित कर देना ही नहीं रह गया परन्तु वह मंगल के व्यक्तित्व, उसकी आन्तरिक बेदना, हृदय, संघन तथा आन्दोलन का सर्वश्रेष्ठ मापन है। बहुत दिनों तक कला के क्षेत्र मे अनुकृति art as an imitation बाने मिडाल की मूर्ती खोदनी रही, लोग कला मे बाध वस्तु की प्रधानता मानने रहे, किसी दिव्य तथा विज्ञान प्राकृतिक दृश्य-जगत् के मफल चित्रण मे ही कला का मापन्य माना जाता रहा। परन्तु प्राज कला मे अभिव्यक्ति की प्रधानता स्वीकृत हो चुकी है। कला अनुकृति नहीं, अभिव्यक्ति है, expression है। इसमे बाध वस्तु प्रधान नहीं, प्रधानता है अभिव्यक्ति की। यदि यह कोई प्रश्न बरे कि किसकी अभिव्यक्ति में स्पष्ट उभर है कवि के हृदय्य भावों की, प्रवां यदि के आत्म-स्वरूप की, जो किसी भी चीज की धारने आत्म के

कम से कम दो सन्तानों है। इसीनिष्ठे कहा गया है 'साहित्यकार साहित्य में बसा है।' यदि यह बात ठीक है कि साहित्यकार साहित्य में बसा है तो इसका सबसे बड़ा प्रमाण क्या साहित्य है। या व्यक्ति की विचार का प्रकाश निरूपण है। परन्तु यदि मैं कहूँ "मैं मनुष्यार्थ में उत्पन्न ही विचित्र" तो मानकर जगत् का भाव न था जो हम मानते हैं। पर इस मान में हम अपने ज्ञान का सम्पूर्ण दा गह। न जाने यदि अपने अन्तर्गत में ही कुछ दिग्ग साधकभिर काट काट गया हो जिससे यह implication का दावा इस दावे को भी न हो।

1. 1990年12月，中共中央、国务院作出《关于实行“以公有制为主体、多种所有制经济共同发展”的方针》，明确非公有制经济是我国社会主义市场经济的重要组成部分。

本報自創刊以來，承蒙各界人士之厚愛，不勝感荷。茲為擴大宣傳，特在  
 本市各主要路口，設立分報處，以便讀者隨時隨地取閱。此舉旨在服務  
 大眾，提高新聞傳播效率。凡欲訂閱者，請逕向各分報處洽談。本報將  
 繼續努力，為讀者提供更多優質新聞內容。

[illegible]

पर हम राजस्थान के प्राधुनिक कथा साहित्य को देखें।

इधर हम पन्द्रह वर्षों के अन्दर राजस्थान में जो कथाकार हमारे सामने आये हैं उनमें दो तरह के उल्लेखनीय हैं—परिमाण की दृष्टि में तथा गुण की दृष्टि में। वे हैं डा० रागेय राघव तथा श्री यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र। इधर के नवोदित कथाकारों में चन्द्र ने अपूर्व लगन, साहस, पर्यवसाय तथा प्रतिभा का परिचय दिया है तथा हर तरह के प्रयोग में काम लिया है। उदाहरण के लिये एक उपन्यास में उन्होंने ग्राम्य-कथानक शैली में काम लिया है। दूसरे उपन्यास को डायरोनुमा शैली में लिखा गया है। सर्व समर्थ शैली की प्रधानता तो चन्द्र के सारे कथा-साहित्य में आज भी है। चन्द्रजी में भी उसकी बहुतायत हो और वे ग्राम्य-लेखक हो तो इसमें आश्चर्य ही क्या? राजस्थान के निवासी होने के कारण यहां के लोगों के रहन-सहन के ढंग में, विचार-मन्यता में तथा भावनाओं में इनका प्रगाढ़ परिचय है। विनोदः पल युग के राजा-महाराजाओं के विलास तथा वैभवपूर्ण जीवन को उन्होंने बहुत समीप में देखा है और उन्हें अपनी रचनाओं का आधार बनाया है।

यही इस लेखक का गुण है, साथ ही दोष भी है। मैं तो बहूँ दोष ही है गुण नहीं। मेरा सदा से ही यह विश्वास रहा है कि लेखक को वर्ण्य-विषय में अधिक अपने ऊपर विद्वान बनना चाहिये। यदि लेखक ऐसे विषय को लिखता है जो बहुत परिचित हैं, जिसमें जनता का राग-विराग तथा हसा है तो चापद उसकी सृजन क्षमता को कुतर-काम करने का अवसर नहीं मिलता। एक ओर तो लेखक की आन्तरिक शक्ति को, उसका आत्मत्व के विषय-वस्तुत्व में बाधा पड़ती है तो

दूसरी ओर पाठक में रसप्राप्ति की शक्ति घटकर होती है। दोनों में सस्ती भावुकता से मोह उठान होता है।

डा० रागेय राघव में इस प्रवृत्ति में सर्वथा मुक्ति ही हो गई हो यह बात नहीं। परन्तु इतना अवश्य है कि उनके कथा-साहित्य में विकास के तत्व मौजूद हैं। वे दुनिया को आखें खोल कर देखना चाहते हैं। यों तो आखें मूंद कर देखने में काम दिखनाई नहीं पड़ता, बल्कि ज्यादा ही दीन पड़ता है। परन्तु आखें मूंद कर देखा जाय या खोल कर इसमें देखने को क्रिया की ही प्रधानता है। प्रश्न यह है कि लेखक ने क्या तक देखा है, कहा तक subject ने object को ग्राम्यमात्र किया है। डा० रागेय राघव की इधर की पुस्तकों में 'कब तक पुकारूँ' उल्लेखनीय है। इसमें नट-नटिनियों के जीवन को आधार के रूप में ग्रहण किया गया है और उन पर महानुभूति की दृष्टि दी गई है। आज तक के उपेक्षित व्यक्ति भी साहित्य में स्थान पाने लगे हैं। यह प्रमाण हिन्दी कथा-साहित्य में बीसवीं सदी के तृतीय दशक में स्पष्टतया प्रारम्भ हो गया है। उस प्रयोग में यह उपन्यास एक नया कदम है। क्योंकि यहां पर एक अछूते विषय को लिखा गया है अतः लेखक की आत्मोपमा, उसके आत्मत्व का मात्रा भी उभरने लगी है। इसीलिये पुस्तक का महत्त्व मेरी दृष्टि में अधिक है।

श्री विजयदास देवा की कहानियों का मैं प्रशंसक पाठक हूँ। इनकी कहानियों में गहराई का भाव है, ऐसी पुष्टता है मानो समाज की विडम्बनाओं को जता कर लार कर देंगी। वे अपनी आत्मानुभूति को आत्मानुभूति तक भी जान देंगी बड़ी दिव्य कहानियों की सृष्टि कर सकती हैं। आत्मत्व का बनावट रूप में बड़ी बड़ी देव ?



# कहानी साहित्य

श्री भालचन्द्र गोस्वामी प्रवर, राजस्थान विद्यालय सभा, जयपुर

कहानी का नाम घाने ही मुझमें एक प्रजीव मनीषावन भर जाता है। ऐसा लगता है मानों दूर किसी विजन प्रदेश में मोटनी हुई गापो के गले में बंधी घटियों के स्वर रिण-रिणाने हुए वायुमंडल पर तैरते चले जा रहे हैं। उस कुटिया के द्वार तक कहा कोई एक हल्के दीपक की टिमटिमाहट में घाने कभी न घाने वाले प्रेमी की प्रतीक्षा कर रहा है, उसे मान्य है कि वह नहीं घाएगा। फिर भी उसके प्रगुन मन का कोई कोना रह-रह कर कराह उठा है और हम प्रसम्भ कल्पना में ही सुख प्राप्त करता है कि वायद घा जाए। हम दर्द का प्रतिनिधित्व करने वाली पात्राएं हैं, सोनानी जो घाने बार बच्चों को छोड़ कर उस इतानवी शालेय के साथ भाग गई, वह मित्रविया जिसके कारण घाने उसका यगम्बी पनि जेन के मीकचों में है, हृद्य कलभ घामा की वह ईसरी जिसकी यशोती ही उसका अभिगाप हो गई थी, और ऐसे किने ही प्रकित, प्रगण्य व्यक्तित्व जो काल के साथ में मया जाने हैं और रह जाती हैं उनकी रहानी। किन्तु हम दर्द का घमनी प्रतिनिधित्व करती हैं एक मधुरा बाध्य विधा जिसे हम कहानी कहते हैं। कहानी जिसे हम बार-बार शब्दों के यशोती में बांध कर रखना चाहते हैं, किन्तु जिसकी इतना ही मर्यादित नहीं किया जा सकता, कहानी जिसे कहानी दर्शन के बिलने ही लेखक तत्त्व, प्रकार दर्द के कोरे में परिमाणित करने की कोशिश करने हैं, जो उनके मर्म को दर्शित नहीं कर सकते, कहानी जो केवल कहानी जाने के लिए है। हम

वेदनामयी की अभिव्यक्ति प्रसाद की कल्पना में की जिसके मर जाने पर किसी ने भी उसका नाम लेने की आवश्यकता नहीं समझी। गुनेरी की स्नेह-नरन होरां ने की। जिसने कभी कुछ कहा था किन्तु बाद में वह भी चुप हो गई। प्रेमचन्द की घानरी ने की जो घाज भी यही मोक्षती रहती होगी कि जाने कब आकाल्म उम पर वरम पड़े और उसकी करो-कराई बडप्पन की घोषणा धून में मिन जाये। गरबन्द की दीदियां, जेनेन्द्र की मुनीतापो, भरभूति की माधवियों और शेक्सपियर की प्राकिनयापो का प्रनवरत क्रम जो घाना है और बना जाता है, और दीपदो के कठिन वत और समय के ऊपर जब भागवत की धून जग जाती है और उसके एक गूठ पर रखी हुई बासुरी के रत्न जब भर जाने हैं और उसके स्वर निकलने बन्द हो जाने हैं। हमारा की मर्याद कहानियों में १०० कहानियों में में कम में कम ६० कहानियों में इसी प्रकार का दर्द मिलेगा, पीडा मिलेगी जो माननी नहीं है, मधुर है जो, गुणगुनानी है, जो मर्मरानी है और कहानी है, जो मेरे स्वामियों, मुझे एक कोने में हो मरी डान देता किन्तु निर्वासित मन करता। कोई मोन-विड़ी जब बड़े लडक घाने नए बच्चे को घामने की गरमाई में छोड़ कर रोटी-पानी के लिए निकल जाती है, उस समय उसके छोटे बच्चे के मन में क्षण भर के लिए घानती मा में किन्तु घाने का दर्द होता है, वही दर्द, हमारी कहानी का घानन दर्द है। घामी मगने में पूर्व अभिगुन की घानिरी तमना पर जब अधिहार का नाता मया दिना

माला है और वह जिन् हूँ तुम में बसता हम  
 मोर देती है हम तुम का नाम ही बसती है ।

घोर पर हम बगवतों की शक्ति से मैं निराशा  
हूँ पर मुझे ज्ञान-सागर शक्ति से हम भिक्षु की  
शक्ति का सामना करना पड़ता है, जिसे घाम  
घोर पर कुछ नहीं निराशा घोर शक्ति घाम है वे  
भी का बग देते हैं। सभी दुर्द की शक्ति से परिचित  
होते हुए भी हमारे बगवतों नेवक उनकी प्रभावित  
नहीं हो पाते का ज्ञान मात्र मात्र नहीं कर  
सकते। बगवतों की का शक्ति का ऐसी बगवत,  
बग-बगवतों की शक्ति है जो प्रभावित बगवत घोर  
शक्ति का शक्ति है घोर जिसे कोई भी शक्ति  
के शक्ति का शक्ति बगवत शक्ति को प्रभावित बगवतों  
का शक्ति है, शक्ति में भी शक्ति हूँ बगवतों को मुझे  
भी ज्ञान शक्ति, जो बगवतों है, शक्ति में भी शक्ति  
शक्ति का शक्ति है मुझे शक्ति का घोर शक्ति का शक्ति  
का शक्ति का शक्ति का शक्ति मुझे शक्ति का शक्ति  
का शक्ति का शक्ति का शक्ति का शक्ति का शक्ति का शक्ति  
का शक्ति का शक्ति का शक्ति का शक्ति का शक्ति का शक्ति

मुखागा, गुल्मगा, देरीन, घोर बीजियों ऐसी बी  
बटाविका जो पत्नी बहो जाती है।

घन्टी बजाती बह गयी है जिसे पक कर घात  
 सिमस से भर जाये जैसे कि कुंठ से बहा है,  
 या जिसे पक कर हम बाध बह गये । घन्टी की  
 मर्त्य या घन्टीघर का मेरा गरी है । घन्टी बजाती  
 को पक कर कुल बन्धु-भ्राता का घात मर्त्य होना  
 घोर वर होता बहाती के घर्ष को गनी समझना को  
 पावन को घन्टी बजाती मुता कर पूरना है, बा  
 बनी गयी ? घन्टी बजाती को पक के बाध बनी  
 बह रहा जाता है जो एक बहाती घात, एक मर्त्य  
 लगाव, एक मीनर बहाती, एक मर्त्य मुन, जैसे  
 किसी से निमोहास कर दिया हो ।

1. 在 1950 年 10 月 1 日 以前 出生 的 公民 均 有 選舉 權 和 罷 選 權  
 2. 凡 在 1950 年 10 月 1 日 以前 出生 的 公民 均 有 選舉 權 和 罷 選 權  
 3. 凡 在 1950 年 10 月 1 日 以前 出生 的 公民 均 有 選舉 權 和 罷 選 權  
 4. 凡 在 1950 年 10 月 1 日 以前 出生 的 公民 均 有 選舉 權 和 罷 選 權  
 5. 凡 在 1950 年 10 月 1 日 以前 出生 的 公民 均 有 選舉 權 和 罷 選 權

मात्र भी हिन्दी के प्रत्येक पाठक के मन पर प्रत्याहृत भाव से विद्यमान है और मद्रा मद्रा के लिए रहेगी। यह सही है कि उस मगध की परिस्थितियों में घमर होना, भाज की अवस्था अधिक सरल या क्योंकि उन दिनों निरस्ते पादों देशे वाली शान्त थी जहाँ ऐरुड भी प्रभावित होता है। किन्तु उन्ही दिनों या कुछ वर्षों बाद के लेखकों में, जिनमें भजमेर के जगदीशप्रसाद दीपक, बीकानेर के लम्बुदयान सक्सेना और मुरलीधर चाम, उदयपुर के जगदीशनाथ नागर और निरजन नाथ भावार्थ और जोषपुर के जयनारायण व्यास और इसी प्रकार भजमेर के विष्णु सम्बन्धान जोशी हैं, जिनमें लेखक घमर हुए। ये सभी महानय भाज की हमारे बीच में हैं और इनमें से कुछ भाज भी कुछ न कुछ लिख ही लेते हैं। इनमें से नागरजी की बरीय तीन दर्जन कहानियाँ बताई जाती हैं जिनमें से बहुत सी सरस्वती में निकली हैं। लम्बुदयान सक्सेना के मनाइयाँ, चित्रपट, बन्दनवार, दुर्गराज के पून, दिगन्त-रेखा आदि कहानी संग्रह और विष्णु सम्बन्धान जोशी का भी 'बह' नाम से एक कहानी संग्रह निकला है।

यदि हमारी जी के बाद राजस्थान के अंश में किसी ने हिन्दी को गौरवमय विधा है तो वह है डॉ० योगे रायव और यह भी कोई विमुक्त मयोज की बात नहीं कि इनकी मातृभूमि या पितृभूमि (?) की राजस्थान के बाहर है यद्यपि पुरखों के जन्म स्थान की बड़ी लोप महत्त्व नहीं देने। इस युवक काका के मिलने ही कहानी संग्रह निकल चुके हैं, जिनमें धूपरी मूल, प्राचीन यूनानी कहानियाँ, गरी, पंच परमेश्वर, प्रवामी, मृगतृप्णा, मेरी निरहानिया, प्राचीन वाङ्मय कहानियाँ आदि उन बाप के नाम तो सुने भी मातृभूमि हैं। इनकी एक नाम कहानी ने कुछ ही वर्ष हुए अखि

भारतीय श्रुति प्राप्त की है। डॉ० रांसेन रायव मुख्य रूप से एन्थ्रोपोलोजिस्ट है यद्यपि इन्हें प्रगतिवादी अधिक माना जाता है।

प्रकाशित संग्रहों की प्राये चर्चा की जाय तो अन्य लेखकों में हमें यादवेंद्र शर्मा चन्द्र, मुमेरमिह दह्या, वंशीनाथ यादव, मरनाममिह चम्पा आदि आदि का नाम लेना होगा। बीकानेर वाली चन्द्र का जिल्ह हम लोग प्रेमपूर्वक चन्दर कहते हैं, नेवदान नामक एक कहानी संग्रह निकल ही चुका है, और बरफ की समाधि नामक एक कहानी संग्रह के बारे में राजस्थान के एक प्रमुख मासिक ने जुलाई १९५७ में प्रकाशित हो चुकने की घोषणा की थी किन्तु साढ़े तीन साल बाद दिसम्बर १९६० की सरिता के अनुसार वह अब पुनः प्रकाशित हो गया है।

नेवदान में राजस्थान के लोकगीतों और लोक कथाओं पर आधारित कुछ कहानियाँ हैं मगः कथानक के गीत के रूप में चन्दर की अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं पड़ी है, हाँ, नेवदान कहानी में लेखक इतिहास व एक घटना घट की प्रकाश में लाया है जिसमें राणा कुम्भा के मरदार राज नरवद ने रवा की पाने नेव दिग्ग थे। परिमाण और अवक परिश्रम चन्दर की साक्षिण साधना की विशेषता है, जो कम लेखकों में देखने को मिलती है, किन्तु उन पर वास्तविक वातावरण के विवरणों को बिना जावे के दान कल्पना के आधार पर चित्रण करने का जो आग्रह लगाया जाता है वह नहीं है। और यह भी सही है कि परिमाण और गुण बहुत कम लेखकों में एक नाम देखने को मिलते हैं। किन्तु यह भी भूट नहीं है कि दिगन्त बर चमक है जो रण्ड में पैदा होती ही है, जेमा कि चन्दर की नवीनतम प्रकाशित कहानी 'मरना नाम गई' में देखने को मिलती है। ये दर्द करने का



किन्तु पन-गतिनामो मे भरपूर निवनी है ऐसे लेखक मोमायका राजस्थान मे दो दर्जन मे अधिक है। इनमे मुख्य रूप मे उल्लेखनीय है जयसिंह एम राठोड, कृष्ण बल्लभ शर्मा, जगदीश माथुर कमन, भार्वाय मर्दे, गंगाधर शुक्ल आदि। राजस्थान के कहानीकारो मे मे सभी कथाकार भागे को पंक्ति मे बैठते हैं। जयसिंह एम. राठोड अपनी हान्य रस की कहानियों के कारण इनके बदनाम हैं कि इनकी गम्भीर कहानियों को लोग भुला देते हैं। समय है कि इनका संश्लेख बही से निकले। गंगाधर शुक्ल को कहानियों पर एक धीरे रेडियो टेकनिक का प्रभाव है इसी धीरे धीरे हेनरी की धाकस्मिक धीरे धरप्रदानित भल बावी पद्धति का जो आजकल इतना प्रभावोत्पादक नहीं रहा है। जगदीश माथुर कमन के अन्दर एक भावुक हृदय है और उस भावुकता का स्वाद पाठको को चखाने को ये आनुर रहते हैं। पाठक को यह बहम होने लगता है कि इनकी कहानियों का किम स्थल मे इनके व्यक्तित्व जीवन को पुनर्जीवित स्नेह संबन्धता मे भिन्न किया जाय। उन्होंने राजस्थान की बात परम्परा को सवीन रूप मे प्रस्तुत किया है और इसी चीनी मे निर्वा गई 'पर भ्रमता पर कूबा' इनकी अच्छी रचना मानी गयी है। भार्वाय मर्दे मुख्य रूप मे एक कानन शरी लघु कथाओं के पंडित हैं और बोड़े ही मे कनी वनाम धीरे अधिकार हीन भार्य बाणी मे लीन दोर ज्ञान की बहुत सी बातें कह जाते हैं। उनकी रई पुनर्जीवित रही हैं किन्तु लघु कथाओं व भल रूप का एक संश्लेख निवने तो स्वागत है। धारा एक उर्वुद्ध लेखक हैं और अपनी पुस्तकों और प्रत्येक को भिन्न-भिन्न कथानकों के लिए कथित वा स्वायं मुख्य बनाता चाहते हैं। उनकी रचनाओं मे एक बड़ी उपहासा भा खोया गया है जो स्वयं धिक्कर न रह कर दूसरो का

अपने मे धिक्कर रखने का घावही है। कई स्थानों पर पाठको मे घावों की कमी के कारण ये घावप्रवृत्ता मे अधिक ग्युन जाने है जब कि जगही स्थानों पर ये स्वयं बन्द रहता चाहते है। घावप्रवृत्ता इस बात की है कि ये सहजता के कुछ अधिक निकट घातें। इनकी रचना शैली मे गंगाधर शुक्ल की ही तरह कुतूहल को घावप्रवृत्ता मे अधिक महत्व दिया जाता है। वैसे इनका गिन्य तो गृहणीय है।

राजस्थान के अन्य कहानीकारो मे पुराने मेवे के देवतारायण भावोरा, विजयदान देवा, राजेन्द्र सिंह मोहनजी, मोहनराज त्रिनाथ, श्री गोपाल भार्वाय, गणपतिलाल पुरोहित आदि हैं। नई पीढ़ी के बहुत मे लेखक अपनी छाप तेजी मे राजस्थान के साहित्यिक जीवन पर स्थापित करते जा रहे हैं और उन सब की चर्चा करना न सम्भव है न आवश्यक। किन्तु राम चरण महेन्द्र, रामजुमार मोक्षा, मनोहर वर्मा, प्रकाशचन्द्र पाटनी, रणजीत, दुर्गमन्दिर तायन, परमेश्वर भूमिया परेस, मुधीन्द्र मेमास्त, भगवानदन गोस्वामी, मुधी विमल वेद, जगदीश बनक, डा० राजजुमारी कौन, प्रेम बहादुर सक्सेना, प्रकाश जैन, मनमोहिनी, गंगा प्रसाद माथुर, हिमकर नेगी, रामनिवास नाथ, ज्ञान भारिल्ल, भंगन सक्सेना, बालि वर्मा, शास्त्री बाष्पाय, राजानन्द, एम. खात, लक्ष्मण 'मोमिच' आदि प्रोधाइन ना कहानीकारों के नाम प्रस्तुत दिये जा सकते हैं।

राजस्थान के कुछ अन्य कहानीकार जैसे मन्थ, परदेसी, बन्धैयाताव मोमा आदि राजस्थान के लिए परदेसी हो गये हैं, प्रत्यक्ष इनका कहानीय उन्मुख्य बोटि का है।

# एकांकी साहित्य

डा० रामचरण मल्होत्रा एम. ए., पी. एच. डी., गेजेटिंग ऑफिस, लखनऊ

**रा**जस्थान का एकदली-साहित्य भासा की दृष्टि में दो भासों में विभक्त किया जा सकता है। १-यह एकदली साहित्य जो राजस्थान के नाट्यकारों ने राजस्थानी भासा में लिखा है। इस वर्ग में सर्वे भी पूर्ववर्ण्य पारोत, प्रो० गोविन्द मान माधुर, गोलाबन्ध प्रमथ, देवदास दवार्, नारायण दल भीमारी साहि नाट्यकार रहे जा सकते हैं। इस वर्ग में राजस्थान भासा की भासा सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और सामान्य समस्याओं को चित्रित किया है। इनके साहित्य में राजस्थान की वर्तमान स्थिति, एकदली भासा समस्याएँ, उनके भासा के भासा और गुणों की चेतना स्पष्ट हुई है। साहित्यिक राजस्थानी जन-संस्कृत तथा समाज की दृष्टि से साहित्यिक भी है। राजस्थानी भासा में लिखने के कारण एक ही लिपि-बद्ध की दृष्टि से राजस्थान की चेतना को सुनिश्चित करता है। जीना राजस्थान भासा तथा साहित्यिक राजस्थान इस वर्ग में सम्मिलित है।

दूसरा वर्ग राजस्थान का एकदली साहित्य है जो राजस्थान के एक ही लिपि-बद्ध भासा में लिखा है। इस वर्ग में लिखने के कारण एक ही लिपि-बद्ध की दृष्टि से राजस्थान की चेतना को सुनिश्चित करता है। जीना राजस्थान भासा तथा साहित्यिक राजस्थान इस वर्ग में सम्मिलित है।

राजोर, प्रेमचन्द विजय बर्मा, नरेश कुमार भासा-भा, कल्याणदास शर्मा, मनोहर प्रभाकर, गोविन्द गैर, और डा० मरुताम मिश्र शर्मा 'साहित्य' साहित्य नाट्यकार विशेष उद्योगीय है। कुछ नाट्यकार साहित्यिक दृष्टि से राजस्थान के लिपि-बद्ध वर्ग में लिखने एकदली साहित्यों को रचना कर रहे हैं और लिपि-बद्ध भासा भी लिख रहे हैं। लिपि-बद्ध साहित्यकारों में सर्वे भी दल, साहित्य, गोलाबन्ध माधुर, हासिल लीर, मंगरीर भासा, गुण, हेमन्त, भीमारी भासा, गुला, और गोलाबन्ध भासा कोशा दे रहे हैं। जीना भासा के बीच में भी भासा प्रभाकर, गुण और मंगरीर भासा लिखने का कार्य सम्पन्न है। इनके साहित्य भासा को राजस्थानी भासा एकदली भासा के भासा समझकर लिखने का प्रयत्न कर रहे हैं। इस वर्ग में राजस्थान भासा के साहित्यिक भासा की समस्याओं को सुनिश्चित करने और देश को समझ कर में देखा है। इनके देश भासा और साहित्यिक लिपि है। कुछ नाट्यकारों की लिपि-बद्ध की भी एक लिपि लिख रहे हैं। इस वर्ग में लिखने के कारण एक ही लिपि-बद्ध की दृष्टि से राजस्थान की चेतना को सुनिश्चित करता है। जीना राजस्थान भासा तथा साहित्यिक राजस्थान इस वर्ग में सम्मिलित है।

लिपि-बद्ध भासा की दृष्टि से राजस्थान भासा के भासा समझकर लिखने का प्रयत्न कर रहे हैं। इस वर्ग में लिखने के कारण एक ही लिपि-बद्ध की दृष्टि से राजस्थान की चेतना को सुनिश्चित करता है। जीना राजस्थान भासा तथा साहित्यिक राजस्थान इस वर्ग में सम्मिलित है।

विशेष प्रिय रहे हैं। यहां संक्षेप में हम उनका उल्लेख-  
मात्र कर रहे हैं।

सामाजिक क्रांति, आर्थिक, धार्मिक के क्षेत्र में सर्वप्रथम सम्मूहमान सक्सेना तथा गोविन्दनान माधुर को प्रतिनिधि एकाधिकार माना जा सकता है। प्रो० गोविन्दनान माधुर ने विषय तथा भाषा दोनों ही राजस्थानी चुने हैं। उनके साहित्य में राजस्थान अपने स्पर्धार्थ रूप में बसा हुआ है। राजस्थान के जन-जीवन, मारवाड़ी समाज की समस्याएं, हठि-वादिता, शक्ति-जीर्ण-शीर्ण परम्पराएं, राजस्थानी वाद्यों का जीवन, गांव बावों के साथ प्रताचारपूर्ण व्यवहार, निरर्थक शोक, शराबखोरी, गोपण इत्यादि नितान्त वास्तविक मूल्यता में प्रकट किए हैं। जन जीवन में प्राने वाली प्रवृत्तियों की सच्ची झलती दी है। उनके "हरिजन" नाटक में ग्रामीणों की हठिवादिता है, तो "दानविधवा" में नगर निवासियों और जानीय पंचायतों के सड़े-गले न्याय का स्वरूप उल्लिखित किया गया है। दोनों हास्य और धर्मपूर्ण हैं। इनके द्वारा हम राजस्थान की दुर्बलताएं और विसमताएं स्पष्ट देख सकते हैं। श्री सम्मूहमान सक्सेना ने सबसे अधिक सामाजिक एकाकी निवे हैं। इनके "विजया और वाष्णी" के साथ एकाकियों में समाज के ऐसे चित्र पर बोलवाइ व्यक्तियों का व्यंग्यारमक चित्रण है, जो हम समय और समुद्रत समाज में सब की आंखों में बुरा राखर उज्ज और मान्य ग्यान पाये हुए हैं। पर जो वस्तुतः समाज के लिए अभिशाप है।

धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में पुराने प्रादुर्भाव की दार्शनिक संस्कृति का चित्रण पर्याप्त रूप में हो पाया है। इस क्षेत्र में सक्सेना जी ने प्रचुरता में लिखा है। उनके १-६ महत् भाग की पौराणिक और पुरातन संस्कृति के विस्तृत चित्र हैं।

धार्मिक क्षेत्र में श्री मोक्षरत्न दित्त

की मेधाएं निरंतरमरणीय रहेगी। उन्होंने इतिहास को जीने जागने रूप में प्रस्तुत किया है। यत्र तत्र प्राधुनिक राजनैतिक विचार धाराओं और भाज की समस्याओं का भी समावेश किया गया है। ऐतिहासिक तथ्यों की पूर्णरूप में रक्षा करते हुए लेखक ने भारतीय संस्कृति को अपने सब में आकर्षक रूप में रखा है। प्रो० रामप्रसाद त्रिपाठी ने अपने एकाकियों के विषय राजस्थान के इतिहास के लिए हैं और ऐसे चरित्रों को उभारा है जिन पर अभी तक किसी एकाकीकार ने कुछ नहीं लिखा है। श्री नारायण दत्त श्रीमानी ने राजस्थानी भाषाओं कानीदाम, भूमन, प्रयोग इत्यादि एकाकी लिखे हैं जो प्रतीत के उज्ज्वल क्षणों की भंकार है, और साथ ही हम समाज के कार्य कलाओं की जीति जागती तमबोरों भी हैं।

राजनैतिक क्षेत्र में कुछ कम कार्य हुआ है। इसमें सक्सेना जी का कार्य उल्लेखनीय है। श्रीमानी जी के दो एकाकी "हांड" और "धरती का देवता" भी उल्लेखनीय हैं। "धरती के देवता" उन मिनिस्ट्रो पर छीटा कानी है, जो बोट सेने समय जनता में बढ़े-बढ़े वापदे करते हैं, पर ठीस मेवा कुछ भी नहीं करते। इस एकाकी में स्वामी पत्थर हृदय नेताओं पर व्यंग चित्र बीचकर उनकी दुर्बलताओं की ओर संकेत किया गया है। सक्सेना जी का एकाकी संग्रह "नेहरू के बाद" राजनीति के वास्तविकता का परीक्षण करना है।

ग्रामीण विषयों की लेकर कई एकाकीवाणें (जैसे श्री देवीचरण, बंजनाथ पंवार) ने अपने एकाकी लिखे हैं। देवीचरण जी का "त्रय चरित्र", बंजनाथ का इलाज, "किमान के धाम", "पंचायत में महयोग" इत्यादि एकाकी राजस्थान के ग्रामीण जगत् में हमारा परिचय कराते हैं। श्रीमन्त कुमार तथा बंजनाथ पंवार ने राजस्थान के दार्शनिकों की बाणी दी है। पंवार जी का "मानव का

आयो तो हुँवैलो री

● श्री कन्यापति राज

धार्मं तो हृयेतो हिचयी  
दोग्यो तो हृयेतो मनो

हियरा रं पेदे छेई,  
प्रायो तो हवै नो रो-कोई न कोई।

गोदा पर मोना गाना  
बादलियां मूं बनझाना  
मुद्रिया रो ब्याय रमाता  
निगापट पावन भगुनावां

मुनरो तो हयैनी नागर  
मुनरो तो हयैनी माधरा

मरबसिया रों तोरा तोरा,  
मरबसिया रों तूवेतो रो-कोई न कोई ।

गाथा सु सुन्दर रागा  
 भवरा वी भोजी बागा  
 बलिनी सु नेत्र दिगागा  
 मोदना रे बागा गागा

माई तो हूँ तो राधा  
बापों तो हूँ तो पारंगत

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

[illegible]

क. आना है आना।  
आयो तो हूँ तो रो-रोई में कोई।

मायरा रो भडिया मारी  
 पूजा रो मडिया मारी  
 माया रो बडिया मारी  
 पौजू रो मडिया मारी

मोनो तो हरे की वारा  
 भीमो तो हरे को कावरा

'ज' मूनी गो साबो रात  
भायो लो हरी गो री-बोई न कोई

पांशू मूँ चमत् कुराणा  
 गोरी मे भरम करणा  
 हिमज्ज रो हंगी उज्जणा  
 कुम कुम कपरा दारणा

॥ श्री गुरुभ्यो नमः ॥  
 ॥ श्री गुरुभ्यो नमः ॥

दशमिः सप्तमः सुखमः ।  
उत्तमः लोहः लोहः लोहः ।

[illegible]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥

# गीति साहित्य

## श्री राधेस्वाम कौशिक 'अधीर'

हिन्दी साहित्य के इतिहास में राजस्थान के गीति काव्य का स्थान गुरुचित है। प्रादिकान में आए कवियों ने तात्कालीन स्थिति में प्रेरित होकर गंधार, भक्ति और वीरतापूर्ण तथा मोरों प्रभृति, मन्त्र कवियों ने भक्ति विषयक गीत लिखकर हिन्दी के गीति भण्डार को समृद्ध किया है। मोरों की उन्नता सो हिन्दी के कतिपय कवियों को ही प्राप्त हो गयी यह अनिर्दिष्ट है।

राजस्थानी (डिगन) और विगल (ब्रजभाषा) दोनों भाषाओं में राजस्थान के कवि काव्य-सृजन करते रहे। इसी संदर्भ में हम इस तथ्य का उल्लेख करते भी अनंगत नहीं समझते कि वर्तमान प्रचलित साहित्यिक हिन्दी राजस्थान में अपरिचिन्ता न एकर भी प्रचलित नहीं रही। राजस्थान में सम्पूर्ण गीति काव्य का पर्यवेक्षण तथा मूल्योक्त एवं निबन्ध के परिमित पृष्ठों में सम्भव नहीं, केवल कही सोरी (वर्तमान प्रचलित साहित्यिक हिन्दी) के गीत ही हमारी चर्चा के विषय है।

गीत संकलन, पत्र पत्रिकाएँ तथा भाकाश वाणी, गीत ही श्रोत हैं जिनसे हमें गीतकारों की रचनाएँ प्राप्त हो सकीं। इसी के आधार पर उपरोक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए पर्यवेक्षण के साथ ही सृजन का प्रयास किया है।

अन्य-अन्य विमरी हुई सामग्री का पणन शोध की प्रणाली समझा है। फिर भी हमने भरसक चेष्टा की है कि उपर्युक्त कवि विस्मृत नहीं किये जायें। अन्य कवि की सम्पूर्ण इतिहास उपनयन न होने

के कारण उनका सर्वांगीण विश्लेषण प्रस्तुत करना सामर्थ्य के बाहर है। तथाकथित पर्यवेक्षण ही प्रेषित है इसमें अधिक का दावा हम करने भी नहीं।

काव्यक्रम की दृष्टि में प्रताप नारायण पुरोहित राजस्थान की गीति परम्परा में प्रथम स्थान के अधिकारी हैं। द्विवेदी कालीन इतिवृत्तात्मक सेनी में निवेद भाषके गीत ऐतिहासिक दृष्टि में महत्वपूर्ण हैं। 'रसमयी' नामक संग्रह के पत्रितिक भाषकी अन्य रचनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। व्यक्तिगत अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में प्रध्यात्म का गहरा रंग है। कही-कही राष्ट्रीयता और समाज-सुधार का स्वर भी लक्षित होता है।

जैसे-जैसे हिन्दी काव्य भाषा के रूप में प्रचलित होती गई राजस्थानी के कवि भी हिन्दी गीतकारों की पंक्ति में घा बैठे। यह घास्मिर प्रभाव के कारण नहीं अपितु युग चेतना में प्रेरित होकर ही सम्भव हो सका। बन्देयानार मेडिया होकर ही सम्भव हो सका। बन्देयानार मेडिया और मेघराज 'सुनु' इनमें प्रयणीय है। स्वर्गीय डा० सुधीन्द्र, स्वर्गीय प्रो० चन्द्रदेव, सुमन्त शर्मा तथा गणेशजीवन 'उन्माद' राजस्थान में पढ़ते सेवे के हिन्दी गीतकार हैं। मेडिया की पत्न्युत भाषा, प्रवाह और प्रभाव राजस्थान के कतिपय कवियों को प्राप्त है। प्रविशयोगिन नहीं बन्धुनः निम्न और वर्णविषय दोनों दृष्टिकोणों में मेडिया के समानात्मक राजस्थान में अन्य नहीं।

स्वर्गीय डा० सुधीन्द्र के गीत परिचित और



शब्द विवेक रहस्योद्घाटन करते हैं। साध्यान्म की ओर मुके हैं।

हिन्दी गीतिकाव्य के प्रथम राजस्वान के गीतकारों को भी प्रभावित करने रहे हैं। छायावादी कवियों ने पश्चात् बच्चन की सहजता, बंचन की मननता तथा १९३६ के प्रगतिवादी अभिप्राय ने राजस्वान के कवियों को भी अपने रंग में रंग ही लिया। पत्र-पत्र इनका प्रभाव नक्षित होता है।

नई पीढ़ी में ज्ञान भारिल्ल, रामनाथ 'रमनाथ', मनोहर प्रभाकर, जगदीश चतुर्वेदी, राजीव भास्कर 'राकेस', तारा प्रकाश जोशी, भाग्य धानुर, जयसिंह 'नीरज' और मूलचन्द्र पाठक हैं। ज्ञान भारिल्ल के दो गीत संग्रह 'ज्वार' और 'भाषा कुमुद' प्रकाशित हुए हैं। 'भाषा कुमुद' के गीत व्यक्तिपरक हैं। 'जिंदगी में प्यार', 'प्यार का शृंगार' आदि भाषा-निराशा के गीतों में 'कव्य तारा' जैसे दैर्घ्यिक सौन्दर्य के स्वर भी पाये हैं। वैसे 'मधुसूता में' के गीत सुन्दर हैं 'मोहर हो उमर' जैसे। किन्तु कव्य की पुनरा-विधि बचती है। गंगा है बच्चन की 'मधुसूता' जैसी प्रेरणा हो। अन्ततः यह तो कहा ही जा सकता है कि ज्ञान के गीत गीत (Lyrio) हैं कव्य के भी। उनमें मंजी हुई भाषा, बोधगम्यता, ईश्वरकृपा और प्रवाह है। कमलाकर के गीत गीत और कव्य दोनों दृष्टिकोणों में प्रशंसनीय हैं। धनुषी-वही मूकियाना प्रन्दात्र खटवने लगता है। भाषा भी कभी उड़ू की ओर मुकी हुई और कभी संकुच बढ़ता। राकेस और जोशी ने भी कव्य गीत लिखे हैं। जोशी के गीतों में मौलिकता के साथ साथ स्पष्ट दिखाई देता है। मूलचन्द्र का संकुच कव्य में उरमा धुनने में साहिर है।

विजय निर्बोध अपने हास्यगीतों के कारण स्मरणीय हैं। वैसे बचन तो है नहीं गीतों में। प्रथम कवि और फिर पत्रकार पुनिगरी यथार्थ की ओर मुके हैं 'वामना में दूर जाऊँ तो जिऊँ कैसे?' इनके गीत राजस्वान में ही नहीं भारत वर्ष में पूँजे हैं। जीवन के प्रति इनका एक विशिष्ट दृष्टिकोण है। अपने मान और मूल्य हैं। 'सुभाष चरित' तथा अन्य मुक्तक रचनाओं के द्वारा इन्होंने अपने भाष को सिद्धहस्त 'पैरोडी कार' प्रमाणित किया है।

डा० रांगेय राधव सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी हैं। उनके गीतों के पर्यवेक्षण और मूल्यांकन के लिए तो पुष्कळ निबन्ध प्रेषित हैं। डा० रामानन्द तिवारी ने प्रबन्ध-प्रणेत होते हुए भी गीत लिखे हैं जिन्हें सामान्यतः उच्चकोटि का कहा जा सकता है, किन्तु गेयता और प्रभावशक्ति की कमी प्रकट होती है। श्री मूलचन्द्र पाण्डेय छायावादी शिष्टा प्रवर्तनी हैं। श्री मूलचन्द्र पाण्डेय छायावादी शिष्टा विधान से प्रभावित होकर ही अपने गीतों में नयापन दे सके हैं। व्यक्तिगत धनुषीयों के स्वर उभर कर बोलते हैं। भाषा का निष्कार प्रशंसनीय है।

डा० हरीश, परमेस्वर द्विरेक, विरंजीव जोशी 'सरोज' और हरिराम प्रार्थी भी हिन्दी में गीत लिखते हैं। हरीश जी के गीत सुन्दर हैं परन्तु नईरंजी के स्वर दब गये हैं। द्विरेक के गीत 'विताबी' हैं, 'विताबी' से यही तात्पर्य है कि जीवन की धनुषी-तियों से प्रेरित न होकर वह पुनः पुनः प्रेरित हो कर लिखे गये हैं। धनुषीयों के प्रति ईमानदारी का तो प्रश्न ही नहीं उठता। प्रयास साध है इनके गीत। प्रार्थी के गीत मधुर हैं, किन्तु व्यंग्यता में धीरे सीधण नहीं, पुरानी पीढ़ी की बात दुहराई जा रही है, ऐसा कुछ लगता है।



# समीक्षा-साहित्य

श्री नवलकिशोर शर्मा, हिन्दी व्याख्याता, महाराजा संस्कृत कालेज, जयपुर

राजस्थान की मरूमि में मानवीय शौर्य धीरे

बचा-बचै में निःसृत गंगा-जमुनी धाराओं के  
प्रवाह ने भारत की सांस्कृतिक निधि को समृद्ध  
करने में अग्रणी योग दिया है। भारतीय साहित्य  
की इसका अनुदान अग्रणी है। प्राधुनिक-साहित्य  
के विरास में उसका योगदान कम रहा है तो  
इस कारण उनकी प्रथमता बढ़ावि नहीं, कारण  
है वो इतिहास का अभिगाथ और सुविधाओं का  
प्रदाय है। किन्तु फिर भी अपनी महान् परम्परा  
की रक्षा करने की है और प्राधुनिक साहित्य को  
भी अनिवार्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण देन दी है।

हिन्दी-समीक्षा में राजस्थान का योगदान  
प्रतिष्ठान में ही प्रारम्भ हो जाता है। रीति-कान  
के महाराजा जयसन्तसिंह ने साहित्य के विचार्यों  
को-कानि परिचित है। प्राधुनिक हिन्दी-समीक्षा  
का इतिहास कुछ दशकियों तक ही सीमित है,  
किन्तु इस बीच भी राजस्थान में ऐसे समीक्षक हुए  
हैं जिनका व्यक्तित्व हिमान्य-सा ऊँचा और हिन्द-  
कारण-सा महान् भवें ही न हो, पर जिनोंने अपनी  
कला में नयी विचारों का उद्घाटन या संकेत  
प्रदान किया है। उनके प्रयास महान् चाहे न हो,  
पर साहित्य की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण अवश्य  
हिए हुए हैं। प्रस्तुत लेख में प्रकाशित उपलब्ध  
कालों के आधार पर राजस्थान के समीक्षा कार्य  
की कतिपय श्रेणियाँ प्रस्तुत करने का प्रयास है,  
केवल यदि प्रवाद या अपरिचित से किसी लक्ष्य  
संकेत बिना प्रकाश उदीयमान प्रतिभा के महत्व-

पूर्ण या आधारगत भी कार्य का उल्लेख करना भूल  
जाए तो धन्य है, क्योंकि वह मनुष्य अपने को  
मुधारने को तत्पर और नयी जानकारी को अत्युक्त  
है। लेख में वस्तुपरक निरूपण दृष्टिकोण को  
प्रदानाया गया है, अतः यह केवल सूचनात्मक है,  
समीक्षात्मक नहीं। मैंने अपने दृष्टिकोण में किसी  
कृति का मूल्यांकन नहीं किया है।

ऐतिहासिक संवेपणाः—डा० हजारी प्रसाद  
द्विवेदी के अनुसार ऐतिहासिक कारणों से प्रादि-  
कान का हिन्दी-साहित्य मध्य देश में सुरक्षित न  
रह सका। राजस्थान और गुजरात के अपेक्षाकृत  
निरापद होने में यही हमें कुछ अधिक प्रामाणिक  
कृतियाँ मिलती हैं। इस प्रसंग में जैन-भगवतों  
में संविन मामलों उल्लेखनीय है। इसमें दो मत  
नहीं हो सकते कि इस कार्य को यहाँ के विद्वान्  
जितने अधिकारपूर्ण ढंग में कर सकते हैं, अन्य  
प्रान्तों के नहीं। यहाँ के विद्वानों ने अपने इन  
गम्भीर उत्तरदायित्व का निर्वाह अत्यन्त सफलता से  
किया है। इन विद्वानों ने यहाँ उपलब्ध सामग्री की  
छानबीन कर हिन्दी-साहित्य के अग्रधारपूर्ण  
प्रारम्भ पर बहुत प्रकाश डाला है, जिसका महत्व  
भाषा-विज्ञान, इतिहास, भाषा-कला के विरास  
एवं परम्परा सभी दृष्टियों में है। इनकी शोकाँ के  
कारण अब यह मान लिया गया है कि हिन्दी का  
इतिहास राजस्थानी भाषा के उद्भव और विरास  
में शुरू होता है।

स्वर्गीय गीरीशंकर हीराचन्द शोभा,





‘बबीर-नाम’ विवेक’ लिखते हैं कि ही प्रकाशित हुआ है, जिसकी विद्वानों ने दूरि-दूरि प्रशंसा की है। बबीर-नाम के विविध पाठों पर विविध विद्वानों ने समीर और मौलिक कार्य किया है, पर एक नाम बबीर के सिद्धांत, मान्यता, योग, अर्थ और नाम पर विचार करने वाली एक पट्टी मान्य-पूर्ण हुई है। डा० प्रमोद बबीर की सामाजिक योजना की ही प्रमुख मान्यता है। और उनकी अर्थ की बातों में अतिवृत्ति स्वीकारते हैं। डा० प्रमोद ने बबीर-नाम के मान्यतावादी पाठों पर विचार से विचार किया है। उनकी व्याख्याओं पर हम विचार कर सकते हैं की-विषयी व्यापक भी पाते हैं, पर हम स्पष्ट है कि ‘विद्वान्’ नाम ने एक संद का मिलने में भारी भूमिका है और उनके ही भारती समुदाय है। याला है कि किसी सामाजिक-आर्थिक में एक गुणवत्ता का अभाव होता और विद्वानुषों का अभाव अर्थ में अभाव का कारण एक गुणवत्ता का मिलना। डा० प्रमोद के संदर्भ में हम कह सकते हैं कि वह अपनी किसी की समुदाय में एक देने वाली और लेने की बातों को प्रकाश करने वाली है।

की, डा० हुता ने छोटी संख्या में बीजा पुष्प भी बिना। शिष्ट रूप से काट कर मज्जा की जाये, बसोकि हमने छोटी के बागान के लिए बाजार मागु बिना। पूर्व-भास्तेनु पुष्प, भास्तेनु-पुष्प और पारसी संवत्सर पर हमने बहुत मज्जापूर्ण सामग्री एकत्र की। डा० हुता की स्थिति जानना है कि पूर्व भास्तेनु बाग काय बाग ही है, बागविक बागों का बागविक भास्तेनु में ही होता है। डा० हुता की पुष्पों को नष्ट कर पूर्व-भास्तेनु पुष्प है। डा० हुता के बाग भास्तेनु को नष्ट करने की पुष्प दुर्घटना भी सुनिश्चित है।

डा० रामचरण शर्मा का पिता लाल  
विद्या के उत्तर धीरे विद्या पर धारणा  
कराया हो चुका है। अपने विद्या पर है  
विद्या पर लाल के लालों का भी लाल  
विद्या पर है। पर लाल पर लाल पर लाल है।

रले बानी परम्परा में मित्र जीवन और सक्रिय प्रतिभा द्वारा प्रणीत ग्रन्थों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव की सूझ जाँच करते बानी एक विविष्ट योसिम यी और इनने एक नई अध्ययन दिशा का प्रवर्तन किया। डा० लरमोमागर वाप्लोम के शब्दों में 'हिन्दी भावोच्चो तथा विद्वानों ने हिन्दी उपन्यास में प्रेमियक बाह्य जीवन की मोमोमा तो की यी, विनु प्रत्यन का स्वरूप दर्शन प्रमी तक प्रबूरा हो पडा था। प्रन्तु प्रबंध में डा० देवराज उपाध्याय ने इनो जगत् में प्रवेश करने का सफन एवं साधना—पूर्ण प्रमा किया है।' 'कथा के सत्व' भी एक प्रकार से इसी सन की पूरक पुस्तक है, जिसमें यूरोपीय उपन्यासों के नूतन प्रयोगों, चेतनाप्रवाही धारा, मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की विशेषताओं और हिन्दी के नवीनतम प्रसिद्ध उपन्यासों का अध्ययन किया गया है। 'विचारों के प्रवाह' में भी कुछ अध्ययन कथा-साहित्य से सम्बन्धित है। 'साहित्य और साहित्यकार' उनकी नवीनतम कृति है, जिस पर भागे चर्चा होगी। ऐतिहासिक उपन्यास पर इनने एक बहुत महत्वपूर्ण अध्याय है, जिसमें ईशान और उपन्यास की परस्पर-निर्भरता का अध्ययन सर्वथा नए धरातलों पर किया गया है। हेनरी जेम्स की भूमिकाओं का 'उपन्यास-कला' के नाम से उन्होंने अनुवाद किया है, जो प्रेम में भेजे गले का ठेपार है। डा० उपाध्याय के भावोच्चक इनके सिद्ध सबसे बड़ा प्रभियोग यह लगाते हैं कि 'उनोंने जीवन को जो मनुष्य के सभी प्रयत्नों और बाधाओं का प्रतिम साध्य है, प्रसवीकृत कर मनो-विज्ञान को ही साध्य मान लिया है।' दर प्रसन डा० उपाध्याय ने प्राधुनिक मनोविज्ञान के साहित्य का सफन-सन्वय विस्तारण का कार्य भागे भागे इन मनोवैज्ञानिकों पर छोड़ दिया है, उनका प्रयत्न यह था कि वे यह बतावें कि किस सीमा तक

मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों में प्राधुनिक कथा-साहित्य प्रात्रान्त है, इसमें अधिक का दावा वे नहीं करते। वे तो पगडण्डी बनाने वाले हैं, बाकी काम भागे वाले लोगों के लिए है। फिर भी यह निश्चित है कि मनोवैज्ञानिक प्रतिवाद उन पर हावी है।

श्री भालचन्द्र गोस्वामी के 'कहानी-दर्शन' की राजस्थान साहित्य प्रकाशनी ने एक हजार रुपये से पुरस्कृत किया है। कहानी के साम्प्रतीय अध्ययन और वेदों में उसके उद्भव और विकास की कथा पर लेखक ने बहुत परिधम किया है। ग्रन्थ-नेतक वास्तव में बहुत अध्ययनशील हैं, पर कहानी की नई दिशाओं का बहुत कम परिचय इस कृति में मिलता है। हाँ, तरण-पण्डित से भविष्य में आशाएँ हैं। काफी पहले श्री मोहनलाल जितागु की हिन्दी-कहानी और कहानीकारों पर एक परिचयात्मक पुस्तक निकली थी।

सिद्धान्त और समीक्षा—हिन्दी भावोचना की विविध प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि समीक्षक हमारे यहाँ बहुत कम हैं। यह बात एक तरह से अस्वीकार्य भी है और बुरी भी। अस्वीकार्य इसलिए कि पर हमारे पक्षधर नहीं होने का प्रमाण है और बुरी इसलिए कि यह अध्ययन की उन दिशाओं में हमारी प्रक्षमता का प्रतीक भी हो सकती है। पर यहाँ प्रक्षमता की बात नहीं है, ऐसे समीक्षक कम हैं जो हैं वे बहुत समर्थ और प्रभावशाली हैं। प्रगतिशील भावोचना के हृद-पुरुष डा. रामेय रायचौधरी भी हैं। इस प्रथम ध्येयी के सन्ध्या-हमारे बीच में हैं। इस प्रथम ध्येयी के सन्ध्या-साहित्यकार की भावविभी प्रतिभा भी प्रथम ध्येयी की है, जिसका निर्दर्शन 'प्रगतिशील साहित्य के मानदण्ड', 'समीक्षा और आदर्श', 'सर्वार्थ और युग', 'वाप्य-कथा और साधन' आदि कृति करती हैं। प्रगतिशीलता ही डा० राधेय के अनुसार साहित्य की ध्येयता की बतौरी है, 'प्रगतिशील



नहीं, मुद्रण पर अधिनिबन्ध प्रभी प्रकाशित नहीं  
 जा है, यद्यपि उसके बहुत में प्रसंग प्रतिष्ठित  
 अभिनिर्माणों में निबन्ध छुके हैं। डा० तिवारी  
 साहित्य की भास्वाद्यता का भूत 'ममास्वभाव'  
 को माना है। प्रसंग के प्रकाशनान्तर ही उनकी  
 स्थापना में पूरी तरह परिचित होना सम्भव  
 है। डा० तिवारी बहुत विद्वान् हैं, पर उनकी  
 भाषा बहुत जटिल, दुर्बोध और अशुभ है। डा०  
 'विवेचन' दुष्प्राप्य है। प्राचीनता के पक्ष पर' उत्तेज्य कृति है। डा०  
 'सत्तामिह' परण की भांगरा में 'सिद्धान्त और  
 'ज्योतिष' नाम में महत्वपूर्ण पुस्तक प्रभी-प्रभी  
 लिखी हुई है। श्री नन्द धनुर्वेदी एक अध्ययन-  
 मूल साहित्यकार हैं, उनकी पुस्तकें भी मुद्रणान्तर्गत  
 हैं। विभिन्न भेदिनारों और उपनिषदों में उनके  
 प्रकाशनों की व्यक्तित्व का परिचय मिला है, कृतित्व  
 की जांच प्रभी बाकी है।

जोधपुर में दो नयी पीढ़ी के प्रतिभाशाली  
 और मनमोही समीक्षकों की कृतियों का प्रकाशन  
 हुआ है। श्री विजयदान देवा की 'साहित्य और  
 'मना' श्री कोमल कोठारी की साहित्य संगीत  
 'शेरना' का सर्वत्र धादर हुआ है। श्री देवा  
 का साहित्य-सेवा का धादर्श बहुत ऊँचा है, वे  
 अपने समय की पेट की सुराक किसी भी कीमत  
 पर नहीं बनाता चाहते। उन पर बॉर्डेन का  
 प्रभाव है, पर अपने स्वतंत्र विचार भी हैं।  
 श्री कोमल कोठारी ने हजारीप्रसादजी पर  
 प्रकाशित किया है। हिन्दी की भाषा की प्रगतिपरक  
 सद्यःस्थायी पद्धति में मुक्त होकर। पर उनकी  
 निर्दिष्टता उचितता न केवल भ्रान्त हैं, अपितु  
 'महान्तर' भी हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा'  
 का केवल नहीं गई एक बात मुझे बड़ी पसन्द  
 आई कि हम यह तो गर्व में कहते हैं कि हमारे

उपाध्यायगणों पर प्रमुक्त-प्रमुक्त विदेशी कलाकारों  
 का प्रभाव है पर यह चिन्ता नहीं करते कि  
 वाजिदाम, दण्डी, बाण आदि का भी कुछ  
 प्रभाव हो। दोनों लेखकों ने तोड़-मीतो का प्रयत्न  
 अध्ययन किया है। पर इनका राजस्थानी प्रेम  
 साम्प्रदायिकता की सीमा तक पहुँचा हुआ है।  
 रावत सारस्वत का भी इस सम्बन्ध में नाम लिया  
 जा सकता है।

हिन्दी के शोध-प्रबंधों का स्तर आज इस कदर  
 गिर गया है कि पी० एच० डी० में विद्वता और  
 अध्ययन का दूर का भी लगाव नहीं रह गया है।  
 इनमें मिलता है केवल संकलन, वर्गीकरण और  
 उद्धरण या वेदों में लेकर आज तक किसी विषय  
 पर जो लिखा गया उसकी परिणतता। तो भी,  
 इस कारण सभी अधिनिबन्धों के प्रति उपेक्षा ठीक  
 नहीं है।

राजस्थान के शोधकर्ताओं ने यहाँ या बाहर  
 के विश्वविद्यालयों में अनेक विषयों पर उपाधि  
 ली है, सबका उल्लेख यहाँ सम्भव नहीं है, कुछ  
 नाम गिनाना ही पर्याप्त होगा, डा० राजेन्द्र जोगी,  
 डा० जगदीश जोगी, डा० प्रभासचर नागर,  
 डा० यतीन्द्र, डा० शिवपुरी, डा० माधुरी, डा०  
 हरीशंकर शर्मा हरीश, डा० प्रभुनारायण महराज,  
 डा० गायत्री, डा० अचर ..... और मूखी  
 सम्बन्धी हैं। अध्यापकीय प्राचीनता प्रसंग की महत्ता  
 बहुत है। इस दिशा में रामनाथ सावन का नाम  
 उल्लेख्य है। प्राध्यापकों के प्रतिरिक्त श्री पूनबन्द  
 पाण्डे की भी परिव्यापक समीक्षा-कृति है।  
 इस प्रकार की प्राचीनता एक सीमा में उदात्त  
 होने पर स्वतंत्र और स्वयं-मनोभा की प्रगति  
 के लिए धातक बन जाती है। छात्रोपयोगी प्राची-  
 नता की अधिपता हमारी चिन्तन प्रवृत्तियों का  
 भी परिव्यापक है। साधारण या महान्तर



है। लेखकों में अन्दाजेदार गणकारी आधार पर  
एक निश्चय की प्रथा इधर हिन्दी में खूब चल रही  
है, पर जिनमें कुछ बड़े नामों की वजह से बड़ा  
स्वार प्राप्त होता है। यदि यह कार्य ईमानदारी से  
ही तो बहुत क्लेश है, पर इस व्यावसायिक युग में  
लेखकों के पत्रों की प्रतिस्पर्धा में इनका अधिक  
समय तक चलना संभव नहीं। 'नहर' उल्लेखनीय  
पत्रिका है, पर राजस्थानी प्रतिभा के विकास की  
दोर ध्यान देना उसका लक्ष्य नहीं है। राजस्थानी  
प्रतिभा का पल्लव तभी संभव है जबकि ऐसे पत्रों  
का प्रकाश हो, जिनमें प्रादेशिकता और अन्तर्-  
दिशा का सामंजस्य किया जाए। पर प्रादेशिक  
संघर्ष में हो कि अपने प्रदेश के साहित्यकारों को  
ही प्रवृत्त करना है, और अन्तर्देशीय इस संघर्ष में  
जिन्होंने कम मात्रा में देशान्तरों का श्रेष्ठ साहित्य  
को स्थान पावे। इसी से गति और भंग्य, चेतना  
और कला, प्रगति और संस्कृति का वह समन्वय  
ही संभव है जो सम्पूर्ण जीवन है। श्री मंगल  
मनोरा के प्रयोगों में अजमेर में निकला 'व्याप'  
(नवम्बर १९६०) इस दिशा में पहला  
सफल प्रयास है।

अन्य विभिन्न वर्गों में रखकर राजस्थान के समीक्षा  
समिति का जो अध्ययन किया गया है, वह अधिक  
रचना सूचना देने की मुविधा की दृष्टि से। ऐसा  
करना नहीं कि क्या साहित्य के अध्येता की काव्य  
मेरु न हो या नाटक का समीक्षक कहानी का  
सूत्रकर्ता बन सके। मर्यादा इतनी ही है कि अन्य  
रचनाओं की अपेक्षा किसी विशिष्ट रूप की ओर  
अधिक ध्यान की विशेष गति भविष्य के कारण  
एक पक्ष बाधनी है, उस दिशा में विशेषज्ञता के

माने उसकी देन विनिष्ट हो भी सकती है। किन्तु  
कोई समीक्षक अनेक दिशाओं में समान रूप से भी  
प्रतिकार रख सकता है। एक ही ग्रंथ में साहित्य  
के विविध रूपों का विभिन्न दृष्टियों से भी  
अध्ययन होता है। इन पत्रिकाओं के लेखक का प्रयत्न  
अधिक में अधिक सूचना के संग्रह का है। यद्यपि  
कोई सूचना संग्रह निरर्थक है, पर सार्वक की छांट  
क लिए सार्वक-निरर्थक जैसी भी हो, सामग्री का  
संचय जरूरी है। इस संचय में उच्चस्तर के कार्य  
को प्रवृत्त करना और महत्व देना विद्वानों का कार्य  
है। मेरा प्रयास यदि उनके सामने कुछ विचारणीय  
सामग्री रख सके तो यही मेरी सफलता है। इस  
लेख में जिन आलोचकों की चर्चा आई है, उनके  
अभाववादी पक्ष (निगेटिव साइड) पर मैंने मौन ही  
धारण करना उचित समझा है। मेरी दृष्टि में अभी  
तो राजस्थान के साहित्यकारों के सामने यही स्थिति  
है कि वे अपने को सहस्रपुंज करें, प्रमर्दन करें,  
आत्मालोचन की चर्चा का प्रबल भाव इस योग्य  
बनें। या मैंने हमारे प्रभावों की ओर संकेत प्रत्यक्ष  
किया है, उन कृतियों पर एक-दो तारों में अधिक  
का व्यय नहीं हुआ है, जिनका महत्व साधारण  
है। आज नये समीक्षकों की प्राचीन साहित्य के प्रति  
अवज्ञा और उदासीनता की दृष्टि एक बहुत बड़े  
बल्ले के बिन्दु पर पहुंच गई है। अपनी परम्परा की  
देखे बिना आगे बढ़ाना कभी भी संभव नहीं है,  
प्राचीन कृतियों हमारे अनुभव को विगत करती  
हैं, जीवन के बोध को बढ़ाती हैं और नयागम  
संस्कारों का संवर्धन करती हैं। अतः मैंने प्राचीन  
साहित्य पर हुए कार्य का धार में उल्लेख किया  
है, इसके मर्यादा विपरीत धारणा कुछ प्राचीनता की  
है, जो हिन्दी साहित्य की छायावाद के साथ समान

१. अन्तर्देश के आत्मने पद से उद्धृत



## निबन्धकार

प्रो० नरेन्द्र भानावत एम.ए., एल. एल.बि., रिजर्व स्कॉलर हिन्दी-विभाग मजबूत काहेज, बुंदेलो (राज.)

राजस्थान की राजसभा माटी में धूर और मंत्र  
जैसे तनवार और खंजरी गभाने घाते घटे हैं।  
वहाँ की चना-चन्ना भूमि यदि भगवान्‌गुरु की  
हस्तों के साथ पूँजती है तो ग्राह्य, संगीत और  
सा की माधुरी के साथ सैरती भी है। राजस्थान-  
साहित्य में जहाँ पद्य के माध्यम में धीरो में भर-  
निले की प्रेरणा भरी है वहाँ गद्य के माध्यम में  
रस, रास, विगत, पीढ़ी, पृष्ठानी, वशावनी,  
सर्वादि के रूप में उनके गौरव की रक्षा  
की है। तेरहवीं शताब्दी में राजस्थान-गद्य की  
प्रारम्भिक स्थिति रूप में अब तक चली आ रही  
है। इसका प्रथम विषय गद्य की विधा  
विषय की वर्णन करना है।

राजस्थान में राजस्थान का साहित्यकार  
गद्य लेख में घाते बढ़ा है। जी में प्राया तो  
जैसे बनी प्रवृत्ति का माध्यम हिन्दी बनाया  
और जो के प्राया तो राजस्थानी। इस दृष्टि से  
में दो प्रकार के निबन्धकार मिलते हैं— (१)  
राजस्थानी भाषा में लिखने वाले और (२) हिन्दी में  
लिखने वाले।

निबन्धकार वर्गीकरण—

राजस्थान का प्रबुद्ध निबन्धकार वर्तमान-  
काल में प्रवृत्ति एवं चर्चित सभी विषयों  
पर लिख रहा रहता है। अतः विषय-विवि-  
ध की दृष्टि में हम राजस्थान के समस्त  
लिखकों को निम्न वर्गों में विभाजित कर  
सकते हैं—

- (१) दवेदगात्मक निबन्ध ।
- (२) मानवोचनात्मक निबन्ध ।
- (३) भावात्मक निबन्ध ।
- (४) हास्य-व्यंग्यात्मक निबन्ध ।
- (५) जीवनी-सम्बन्धी सत्करणात्मक निबन्ध ।
- (६) यात्रा आदि स्फुट विषय ।

अब हम प्रत्येक वर्ग का क्रमशः वर्णन करेंगे ।

(१) दवेदगात्मक निबन्ध :—

राजस्थान में शुद्ध और परिमाण की दृष्टि में  
निबन्धकारों का यही सबसे महत्त वर्ग है। राज-  
स्थान की साहित्य-परम्परा शताब्दियों से चली आ  
रही है। मेकडों प्रज्ञात ग्रन्थ सम्पादित होकर प्रकाश  
में आये हैं। हजारों हस्तलिखित ग्रन्थ अब भी  
भण्डारों में बन्दी पड़े छपटा रहे हैं और लाखों  
ग्रन्थ दीमकों के उपजीव्य बन चुके हैं। अतः साहि-  
त्यकारों का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने  
अपनी सोच का नवनीत निबन्धों के रूप में साहित्य-  
जगत के सामने रखा। इन निबन्धों को हम निम्न  
उपवर्गों में बाँट सकते हैं—

१. लोक-साहित्य सम्बन्धी निबन्ध :— राजस्थानी  
लोक-साहित्य विविध, विगान और विस्तृत है।  
उसमें कथा, गीत, राम आदि का अत्यन्त भण्डार  
है। श्री भगवद्‌नाट्य, नरोत्तमदाम स्वामी,  
और सूर्यकरण पारीक ने राजस्थानी-गीतों पर  
अच्छे निबन्ध लिखे हैं। बट्टैयाना महन् ने  
'राजस्थानी-कहावतों' और 'लोक-कथाओं' में पूरे



करगे। इस क्रांति के निबन्धनकारों में जेनीदनराय प्रमुख हैं। इन्होंने लगभग एक हजार गद्यकाव्य लिखे हैं जो विभिन्न साहित्यिक-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। रामकृष्ण जिनीमुख ने दो दर्जन गद्यकाव्य लिखकर इस परम्परा को प्रागे बढ़ाया। दिनेशनन्दिनी के 'शबनम', 'मुक्ताफल', 'दुपहरिया के फूल', विष्णु पन्थानान जोशी का 'सीधी रेखाएँ' शकुन्तला रेणू का 'उन्मुक्ति' ऐसे ही संग्रह हैं। लेखक ने भी ऐसे कई गद्यकाव्य लिखे हैं।

(४) हास्य-व्यंग्यात्मक निबन्ध

हिन्दी-साहित्य में हास्य सम्बन्धी रचनाओं की कमी नहीं है। पद्य में तो फिर भी हास्य-रस की कविताएँ कवि-सम्मेलनों में बाजी मारने के लिये लिखी जाती रही हैं। पर गद्य में ऐसे प्रदास बहुत कम हुए हैं। अन्वर के विद्युत्तन चतुर्वेदी ने ऐसे निबन्धों में अधिक सफलता प्राप्त की है। 'बड़े भैया' उनका ऐसा ही निबन्ध है। अन्य निबन्धकारों में रणजीत, विजय निर्बाध, मंगल सम्मेलन आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

वैवेकानन्दक वर्ग के निबन्धकारों की भाषा सरल-स्पष्ट होती है और उसमें पाद-टिप्पणियों की कमजोर स्थिति है। कहीं-कहीं तो प्रारंभ में एकाध पृष्ठ के प्रतिरिक्त निबन्ध का सारा कलेवर भूल-पाठ के ही भरा रहता है। अग्ररत्न नाहटा और निर्मल बापन के अधिांश निबन्ध इसी श्रेणी के हैं। पाठकनात्मक वर्ग के निबन्धकारों में भाषा का प्रतिपक्ष, विवेकन की शक्ति और समीक्षक की पद्धति के दर्शन होते हैं। परीक्षोपयोगी निबन्धों के अभाव में भाषा का दर्शन न होकर पिटुपेय मात्र रहता है।

हिन्दी-साहित्य में महाद्व कवियों की जीवनी के बारे में अब भी प्रामाणिकता का दावा की जा नहीं कर सकता। ऐसी दिवति में इस घोर विमर्श प्रपलनीय होना आवश्यक है। श्रीमराज पंडित ने 'लनकार' में विजयसिंहजी 'पवित्र' सम्बन्धी निबन्ध प्रकाशित कराये हैं। राजन साहस्यन और डा० हरीश के 'बदना' में, डा० महेंद्र के 'मिड गोविन्ददाम' और 'सुख सम्पतिराय भगारी' पर ललता नरेन्द्र महेंद्र भगवत के 'देशीयता सामर', 'कविताय मोहनसिंह और 'नरेश्वरदास स्वामी पर 'देशिक हिन्दुत्वान' में ऐसे ही निबन्ध प्रकाशित हुए हैं। श्रीमराज पंडित ने भी 'अनार-प्रति' में संमरणामय निबन्ध लिखे हैं।

## • वेदना •

धर्मित वेदना है, मुझे सोर दो तुम,  
मुनो दर्द का भाग तुम को नहीं है।

जनम मे मरणा मे मुझे सूख दरिद्रता,  
हृदय को नई धीर कोई गान दो।  
मुझे गर्द माने उमरगो बराने,  
जवागो नही धीर कोई जनम दो॥

बहुत माप दू डे बहुत सो गुता है,  
नही एक का जो रि धर गर पाता है।  
इमे सोड दो तुम, इमे सोनना मर,  
बरो हिम मिमर है, जो धर गर मरता है॥

धर्मित मायना है, मुझे सोर दो तुम,  
हुमर माय का भाग तुमको नहीं है॥

कुम्हा दीन जो था, उमे क्या कुम्हाता,  
धमर ज्योति मे है, कुम्हारो बरानो।  
हुतागो मभी धर्मियो को निमलता,  
धर्मित है मिद' गो मिमरों मिमरों॥

मयन धर्मित मर जो जवा बर गुता मे,  
रिमो नीर को मोर डाता गो क्या है ?  
उडा हो नही धर सोरो म निमो,  
रमो धर को मोर डाता गो क्या है ?

म रिमो रिमो का हुदय भर मरता है,  
मरन बाध का भाग तुमको नहीं है॥

• धी वेदना 'मिडोरी' •

# साहित्यकार ??

श्री रामनिवास 'शाह'

साहित्यकार समाज का मंचेवर है। समाज के स्तरों में साहित्यकार के भाव-गरीब में जो जगें उठी हैं, वह उन्हें बुद्धि के बूतों में मंचन कर, स्तर के क्षणों में, शब्द के पट पर प्रविष्ट कर देता है। वह युग के मानस को धरने-धार में धातम-गार चेतना, सम्वेदना और कल्पना के सहयोग से प्रविष्ट, तीक्ष्ण सम्वेदित और आशर्पक तथा स्पष्ट रूप देता हुआ व्यक्त, प्रमित और दीप्त जन-कल्प को उसकी वास्तविक स्थिति से परिचित भी करता है और भारी सम्भावनाओं का संकेत भी देता है।

यहाँ में यह प्रश्न भी उपस्थित होता है कि साहित्यकार यही करता है, या इसमें कुछ अधिक भी उल्टा दायित्व है ? वे मेरे आज के युग में साहित्यकार के समान सामान्य-जन में इतर प्राणी के रूप में दायित्व की चर्चा करना अनेक व्याधियों को प्रारब्ध करता है। फिर भी प्रश्न उपस्थित हो जाता है कि क्या उसे समाज के मानस का संस्कार करने के परवान् जो सम्भावनायें दिखती हैं, उन्हें वा संकेत करके रह जाता है या उन सम्भावनाओं में प्रमंगल और मंगल को देखता हुआ समग्र के निराकरण और मंगल की प्रतिष्ठा के लिए प्रयत्नशील रहता है।

आज का साहित्यकार चर्चा के क्षणों में व्यक्ति के स्तर और कला के नाम पर मर्य की अभिव्यक्ति के लिए अन्तर-धार में प्रतिष्ठित करने का आग्रह बना दिखाई देगा, इसके प्रागे कुछ नहीं। प्रागे का साहित्यकार के विषे नहीं है, ऐसा वह कहता है,

कहता ही है, करता नहीं। उसके जाने या प्रवजाने में लगभग उर्युक्त सभी प्रश्न उसके कृतित्व में परि-नक्षित होने हैं, चाहे वहाँ व्यक्ति हो प्रववा समुदाय। मेरी अपनी मान्यता है कि वह मूढम दृष्टा भी है और स्वप्न दृष्टा भी। मूढमदृष्टा साहित्यकार युग-सत्य और उसकी भारी सम्भावनाओं को एक क्षुब्ध के मान प्रक्षिप्त करता हुआ जन को अपने स्वप्न दृष्टा के रूप तक ले जाता है और उन्हीं प्रेरक क्षणों में उसे आत्म-विभोर कर, स्वप्न को सत्य में परिवर्तित करने की भाव-भूमि में ला खड़ा करता है।

साहित्यकार इसे स्वीकार नहीं करता है कि उसका कोई दायित्व है। वह इसमें चिह्नता है। यह स्वाभाविक भी है। सृजन में रत रहने हुये दायित्व का निर्वहण करते रहने पर भी उसमें जो माग की जाती रही है, स्मरण दिनाते रहने की जो परिपाटी बन पड़ी है उससे वह क्षीज गया है। उसे धीरे होना है उस कृपण मनोवृत्ति पर जो निरन्तर प्राप्त करने रहने पर भी यह नहीं कहती कि हमें सृजन में कुछ प्राप्त हुआ है। बल्कि बराबर उसमें प्रागे और माग करती रहती है। धातिर साहित्यकार भी तो प्राणी है भुंभला ही जाता है इस इतज्जता पर और तब वह देता है कि मेरा कोई दायित्व नहीं है। महीं प्रति-क्रिया उसकी चर्चा में पूर्ण उभार के माघ अभिपन्न होना है, किन्तु सृजन के क्षणों में सृष्टा के मान्य में बैठे दिव सभी विचारों को पीछे हटके उभार आता है और तब स्वतः ही साहित्यकार के इतिव में "मंगल" का विराजना है। प्रवृत्त रूप में प्रेम मुमन में मंघ। इतिविधे साहित्यकार अभिनन्दनीय है।

माधुनि काल के उत्तरार्ध में माहिज जनता  
सहितकार का जीवन बिना कर्मा का बिना  
है। यह बात दिखाने वाला है कि  
सहितकार का स्वरूप और इतिहास हमारे  
आसपास है। यह प्रमाण है कि स्वरूप और मूल्य से  
जनता के सहितकार को देखने का मान्य  
मान्य के रूप में एक मान्यता है। इति  
को देखने, इतिहास के स्वरूप जीवन में इसे  
मान्य मान्य है। यह मान्यता सिद्ध है।  
का स्वरूप होता है।

1. 1950年10月1日，中华人民共和国成立，标志着中国历史进入了一个新的纪元。

परन्तु यह है कि साधक की उपासना भक्ति की  
उपासना से नहीं माने देनी। उससे साधारण की भाँति  
नहीं होने देनी। ब्रह्मा की साधना साधना से साधारण  
का साधना अधिक उच्च माना है और वह वह साधना  
से नहीं की जाता। जो साधना साधना से नहीं से देना  
तो जो साधना से वह साधना से देना है।

कहा है कि, यह युग की (साहित्यिक) प्रवृत्ति ही हो गई है जिसे साहित्यकार अपने भाषाकी स्वन. ही समझता जा रहा है। यही यह भी स्मरण रखने की बात है कि यह प्रवृत्ति प्रमुखतः युवक पक्ष की है, प्रेक्षक साहित्य की नहीं, भ्रम पर इसी अभिव्यक्ति को दर्शाने की यह गलतफहमी में सम्मान मिलता रहा है और यही इसके प्रसारण का कारण भी है। यह दो शक्ति ही बचायेगा कि इसका परिणाम कैसा होगा, किन्तु है भयावह !

वर्तमान युग की कुछ प्रमुख विशेषतायें और भी हैं। प्रचार प्रसारण, गुरुकुल और हृदयकण्ठ। जीवन को यह प्रभाव राजनीति में प्राप्त हुआ है जैसे बदनाम पुँजीवाद है, खैर जो भी हो, साहित्य भी इसके प्रभावसे मुक्त नहीं है। यदि यह कहे तो किन्तु अनुचित होगा कि साहित्य का प्राण तो तब विपन्नताओं की प्रमुख ब्रीडास्पनी है।

साहित्यिक गिरोह इस युग में काफी "बदनाम" रहे हैं। साहित्य तो अभी युग में नहीं है, प्रसिद्ध है। पाठकता, जिसे प्रशंसा और भाषण की संज्ञा देना किन्तु संभव होगा, इन गिरोहों का प्रधान और मुख्य गुण है, जो साहित्य के सत्य का भ्रम भंग करने में अधिक समर्थ और सफल रहे हैं। इसी दृष्टि से कहा जा सकता है कि साहित्यकार विजय यात्रा पर निकला है।

यह और पत्र, जिन पर निश्चित ही गुरुकुल की विशेषता के हृदयकण्ठों का प्रापित्य है, सरस्वती के प्रवाहन हैं। इनके प्रताप से साहित्य के क्षेत्र में इस भाँति भीड़ लग रही है कि आज के युग का साहित्य के सत्य को पहचानने में काफी दिक्कत हो रही है। इस भावराज में वह पहचान ही

नहीं पाना कि वह किसे देवता मानकर प्रार्थना करे। जिसे सरस्वती का वरदयुग माने और उसे प्रभाव ग्रहण करे।

स्वार्थ की भीड़ भाड़ और प्रचार की धक्का-पेन में उठी हुई गर्द समग्र नभ मण्डल को मालूम-दित कर लेती है। कला की कान्ति गर्द के भावरण में मोहल हो जाती है। जिस प्रकार कोहरा सूर्य की प्रकाश किरणों को स्पष्ट नहीं होने देता उसी प्रकार यह गर्द साहित्य के सत्य स्वरूप के प्रागे प्रा उसकी कान्ति में जन के परिचय में बाधा उपस्थित करती है। सृजक और पाठक के बीच का यह भावरण उस भ्रम के समान है जिसे दर्शन के क्षेत्र में माया का धातमज माना गया है। भाडम्बरियों की यह धातिश-कापिनिकों की भाँति साधारण जन को भावार्थ चचित भी कर देती है और भयभीत भी। किन्तु भाडम्बर सत्य का धासन ग्रहण नहीं कर सकता, वह स्वाई नहीं होता, समय के साथ ऊपर को उठी हुई गर्द उसी तन पर भागिरथी है जहाँ से वह उठी थी, और तब साहित्य का पुँजीभूत सत्य अपनी पूर्ण कान्ति के साथ स्पष्ट हो समग्र जनमानस को भावोक्ति कर देता है, जन उस धानोक में भरने प्रापकों पहचान, धातम विभोर हो जाता है और तब वह हृत्त भाव से प्रकाश के जनक का स्वरण करता हुआ उसके दर्शन के जिये लानाश्रित हो उठता है किन्तु तब तक साहित्यकार साधन में साध्य का रूप प्राप्त कर लेता है सभी साधारण धाकाधापो से निर्मित उमाया ध्यस्तित यह धरेगा नहीं करता कि समाज उसे कुछ दे। मेरे धनकी दृष्टि में साहित्यकार का यही स्वस्व है और मैं उसी की प्रार्थना करता हूँ।



मगर यह कोई दिक्कत की बात नहीं है। मगर लोग एक-दूसरे को मनाह देने रहेंगे—इन सनाहों को मानने या न मानने की मजबूती पूरी रखन-बचन और पूरा अधिकार होगा। प्राज्ञ-जन भी तो नींद मोटा सनाह देने फिरने हैं—बाह्य कोई माने या न माने।

जिन तरह किसी पार्टी या दल में कुछ दक्षिण-पंथी, कुछ बाय-पंथी कुछ मध्यम मार्गों और कुछ बेरोश के मोटे हुमा करने हैं उसी तरह मनाहकारों के दर में भी चार श्रेणियाँ रखी जा सकती हैं। तुलसीदास ने पतिव्रता स्त्रियों के चार भेद गिनाये हैं—उत्तम, मध्यम, नीच, सधु। इसी आधार पर सनाह स्त्रियों के भी चार भेद किये जा सकते हैं।

उत्तम मनाहकारों की श्रेणी में उनको रखा जा सकता है जो बेचारे धाराम-बुनियाँ पर बैठ कर, झिंझें मूँद कर और कान बन्द कर, भाषणों, प्रवचनों, वक्तव्यों आदि के द्वारा मजबूती को नुकसान पहुंचाते फिरते हैं। इनकी कपनी और करनी में ठगना ही धन्तर होता है जितना धाकाश और ताकत में। ममन, ये जनता को मनाह देते हैं कि रैल-वेयों में छुजारा करो मगर खुद धानीदान श्रेणियों में रहते हैं। कम-तनखाह वालों को पेट पर पूरी बायने का उपदेश देते हैं पर खुद बड़ी-बड़ी छप्पाहें और भर्तें बसूत करने हैं। तीसरे दर्जे के छप्पाहें को चौबी या पांचवीं योजना तक लगाकर करने की मनाह देते हैं, पर खुद हवाई जहाजों में, मोटरों में और रैल के सैलूनों में सफर करते हैं। बाहर मज-निषेध का प्रचार करते हैं, पर घर में बैठ कर जाम के जाम खानी कर देते हैं और फिर भी पारमा बने रहते हैं। क्योंकि—

मैं हूँ पीकर मुकरना पारसाई के लिए  
मैं हूँ बाजार पीता हूँ वही बदनाम है।

दहेज प्रथा के बिनाफ सेक्वर भाड़ते हैं, पर मानने बैठे के विवाह में चुपचाप दहेज की सम्झी रखने डकार जाते हैं। रिश्ततखोरो को गालियाँ मुनाने हैं, लेकिन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में रिश्तत देने वालों की प्राय-भगत और हिमायत करते हैं। धन की कमी और भुखमरी पर घाठ-घाठ मामू बहा कर दावते और पाटिया उड़ाते हैं। धन्य-बचन का प्रोत्तेषण करके दोरो व समारोहों में लाखों रुपया धून में डालते हैं। खुद के पाव कन्न में लटके हुए होने पर भी धन और सत्ता का मोह नहीं छोड़ते मगर दूसरों को जीव की क्षणमंश्रुता और त्याग का उपदेश देते हैं। इस तरह तुलसीदास की मन क्रम बचन लवार की परिभाषा को पूरी तरह सार्थक करते हैं।

मध्यम दर्जे के सनाहकारों की कैफियत यह है कि ये सनाहकार बनाये या नियुक्त किये जाते हैं। वह भी ठोकर-पीट कर नहीं, बल्कि बड़ी इज्जत के साथ। ऐसे सनाहकार उन लोगों में से छाटे जाते हैं जो या तो विरोध माने जाते हैं या जिनमें किन्हीं कारणों से होने में लगाना जल्द होता है ताकि वे शोर न मचायें। इन मनाहकारों के लिए तरह-तरह के मनाहकार मण्डन या समितियाँ या जाच-कमीशन कायम किये जाते हैं। ममन देये वालों की तोड़ बगो पून जाती है और इन दोनों में क्या धन्योन्याय्य सम्बन्ध है। या लोग गणियों में कूड़ा बगो फेंकते हैं, या शीर्षामन मामदान है धयवा हानिकारक या बटेरवाजी पतंगबाजी आदि का राष्ट्रीय जीवन में क्या महत्व है इनका क्या लगाने के लिए जाच कमीशन बिठाये जा सकते हैं, और इनकी भित्तिरिक्तों पर धमन किन तरह किया जाय हम पर राय देने के लिए मनाहकार मण्डन बनाये जा सकते हैं। इन मनाहकारों में धाना की जाती है कि देग भर के दोरे बरें और



# जनसामान्य, साहित्यकार और हिन्दी साहित्य

दयाकृष्ण विजय

राजनीति, धर्मशास्त्र, समाज शास्त्र आदि पर निवेष्टने की मोटे-मोटे दृश्य साहित्य की कौटि में नहीं आते। साहित्य मानव जीवन की समग्रता की व्याख्या है। साहित्यकार शब्दमुमनों का माली और जीवन के रंगों का बिनेरा है। वह एक सर्वेदकशील प्राणी है। उसकी आत्मानुभूति उसकी अभिव्यक्ति में बिम्बित होती है। यही आत्मानुभूति चाहे संवेदन हो अथवा सहजानुभूति, आवेग अथवा हो अथवा धारणा, रूप सृष्टि के माध्यम से साहित्य की सजा प्राप्त करती है। साहित्य के सृजन में जहाँ साहित्यकार की प्रतिभा प्रमुख है, वहाँ हम उसके व्यक्तित्व, देश-काल, वातावरण से प्राप्त अथवा उसके सामाजिक सम्बन्ध तथा तात्कालिक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को नहीं छुड़ा सकते। साहित्यकार इसी प्रतिभा सम्पन्नता के कारण अन्य जन की तुलना में कुछ विविष्ट हुए सङ्कलनशक्ति हैं। इस कारण हम पर समाज-दास्य भी बिम्बित हो जाता है। इससे होते हुए भी साहित्यकार अपने सामाजिक परिप्रेक्ष्य के सक्रिय मानव सम्बन्धों को छोड़ना नहीं है। वह समाज का एक घटक ही है। अनुभूति की क्षमता कुछ कम अधिक सबसे ही होती है, लेकिन अभिव्यक्ति सामर्थ्य, वह एक अपने में विविष्ट हुए है, ईश्वरीय देन है। यही अभिव्यक्ति सामर्थ्य बरि का अर्थसाधन है।

साहित्य रचना के दो ही लीन पक्ष होते हैं। प्रथम भाव पक्ष (अनुभूति), द्वितीय बाल्य पक्ष (अभिव्यक्ति) तथा तृतीय कला पक्ष (अभिव्यक्ति)। साहित्यकार की बाल्य के उभय बाधनपर अथवा भाव व कला की निरन्तर मानात्मक परस्पर पर दृष्टि, इन्हें

चकते हुए अपने मंगलमय पद-चाप छोड़ने चकते हैं। यही पद चाप संवेदन की मचाई, विमल की गहराई तथा अभिव्यक्ति की सहजता व कारण जन-जन के कण्ठ-गहर हो जाते हैं। इसी सज्जानुभूति को साधारणीकरण कह सकते हैं।

इस बड़ी भूमिका के बाद दूसरा प्रश्न, जो साहित्यकार की भावार्थ की मुद्रि बनोती बना हुआ है, वह है साहित्यकार का निवेष्ट, जिसके निवेष्ट निवेष्ट तथा निवेष्ट निवेष्ट। साहित्यकार 'क्या निवेष्ट' का उत्तर केवल पक्ष मान नहीं है उसे एक प्रक्रिया की भी घोषणा है, जिसमें 'निवेष्ट' निवेष्ट तथा 'क्या' का उत्तर भी होते हैं। प्रश्न यह उपस्थित होता है कि साहित्यकार समाज की भाव पर लिखता है या समाज साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज में भाव उपस्थित करता है। मैं यह समझता हूँ कि इन दोनों ही प्रश्नों में सम्मिलित है। कभी समाज प्रार्थना में इनका भाव बढ़ जाता है कि वह साहित्य के कला की भाव बढ़ने के निवेष्ट दिवस कर देता है। और कभी समाज कठिण समस्याओं की कृष्णों में अपने को इनका जखमा हुआ हुआ है, तथा निवेष्टन का अनुभव करने लगता है कि उसे साहित्य में निवेष्ट प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति की मांग कर उसके निवेष्ट भाव का निवेष्ट होना पड़ता है। यही प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति, साहित्यकार का साहित्यकार है। इन दोनों, साहित्यकार हैं।

अन्तर्गत साहित्यकार का भाव साहित्य है वह साहित्यकार का भाव साहित्य में निवेष्ट होना है। इस कारण साहित्यकार का भाव साहित्य में निवेष्ट होना है।



सबको आत्मा मानते हुए भी जीवन मुक्तो को श्रेष्ठ तथा सांसारिकों को सामान्य समझेगा और नैतिकतावादी बहेगा जन्म में सभी समान हैं 'जन्मने जायने शूद्रा'। सबको उन्नति का समान अवसर मिलना चाहिये। विनिष्ट वही है जो बुद्धि में श्रेष्ठ है, गुण सम्पन्न है।

मैं यह मानता हूँ कि साहित्यकार को दृष्टि राजनीति, समाज एवं दर्शन की धारणाओं की बन्दिनी नहीं होनी चाहिये। साहित्यकार एक सामाजिक प्राणी भी है, राजनैतिक भी है, दार्शनिक भी है तथा नैतिकतावादी भी। हाँ, हो सकता है, राजनीतिज्ञ उसकी भावुकतावन उसे अपनी श्रेणियों में नहीं रखता हो, दार्शनिक उसकी सामाजिकता में उद्भिन्न हो गया नैतिकतावादी उसके मोन्दर्य तथा काम चिन्तनों में व्यथित हो नाक भी निषेधना हो, तो भी कवि की अपनी आत्मा के साक्षात्कार की अनुभूति की उष्णधारणा में निराला साहित्य समाज को दिया संकेत देता ही है। इतना मैं धरय स्वीकार करूँगा कि साहित्यकार के इसी समाज का एक घंग होने से उसकी अभिव्यक्ति भी समाज के स्तर में भिन्न नहीं हो सकती। बल्कि यह कहा जाए कि साहित्य मलवीन समाज स्थिति का प्रतिबिम्ब होता है तो नुटि न होगी। इसलिये हर समय यह कहना कि साहित्यकार आतिदरशी है, युग निर्माता है, पथ प्रदर्शक है, सही नहीं होगा। हाँ, कभी साहित्यकार आतिदरशी है तो कभी युग निर्माता, कभी पथ प्रदर्शक है तो कभी मात्र मनोरंजनकारी।

साहित्यकार सामान्य जन में एक ही बात में विनिष्ट है कि वह प्रकृति में प्रतिभा सम्पन्न तथा वाग् पुत्र है। लेकिन उसकी कसमी है। अल्पवय समाज में पृथक् साहित्यकार का कोई अस्तित्व नहीं है। सामाजिक कारणों से ही साहित्यकार में हमें साहित्य के मूल तत्त्व भाव, कल्पना तथा कला की

घट-बढ़ देखने को मिलती है। ये परिस्थितियाँ ही, साहित्यकार क्या निवे, किसके निवे लिखे तथा क्यों लिखे, निर्धारित करती है। साहित्य में भाव, कल्पना तथा कला के बदनते हुए रूपों में हमें समाज के परिवर्तनों के ही कारण दृष्टिगत होते हैं।

हिन्दी साहित्य के प्रादिकाल से लेकर आज तक यदि हम देखें तो लगेगा, कभी भी किसी कवि ने युग वाणी में भिन्न स्वर नहीं गाया।

हिन्दी साहित्य के प्राविर्भाव काल को ही लीजिये, जिये साहित्य में वीरगाथा काल कहा जाता है, ऐसा समय था, जब विदेशी आक्रमण बढ़ा तेजी में उत्तरी भारत पर हो रहे थे। भारत में नृपतामक राज्य व्यङ्ग्या ही थी। समाज रक्षा का सम्पूर्ण दायित्व ऊँची पर था, इसलिये देश रक्षा के निवे ऐसे नृपतियों को ही प्रोत्साहित करना समाज धर्म था। दागता नहीं थी। व्यक्ति का योगदान न होकर सम्पूर्ण समाज के गौरव की रिकशावति थी। वह निमन्देह युग धर्म का स्वर था। धात्र के जनानिक सामन में, हो सकता है, तत्कालीन जनानिकमक राज व्यङ्ग्या, हमें घटपटी लगती हो, परन्तु समाज रूप में अक्षिप्त नृप की दग गाया, क्या सोच सम्पूर्ण समाज की धमनियों में उठाव, बेतना तथा मधुनि का संचार नहीं करती? फिर क्यों धात्र हम धेष्ट व्यक्तियों की जीवनिरी विनते है, क्यों उनके निच धरने दारुण कर्मों में लगाते हैं। इसलिये ही ना, कि इस व्यक्ति का करिष समाज के निवे धारशी स्वल्प है। इसलिये ऐसे वर्गों का बर बाधा, देश पर धावे हुए सभट की धात्र सामान्य जननिष आशुन करने के निवे धारदध का। इसी प्रकार अन्तिकाल का साहित्य, धरने काल में नई दिशा का दिशांक था, परकीय धर्मीय सामन में समाज का मधुनि पर प्रहार हो रहा था। निचों की लात्र, तथा देशरक्षा की कनि लूटी या लूटी की। जनन सामन के जनन



सबको आत्मा का मानते हुए भी जीवन मुक्तों को थोड़ा तथा सांसारिकों को सामान्य समझेगा और नैतिकतावादी कहेगा जन्म में सभी समान है 'जन्मने जायने सूदा'। सबको उन्नति का समान अवसर मिलना चाहिये। विनिष्ट वही है जो बुद्धि में थोड़ा है, गुण सम्पन्न है।

मैं यह मानता हूँ कि साहित्यकार को दृष्टि राजनीति, समाज एवं दर्शन की धारणाओं की बन्दिनी नहीं होनी चाहिये। साहित्यकार एक सामाजिक प्राणी भी है, राजनैतिक भी है, दार्शनिक भी है तथा नैतिकतावादी भी। हाँ, हो सकता है, राजनीतिज्ञ उसकी भावुकताका उसे अपनी श्रेणी में नहीं रखता हो, दार्शनिक उसकी सामाजिकता में उद्दिष्ट हो तथा नैतिकतावादी उसके मोक्षार्थ तथा काम चित्रणों में व्यथित हो नाक भी मिचोड़ना हो, तो भी कवि की अपनी आत्मा के साक्षात्कार की अनुभूति की उच्चावस्था में निर्या साहित्य समाज को दिशा संकेत देता ही है। इतना मैं प्रत्यक्ष स्वीकार करूँगा कि साहित्यकार के इसी समाज का एक अंग होने से उसकी अभिव्यक्ति भी समाज के स्तर में भिन्न नहीं हो सकती। बल्कि यह कहा जाए कि साहित्य मत्वाचीन समाज स्थिति का प्रतिबिम्ब होना है तो चूटि न होगी। इसलिये हर समय यह कहना कि साहित्यकार जातिदरशी है, युग निर्माता है, पथ प्रदर्शक है, सही नहीं होगा। हाँ, कभी साहित्यकार जातिदरशी है तो कभी युग निर्माता, कभी पथ प्रदर्शक है तो कभी मात्र मनोरंजनकारी।

साहित्यकार सामान्य जन में एक ही बात में विनिष्ट है कि वह प्रकृति में प्रतिभा सम्पन्न तथा बाधु पुत्र है। लेकिन उसकी मर्यादा है। अल्पवयु समाज में पृथक् साहित्यकार का कोई अस्तित्व नहीं है। सामाजिक चारणों में ही साहित्यकार में हमें साहित्य के मूल तत्त्व भाव, कल्पना तथा कला को

घट-बद्ध देखने को मिलती है। ये परिस्थितियाँ ही, साहित्यकार क्या लिखे, किसके लिये लिखे तथा क्यों लिखे, निर्धारित करती है। साहित्य में भाव, कल्पना तथा कला के बदनते हुए रूपों में हमें समाज के परिवर्तनों के ही कारण दृष्टिगत होते हैं।

हिन्दी साहित्य के प्रादि काल में लेकर मात्र तक यदि हम देखें तो लगेगा, कभी भी किसी कवि ने युग वाणी में भिन्न स्वर नहीं गाया।

हिन्दी साहित्य के प्राविर्भाव काल को ही लीजिये, जिसे साहित्य में वीरगाथा काल कहा जाता है, ऐसा समय था, जब विदेशी आक्रमण बहुत तेजी से उत्तरी भारत पर हो रहे थे। भारत में नृपात्मक राज्य व्यवस्था ही थी। समाज रक्षा का सम्पूर्ण दायित्व उन्हीं पर था, इसलिये देश रक्षा के लिये ऐसे नृपतियों को ही प्रोत्साहित करता समाज धर्म था। दायता नहीं थी। व्यक्ति का समुदाय न होकर सम्पूर्ण समाज के गौरव की जिम्मेदारि थी। वह निमन्देह युग धर्म का स्वर था। मात्र के जन्मातिशायमान में, हो सकता है, मत्वाचीन एतर्नतामक राज व्यवस्था, हमें घटती लगती हो, परन्तु समाज रूप में अविच्छिन्न नृप की पता गाता, क्या हीन सम्पूर्ण समाज की धमनियाँ में उबार, चेतना तथा मद्बुति का संचार नहीं करता? फिर क्यों मात्र हम थोड़ा अल्पवयु की जीवनशैली लिखते हैं, क्यों उनके बिना अपने हाथग कर्मों में लगते हैं। इसलिये ही था, कि उस व्यक्ति का चरित्र समाज के लिये प्रार्थना बनता है। इसलिये ही वर्तमान का बड़ बाज, देश पर घाटे हुए मजद की धीरे सामान्य जनशक्ति जगृत करने के लिये आह्वान था। इसी प्रकार अन्तिम का साहित्य, अपने काल में नई दिशा का प्रदर्शक था, परन्तु धर्मोत्तर मान्य में समाज एवं प्रकृति पर प्रहार हो रहा था। स्थिति की मात्र, तथा देशभक्त की अन्तिम लूटो का चरित्र था। अन्तिम एतर्नतामक के स्वर



साहित्य से आज कोई प्रेरणा नहीं ले सकता।  
 साहित्य ऐतिहासिक परम्परा की इस कड़ी में इस युग  
 भी अपना एक विशिष्ट ऐतिहासिक महत्व है।

इन तीनों कानों में साहित्यकार ने सामान्य  
 न को ही पर्याप्त राजनैतिक सकटाँ, विपदाओं में  
 डाला है। राजा-महाराजाओं को बचा लिया तो  
 गरीबों को बचा लिया, एकतन्त्रात्मक राज-  
 व्यवस्था में हमें यह मानकर चलना ही पड़ेगा।  
 उनके लिये सत्कालीन युग हट्टा कवियों ने क्रांति के  
 गीत ऐसे महापुरुष बनाये, जिनमें सिंहासन के  
 लिये सहज धर्म अमृत होने वाले राजवंश ही प्रमा-  
 ण न हो; सामान्य जन भी सहज घाट्ट हो घोर  
 धर्म अमृत न हो। राम धोर कृष्ण को देव रूप में  
 स्थापित करना भी इस ऐतिहासिक सन्दर्भ में मुझे  
 गर्व ही दिवाई देता है।

अंग्रेजी सामन्य कान में भारत को कृष्ण मित्र  
 का न मित्र हो, परन्तु इनका अन्तर्गत मित्र कि  
 न्नेड की धोखागिक क्रांति ने भारतवर्षियों का  
 विदेशी साहित्य, विदेशी सामाजिकता तथा विदेशी  
 गति में दीप्त ही परिचित करा दिया और इसी का  
 परिणाम था कि हममें जो एक निराशा भर गई थी  
 वह धीरे-धीरे समाप्त होने लगी। हमें बाहर भी  
 अपने सहयोगी दिवाई देने लगे। इसी का परिणाम  
 स्वरूप, परतंत्रता से मुक्ति का बोध कुछ एक ही को हो,  
 मान होकर ग्राम-ग्राम में स्वतंत्रता की चित्तकारी  
 टिक्नी। परम्परा एक सामाजिक दावे में  
 सामूहिक परिवर्तन की मांग करने लगी। एकतन्त्रात्मक  
 या पूर्णकारी समाज व्यवस्था के दुर्गुण दिवाई  
 देने लगे। जनताविष सामाजिक चेतना का स्वर  
 स्फुटित हुआ। साहित्य ने भी बरबट बढ़ी।  
 साहित्य के ऐतिहासिक विकास में इस परम्परा में  
 अन्तर्गत के स्वतंत्र पर जन स्वातंत्र्य की मांग  
 राष्ट्रीय स्वर गूँजा। राष्ट्रवाद की धोखा के

विरोध में जनसामान्य की श्रेष्ठता का स्वर प्रकट हुआ  
 बंगाल का ब्रह्म समाज, यद्यपि दयानन्द का धर्म  
 समाज, विवेकानन्द का मा भारत के प्रति राष्ट्रीयता  
 का प्रवर्तन तथा गांधी का राजनीति में अन्तर्गत  
 सब मिला कर जन क्रांति के सूचक थे। उस समय  
 की जनवाणी हिंदी साहित्य में 'भारत भारती' के  
 बंठों में गूँजी। भारतेंदु युग हमारे सामाजिक,  
 सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक जागरण का  
 युग है। इसीलिए इसे हिंदी के प्राधुनिक कान की  
 संज्ञा मिली। इस प्राधुनिक कान की वाणी केवल  
 पथ में ही नहीं गयी थी उसी स्वतंत्रता में मुगल  
 हुई। इसके बाद का सामाजिक तथा रक्षककारी  
 स्वर निम्नान्वेष्ट निराशा तथा अन्तर का स्वर है।  
 परन्तु उनके पीछे भी बहुत सचन ऐतिहासिक घृष्ट-  
 भूमि है। स्वातंत्र्य संधि का नेतृत्व गांधी जी  
 जैसे महामायादियों के हाथ में था गया और  
 क्रांति का गरजता स्वर उमरे आता प्राथम्य था  
 नहीं सच। अन्तर्गत विषय होकर उगे अन्तर्गत  
 हो जाता वही इसका कोई सामाजिक सूचक न भी  
 हो तो भी ऐतिहासिक सूचक है अन्तर्गत। अन्तर्गत  
 भी नहीं बच गये कि इस कान में राष्ट्रवादी मुगल  
 हुई ही नहीं, अन्तर्गत का ऐतिहासिक नाटक के बाहर  
 अन्तर्गत तथा गीत अन्तर्गत पर मधुमय देश हमारा,  
 'हिमाद्रि तु ग गगन पर' आदि आदि इसका उदा-  
 हरण है।

इसी समय भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को (विदेश  
 का अन्तर्गत को) इस विचारधारा ने अन्तर्गत  
 अन्तर्गत दिना वह ही मार्गकारी विचारधारा।  
 हम में अन्तर्गत का अन्तर्गत हुई अन्तर्गत अन्तर्गत  
 तथा अन्तर्गत का अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत  
 ही अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत ही था।  
 इसका अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत के अन्तर्गत  
 पर अन्तर्गत का अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत



किसी भी राष्ट्र की प्रगति, उत्थान व विकास उसकी भावी संतानों पर निर्भर है।  
 राष्ट्र बलशाली हो-बौद्धिक व शारीरिक रूप से-इसके लिए 'युवकों'  
 का सर्वाङ्गीण विकास-उत्थान जरूरी है।

इसी उद्देश्य को दृष्टिगत कर हमारे राजस्थान में जहाँ विकास की अनेक महान्  
 योजनाएँ प्रारम्भ हुई हैं, स्कूल व कालेज खोले जा रहे हैं वही—  
 युवकों के शारीरिक विकास व उत्थान के लिए भी प्रयत्न किये जा रहे हैं—

## राजस्थान क्रीड़ा परिषद् RAJASTHAN SPORTS COUNCIL

शारीरिक उत्थान की दिशा में सतत् प्रयत्नशील है

अध्यक्ष:—पूनमचन्द विश्नोई (उप शिक्षामंत्री)

उपाध्यक्ष:—वी० एन० काक

~~~~~ न न्द नि के त न ~~~~~

मालवीय मार्ग, सी स्कीम,  
 जयपुर।

राय बहादुर राम प्रसाद राजगढ़िया

राजस्थान मिनेरल एण्ड को०, हिन्दू माइन्स लि०

राजपूताना कारपोरेशन लि०

माइका माइनर्स वा एक्सपोर्टर्स

प्राप्त .

ईड प्रॉक्सिम :

जयपुर C २३ पृथ्वीराज रोड

फोन नं० ४६८२

१३ इरिड्रिग्टन स्ट्रीट, कलकत्ता

फोन नं० ४४-२११४

तार का पता :

तार का पता :

RAJTRADING, RAJGARHIA

RAJGARHIA, NEWTOWN

भीलवाड़ा

तार का पता.—RAJGARHIA

फोन नं० ७४

गिरडी (बिहार)

तार का पता.—RAJGARHIA

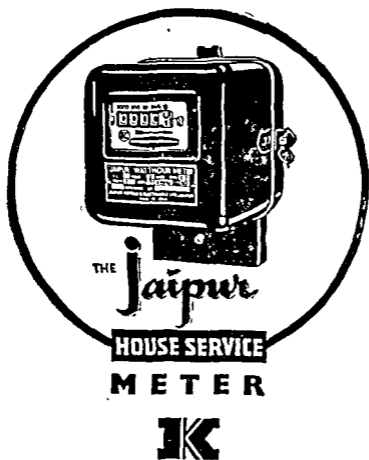
फोन नं० २७/१४२

कोडरमा (बिहार)

तार का पता.—RAJGARHIA

फोन नं० १३





the "Jaipur" house service meter  
 is completely dust-proof,  
 light and durable. We also  
 manufacture copper conductors,  
 rods and strips, cadmium copper  
 conductors & rods, arsenical  
 copper rods, brass rods and wires.

manufactured by:

**THE JAIPUR METALS & ELECTRICALS LTD.**

**JAIPUR - RAJASTHAN (INDIA)**

दी जयपुर मिनरल डवलपमेंट सिण्डीकेट  
(प्राइवेट) लिमिटेड



सिग सिगना—

‘त्रिकोणा’ मार्का सांघ पाउडर

३

निर्माता एवं उत्पादक

मोतीमिह भोगिया एन रास्ता

जोधपुर, राजस्थान

सृजन-वैला

तार-MAHALAXMI

फोन-मिल्स-३२  
सिटी ऑफिस-४२, ४२ A

सुन्दर और टिकाऊ धोती, लट्ठा, खादी, परमटा,  
हल आदि के लिये प्रतिष्ठित  
कपड़ा मिल ।

दी महालक्ष्मी मिल्स, कम्पनी लिमिटेड  
व्यावर (राजस्थान)  
मेनेजिंग डाइरेक्टर  
श्री पन्नालाल कोठारी

*For Quality G. I. Barbed*

Wire, Tin Containers & Agricultural Implements

KINDLY CONTACT.

**METAL UDYOG (P) Ltd.,**

Office  
GULAB NIWAS  
M I Road, Jaipur  
Phone, 5489

Factory  
8 & 11 B INDUSTRIAL ESTATE,  
Jaipur Sc's JAIPUR.



**murphy radio**

*Delights the home*

Gen. CHYA

**AUTHORISED DEALERS**

Phone No. 2501

**1. M/s. Ramkumar Suraj Baksh**  
Tripoliya Bazar,  
**JAIPUR**

**2. M/s. Ghiya's**  
M. I. Road, JAIPUR  
Phone 3543

सुरत-वेता

कला-विज्ञान २४ अक्टूबर १९३९

गजस्थान की नवमं शानीन शीर प्रतिष्ठित कपड़ा मिला

**दी कृष्णा सिल्स लिमिटेड**

दया नर

मन ७० वर्षों में गजस्थान के औद्योगिक विभाग में मंगल

गजस्थान २३ अक्टूबर

मिस्ट टारुलदास श्रीकमल माःपेट्ट लि०, दया नर

# राजस्थान में सहकारिता का व्यापक प्रसार सभी के लिए अवसर

ॐ शान्ति शान्ति शान्ति ।

ॐ देवा देवता के ठठठठों में प्रवना बबबर बोजिदे ।

मान माने हति, देवीय देवा देवा धार्मिक हित के बानों की सहकारी आधार पर बबबर मान देवा हति में देवा सहकार-साधनों के साथ समान रूप में भागीदार बनने ।

विगत बीस साल की सेवा सहकारी समिति के सदस्य बनकर अपनी उन्नति कर सकते हैं । यह समिति उनके निचे से कार्य करेगी :—

- ॐ सब के सभी रहने वाले किसान, बारीगर, मजदूर, साहूकार व हरिजन काम सेवा सहकारी समिति के सदस्य बन सकते हैं ।
- ॐ गाँवों के साथ और दूसरे सारे बन्धों को सब प्रकार के उपायों से बड़ाया देगी ।
- ॐ सेवा करने और पैदावार बढ़ाने के लिए कार्य की उचित व्यवस्था करेगी ।
- ॐ इसके बनावे सेवा में जो पैदावार हांगी उसका पूरा-पूरा मोब किसान को दिवाने का पल करेगी ।
- ॐ सेवा की जरूरत बाँझें, जैसे मुधरे बाँझ, सार और उर्वरक, अच्छे सेती के घोडार और मयोंन, दिवाने का प्रबन्ध करेगी ।
- ॐ यही क्यों, अगर गाँवों में सहकारी भावना बड़ी और लोग-बागों ने सहकारी काम करो के तरीके सीख कर बारोबार करने में सफलता दिखाई तो सब जगह के कामों को भी सहकारी तरीके में किया जाने लगेगा ।
- ॐ यह समय भी हम काम सेवा सहकारी समिति के काम-धाम के बढ़ते २ या सड़ता है जब यह गांव के बनावों, घपाहिजा, निराश्रितों, रोगियों, विधवाओं, बुढ़ों, बानिबानों, पब-छष्ट लोगो आदि सब की सार-सम्मान का भी पूरा काम अपने हाथ में लेते ।
- ॐ रोजमर्रा की जरूरत की बाँझें जैसे :— तेल, साबुन, दिवासवाई आदि चीजों की अपने कामों में हासिल किया जा सकेगा ।
- ॐ यह प्रायोगिक समुदाय की धार्मिक उन्नति के सारे बायों में मददगार होगी ।

सबकी भलाई — आपकी भलाई  
राजस्थान सरकार द्वारा प्रसारित

*With best compliments from :—*

**Man Industrial Corporation Limited,**

**JAIPUR.**



- The first and only Re-Rollers in India for Special Profile Sections for Steel Doors, Windows and Sashes;
- Also Fabricators of Steel Doors, Windows and Sashes;
- Also Rollers of M. S. Bars, Rods and Light Tees; .
- Galvanizing and Forging Work our speciality:



राजस्थान हस्तकला का केन्द्र है

स्थानी कला के नमूने खरीद कर अपने घरों को  
सुशोभित कीजिए

तथा

गृह उद्योगों को प्रोत्साहन दीजिए

- |                               |                                      |
|-------------------------------|--------------------------------------|
| ❁ पी दांत के खिलौने           | ❁ नीले व सफेद पाटरी के सामान         |
| ❁ लास व नगीनों के कंगन        | ❁ आकर्षक नमूने की दरियां             |
| ❁ बंधाई व छपाई के स्कार्फ     | ❁ सांगानेरी रंगाई व छपाई के          |
| ❁ जोधपुर की वनी शीतल जल       | ❁ वस्त्र इत्यादि                     |
| ❁ की भारियां                  | ❁ उदयपुर के सुन्दर लकड़ी के खिलौने   |
| ❁ चन्दन की लकड़ी के खिलौने    | ❁ जयपुर की कशीदा की हुई              |
| ❁ रंगीन एवं बंधेज की साड़ियां | ❁ जूतियां व जूते                     |
| ❁ पक्के रंग की चादरें         | ❁ जयपुर की प्रसिद्धि प्राप्त चड़ियां |
| ❁ लकड़ी एवं खस की वनी वस्तुएं | ❁ व चूड़े                            |
| ❁ कलापूर्ण सामान              | ❁ कोटा के सुन्दर डोरियें             |

प्रत्येक सरकारी विक्रय-केन्द्र पर प्राप्त

राजस्थानी हस्तकला के नमूने अन्तर्राष्ट्रीय  
प्रदर्शनियों में भी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं

हैं।

एम्पोरीयम  
दिल्ली।

}

राजस्थान हैंडीक्राफ्ट्स एम्पोरीयम  
जयपुर, जोधपुर व उदयपुर

राज्य द्वारा प्रसारित